।। आत्म-वल्लभ-समुद्र-इन्द्र-सद्‌गुरुभ्यो नम ।।

वार्षिक

छब्बीसवां पुष्प

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

संघ की स्थायी प्रवृत्तियां

□ श्री सुमतिनाथ जिन मन्दिर सम्वत् 1784 मे प्रतिस्थापित 257 वर्षीय सर्वाधिक प्राचीन मन्दिर जिसमे आठ सौ वर्ष पुरानी विभिन्न प्राचीन प्रतिमाओं सहित 31 पाषाण प्रतिमायें, पच परमेष्ठी के चरण व नवपदजी का पाषाण पट्ट अधिष्ठायक देव परम प्रभावक श्री मणिभद्रजी, श्री गौतम स्वामी आचार्य विजयहीरसूरीश्वरजी आ श्री विजयानन्द सूरीश्वरजी म० की पाषाण प्रतिमायें शासन देवी (महाकाली देवी) एव अम्बिकादेवी की अति प्राचीन एव भव्य प्रतिमाओं सहित स्वर्ण मण्डित सम्मेद शिखर शत्रुंजय, नन्दीश्वर द्वीप, गिरनार अष्टापद महातीर्थ एव बीशस्थानक के विशाल एव अद्भुत दर्शनीय पट्ट।

□ भगवान श्री ऋषभदेव स्वामी का मन्दिर, वरखेडा तीर्थ जयपुर–टोंक रोड पर जयपुर से 30 कि दूर एव शिवदासपुरा से 2 कि पर बाई ओर स्थित वरखेडा ग्राम में यह प्राचीन मन्दिर स्थित है। इसका इतिहास लगभग तीन सौ वर्ष पुराना बताया जाता है। प्रतिवर्ष श्रीसघ के तत्वावधान मे फाल्गुन माह मे आयोजित वार्षिकोत्सव मे प्रात कालीन सेवा पूजा दिन मे प्रभु पूजन एव सायकाल को साधर्मी वात्सल्य का आयोजन श्रीसघ की ओर से सम्पन्न होता है। जिनेश्वर भगवान की प्रतिमा अत्यन्त भव्य और दर्शनीय है। तीर्थ स्थान सुरम्य सरोवर के किनारे स्थित होने से रमणिक तो है ही आगन्तुकों के लिए शांत वातावरण एव आल्हादपूर्ण स्थिति का सृजन करता है।

□ भगवान श्री शान्तिनाथ स्वामी का मन्दिर चन्दलाई यह मन्दिर भी शिवदासपुरा से 2 कि० दाहिनी ओर चन्दलाई कस्बे में स्थित है। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा सम्वत् 1707 म होना ज्ञातव्य है। लगभग साठ हजार की लागत से मन्दिर जी का जीर्णोद्धार व मूल गम्भारे का नव निर्माण करवाकर मिगसर वदी 5 स० 2039 को आ श्रीमद्विजय मनोहरसूरीश्वरजी म सा की निश्रा म पुन प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई है।

□ भगवान श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी का मन्दिर, जनता कॉलोनी, जयपुर इस मंदिर की स्थापना डा भागचन्द छाजेड द्वारा सन् 1957 मे की गई और सन् 1975 मे यह मन्दिर श्रीसघ को सुपुर्द किया गया। अगस्त माह के प्रथम सप्ताह मे इसका वार्षिकोत्सव सम्पन्न होता है। यहा पर श्री सीमन्धर स्वामी के शिखरबन्द भव्य मन्दिर का निर्माण कार्य 1982 मे प्रारम्भ किया गया था और कार्य द्रुतगति से जारी है, दान-दाताओं का आर्थिक सहयोग प्रार्थनीय है।

□ श्री जैन कला चित्र दीर्घा: भारतवर्ष के प्रमुख तीर्थ स्थानों में प्रतिष्ठित जिनेश्वर भगवानों एवं जिनालयों के भव्य एवं अलौकिक चित्र, जैन संस्कृति के श्रोत विभिन्न संकलनों का अपूर्व संकलन ।

□ भगवान महावीर का जीवन परिचय भित्ति चित्रों में : स्वर्ण सहित विभिन्न रंगों में कलाकार की अनूठी कला का भव्य प्रदर्शन । अल्प पठन एवं दर्शन मात्र से भगवान के जीवन में घटित घटनाओ की पूर्ण जानकारी सहित अत्यन्त कलात्मक भित्ति चित्रों के दर्शन का अलभ्य अवसर ।

□ श्री आत्मानन्द सभा भवन : विशाल उपाश्रय एवं आराधना स्थल जिसमें शासन प्रभावक विभिन्न आचार्य भगवन्तो, मुनिवृन्दो एवं समाज सेवकों के चित्रों का अद्वितीय संग्रह एवं आराधना का शांत एव मनोरम स्थल ।

निर्माणाधीन

विहरमान भगवान श्री सीमन्धर स्वामी का जिनालय

जनता कॉलोनी जयपुर,

के निर्माण कार्य मे आर्थिक योगदान हेतु विनम्र निवेदन

डॉ० भागचन्दजी छाजेड द्वारा पाच भाइयो की कोठी, जनता कॉलोनी, जयपुर में स्थित अपने प्लाट मे श्री सुपाश्वनाथ स्वामी जिनालय की स्थापना की गई थी और सन् 1975 मे यह जिनालय श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर को समर्पित किया गया था। इस वर्ष का इस जिनालय का 27वा वार्षिकोत्सव सम्पन्न हुआ।

यहा पर श्री सीमन्धर स्वामी का शिखरयुक्त भव्य मन्दिर बनाने का कार्य श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर के तत्वावधान मे प्रारम्भ किया गया है।

जिनालय के प्रथम चरण की योजना लगभग तीन लाख रुपयो की बनाई गई थी। मन्दिर निर्माण कार्य द्रुतगति से चल रहा है और मूल गम्भारे का निर्माण कार्य लगभग पूर्ण हो गया है एव रगमडप और शिखर का कार्य जारी है अब तक तीन लाख रुपये लग चुके हैं। सम्पूर्ण मन्दिर निर्माण के लिए बहुत बडी धनराशि की आवश्यकता है। इसमे प्रत्येक जैन बन्धुओ का सक्रिय सहयोग एव आर्थिक अनुदान सादर प्रार्थनीय है। एक मुश्त अधिकतम एव न्यूनतम आर्थिक योगदान तो सहर्ष एव साभार स्वीकार होगें ही साथ ही दानदाताओं की सुविधा के लिए तथा प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामर्थ्य एव सुविधानुसार ऐसे महान् कार्य मे भागीदार बन सके, इस हेतु योगदान की निम्नांकित योजनाओ के सदस्य बन अक्षय पुण्योपार्जन का लाभ लें।

1 पैसे (प्रतिशत) की भागीदारी न्यूनतम एक पैसे की भागीदारी के तहत प्रथम चरण के निर्माण में जो योगदान करना चाहें उन्हें 3001) रु० का भुगतान करना है। सर्वप्रथम 601) एक मुश्त तथा प्रतिमाह 100) की दर से 24 माह मे शेष राशि का भुगतान करना है। समस्त राशि एक साथ भी दी जा सकती है।

1) रु0 प्रतिदिन का योगदान इस योजना मे सम्मिलित होने वालों को कुल 1111) रु० देना है। इसके तहत प्रतिमाह 30) रु० के हिसाब से तीन वर्षों में अपना दायित्व पूर्ण करना है। फिर भी प्रार्थना है कि शीघ्रातिशीघ्र अपने दायित्व को पूर्ण करने का प्रयास करें।

1111) रु० एव इससे अधिक राशि देने वालो के नाम शिलालेख पर अंकित किए जावेंगे।

समस्त राशि श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर के खातो मे जमा होगी। अत चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट से भेजे जाने वाली राशि।

"श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ मन्दिर, जयपुर" के नाम से भेजी जावें।

सभी के हार्दिक एव उदारमना सहयोग की कामना सहित,

विनीत

हीराचन्द चौधरी	शान्तिकुमार सिंघी	मोतीलाल भडकतिया
अध्यक्ष	सयोजक	सघ मन्त्री

मन्दिर व्यवस्था उप समिति

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर

२३वें तीर्थंकर

भगवान श्री पार्श्वनाथ स्वामी
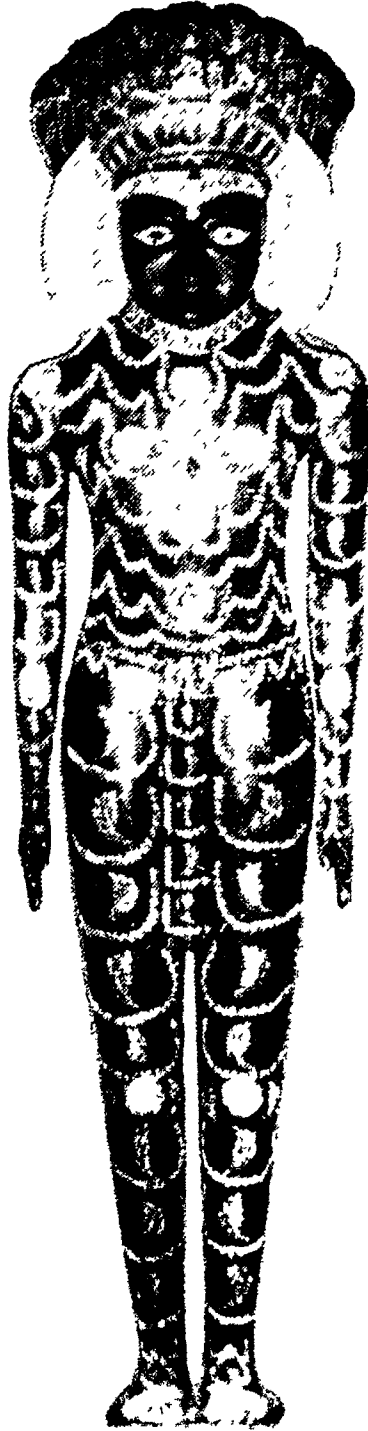
उन्हेल (जि० झालावाड़, राजस्थान) में स्थित नागेश्वर पार्श्वनाथ तीर्थ में प्रतिष्ठित (किवदन्ती अनुसार २८२० वर्ष पूर्व निर्मित) भगवान पार्श्वनाथ स्वामी के मूल शरीर परिमाण (९ हाथ=१३॥ फुट) की कायोत्सर्ग मुद्रा में ग्रेनाईट सेन्डी स्टोन की हरे रंग की अद्भुत अति प्राचीन प्रतिमाजी।

अनुक्रमणिका

१	श्री जैन श्वे० तपागच्छ सघ, जयपुर सघ की स्थायी प्रवृत्तिया	—सघ मत्री	२
२	श्री सीमन्धर स्वामी जिनालय हेतु आर्थिक योगदान का निवेदन		४
३	नागेश्वर पार्श्वनाथ स्वामी का चित्र		
४	गीत	—डा० शोभनाथ पाठक	५
५	प्रकाशकीय	—सम्पादक मण्डल	८
६	मुनिराज श्री नयरत्न विजयजी म सा (चित्र)		
७	महान विभूति प्रेमसुरीश्वरजी म	—मुनि नयरत्नविजयजी	६
८	इसान तट और नाव (कविता)	—प्रो० सजीव प्रचडिया	१२
६	धर्म, क्रिया एव अनुष्ठान	—मुनि श्री जयरत्नविजयजी	१३
१०	हम इन्सान हैं (कविता)	—श्री सुरेश कुमार मेहता	१६
११	अष्टोत्तर शतजिनपट्ट के अश	—श्र शैलेन्द्र कुमार रस्तोगी	१७
१२	The Inner Enemies	—मुनि रत्नसेनविजयजी	१६
१३	प्रमाद मत करो	—मुनि अमरेन्द्रविजयजी	२६
१४	पुण्य सन्देश	—श्रीमती शान्ती देवी लोढा	२७
१५	श्री भद्र कर सौरभ	—श्री हीराचन्द वैद	२८
१६	जोग सजोग का अनोखा बन्धन	—बाबू माणकचन्द कोचर	३०
१७	खण्डहरो की कहानी-वैभव की जुबानी	—श्री हीराचन्द वैद	३४
१८	जिए तो जानकर जिए	—प्रो० सजीव प्रचडिया	४१
१६	मार्गानुसारिका	—आ० श्री इन्द्रदिन्नसूरी जी	४२
२०	सम्यक क्रिया तथा उसका फल	—मुनि इन्द्रसेनविजयजी	४४
२१	धर्म साधना का बधन आवश्यक है	—आचार्य श्री पदमसागरजी	४५
२२	मणिभद्र के लेखको से विनम्र निवेदन	—सम्पादक मण्डल	४७
२३	चितन की चिनगारी	—मुनि श्री रत्नसेन विजयजी	४८
२४	पर्वाधिराज पर्युषण का अमर सदेश	—मुनि श्री जयरत्नविजयजी	५१
२५	धर्म के तीन सूत्र	—कु० अजना सिंघी	५४
२६	सबन्ध अपनी अपनी	—श्री शातिकुमार सिंघी	५५

२७.	मैं कौन हूं-अमर आत्मा	—श्री राजमल सिंघी	५९
२८.	कलिंग जिन	—मुनि श्री भुवनसुन्दरविजयजी	५८
२९.	श्री जोधराजजी दीवान	—श्र कपूरचन्द जैन	६५
३०	अमृत विन्दु	—श्री हरीश मन्सुखलाल मेहता	६७
३१.	श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल-प्रगति के चरण	—श्री अशोक जैन	६९
३२.	अनमोल वचन	—श्री भगवानजी भाई वीरपाल शाह	७२
३३.	धर्म का प्राण मैत्री भाव	—मुनि श्री कीर्तिचन्द विजयजी म.	७३
३४.	चिंतन मनन के क्षणों में	—श्री धनरूपमल नागौरी	७५
३५.	हम सुखी कैसे बनें	—श्री मनोहरमल लूणावत	७७
३६.	नेत्र दान परमदान है	—कु० छाया बी शाह	७९
३७.	उर्ध्वगमन व अधोगमन का हेतु	—मुनि श्री धर्म धुरन्धर विजयजी म.	८०
३८.	क्या जैन धर्म विश्व धर्म है	—श्री शिखरचन्द पालावत	८१
३९	पीड़ित मानव के उद्धारक	—श्री नरेन्द्र कुमार कोचर	८३
४०.	करुणा बिन सब सून	—डा. राजेन्द्र कुमार बंसल	८५
४१.	श्री अवन्ती पार्श्वनाथ का स्तवन	—मुनि श्री नयरत्नविजयजी म.	८८
४२.	एक विचार	—श्री हरिश चन्द्र मेहता	८९
४३.	आ. श्री मनोहर सूरीश्वरजी म. सा. को श्रद्धांजलि	—श्री जैन श्वे. तपागच्छ संघ, जयपुर	९०
४४.	मंगलमंत्र णमोकार	—सुश्री मंजुला जैन	९१
४५.	संघ का वार्षिक विवरण	—श्री मोतीलाल भड़कतिया संघ मंत्री	९३
४६.	आडिट रिपोर्ट	— आर के. चतर. CA	१०३
४७.	आय-व्यय विवरण 83-84	— ,, ,, ,, ,,	१०४
४८.	चिट्ठा 1983-84	— ,, ,, ,, ,,	१०६
४९.	महासमिति के सदस्य	—	१०८
५०.	महासमिति द्वारा मनोनीत उपसमितियां	—	१०९
५१.	अम्बिलशाला की स्थायी मितियां	—	११०
५२.	अम्बिलशाला शेड निर्माण में सहयोगकर्त्ता	—	११०
५३.	विज्ञापन	—	

प्रकाशकीय

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर की वार्षिक स्मारिका 'मणिभद्र' के रजत जयन्ती अक के पश्चात् अब यह २६वा अक आपकी सेवा मे प्रेषित करते हुए हार्दिक प्रसन्नता है। २५वें अक के सुगठ एव सुदर प्रकाशन के लिए प्राप्त प्रशसा पत्रो से सम्पादक मण्डल को आत्म सतोष होना स्वाभाविक है।

इस २६वें अक को भी इसके अनुरूप ही नहीं और भी मनोरम, सुदर, पठनीय और सग्रहणीय बनाने का प्रयास किया गया है। पिछले कुछ वर्षों से इस सघाधीन जिनालयो मे विराजित जिनेश्वर भगवान की भव्य प्रतिमाओ के चित्र प्रकाशित किए जाते रहे हैं। अब इस अक में राजस्थान में स्थित प्रसिद्ध तीर्थों के मूलनायक भगवान के चित्र प्रकाशित करने का क्रम प्रारम्भ किया जा रहा है। उन्हैल, जिला झालावाड, राजस्थान मे स्थित श्री नागेश्वर पार्श्वनाथ स्वामी का चित्र इसमे प्रकाशित किया गया है जो निश्चय ही दर्शनीय एव सग्रहणीय होगा, ऐसा विश्वास है।

आचार्य भगवतों, मुनिराजो एव विद्वान लेखको एव नवोदित सृजनकारो ने अपनी लेखनी से इस अक को सजोया है। चूकि लेखको के लिए विषय का बन्धन नहीं है, अत उन्होंने स्व-विवेकानुसार अपनी रचनाओ का सृजन किया है। इसमे जहाँ प्राग ऐतिहासिक लेख है वहा आज समाज मे व्याप्त तथाकथित विषमताओ, सामाजिक एव धार्मिक एकता, आत्म कल्याण के साधन, कविता, गीत आदि सभी प्रकार की सामग्री सम्मिलित है। लेखकों की कृतियो को मूल रूप मे सम्मिलित किया गया है, अब सत्यासत्य का निर्णय स्वय पाठको को करना है। सम्पादक मण्डल तो लेखको के विचारो को पाठको तक पहुचाने का माध्यम मात्र है। अत्यन्त सावधानी रखने के उपरान्त भी यदि किसी रचना मे ऐसा उल्लेख हो गया हो जो उनकी मान्यताओ एव मानस पर आघात पहुचाने वाला हो तो सम्पादक मण्डल अग्रिम रूप से क्षमा प्रार्थी है।

अक प्रकाशन मे लेखको, विज्ञापनदाताओ एव सामग्री सग्रह मे सहयोगकर्ताओ के प्रति सम्पादक मण्डल की ओर से हार्दिक धन्यवाद एव आभार सहित,

सम्पादक मण्डल

हसामपुरा तीर्थोद्धारक, प्रखर व्याख्याता
मुनिराज श्री नयरत्नविजयजी महाराज साहब
एवं
मुनिराज श्री जयरत्नविजयजी महाराज साहब
की सेवा में
"मणिभद्र" का यह २६वां अंक सादर समर्पित है।

महान विभूति श्रीमद्विजय प्रेमसुरीश्वर जी महाराज साहब

लेखक
प्रखर व्याख्याता पू० मुनिराज श्री नयरत्न विजय जी म०
आत्मानन्द सभा भवन, जयपुर

जब तुम आए जग मे जग हंसा तुम रोए।
अब करणी ऐसी कीजिए तुम हंसो जग रोए ॥

परमज्ञानी शास्त्रकार भगवन्तों ने तीन प्रकार की मृत्यु का वर्णन किया है :

(1) बाल मरण (2) अकाल मरण (3) पंडित-मरण।

जीवन मे मानव जिस प्रकार की प्रवृत्ति करता है उसी प्रकार के मरण को वह प्राप्त होता है। सही अर्थों में जीवन जीना भी एक कला है। सुख मे आनन्दित एवं दुख मे दीन हीन न बनें। सुख दुख मे सम-दृष्टि वाला आत्मा ही दूसरो के लिए आलम्बनभूत बन सकता है। अन्धकार में भटकते हुए मानवो को प्रकाश स्तम्भ की तरह राह बताने वाले होते है। ऐसे उच्च जीवन के पथिक, संयमी जीवन के धनी, जैन शासन के प्रति समर्पित सिद्धान्त महोदधि आचार्य श्री प्रेमसूरीश्वर जी महाराज साहब का जीवन हमारे लिए एक देदीप्यमान ज्योति की तरह ज्वलन्त उदाहरण है।

नारी रत्न श्रीमती कंकुबाई की कुक्षी से आपका जन्म हुआ और भगवान जी भाई आपके पिता थे। बाल्यावस्था में ही आपके जीवन में परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा था परन्तु किसी को यह कल्पना तक नहीं थी कि यह भोलाभाला सा दिखने वाला बालक एक दिन शासन दीप बनेगा। हजारों भव्य जीवों के हृदय सरोवर में धर्म के बीज अंकुरित कर जिन शासन को सुशोभित करेगा।

बालहृदय श्री प्रेमचन्द को आचार्य भगवंतों एवं मुनिवृन्दों की वैराग्य से ओतप्रोत वाणी का पियुष पान कर संसार की असारता महसूस होने लगी। सांसारिक जीवन कारागारमय लगने लगा। जैसे "पिंजरे का पंछी" मुक्त होने के लिए फड़फड़ाता है, उसी प्रकार की व्यथा से श्री प्रेमचन्द भी व्यथित थे। वे संयम पथ के पथिक बनना चाहते थे और सोचते थे कि कब अवसर मिले और मैं संयम ग्रहण करुं। जहां चाह वहां राह। मानव हृदय में छिपी हुई अनन्त शक्ति कोई भी असाध्य कार्य क्षण भर में साध्य कर सकती है। आपने भी सुअवसर देख कर व्यारा (सूरत) में बिना किसी को बताए पालीताणा के लिए प्रस्थान किया। यहां पर आप विजय दान-सूरीश्वरजी महाराज साहब की निश्रा में संयम ग्रहण कर प्रेमचन्द से मुनि प्रेमविजय जी बने। पूज्य गुरु की निश्रा में रह कर आप शास्त्रों एवं आगमनों का अध्ययन कर प्रकाण्ड विद्वान बने। संयम के प्रति कठोरता, तप के प्रति अनुराग, वडीलों के प्रति बहुमान, वैयावच्च आदि गुणों को आपने आत्मसात किया। ग्रामानुग्राम विहार करते हुए जिन शासन की दुन्दुभी बजाते रहे।

आचार्य विजयदानसूरी महाराज ने अपनी वृद्धावस्था एवं अस्वस्थता को ध्यान में रखते हुए शासन का भार सम्भालने की भावनावश आपको राधनपुर पहुंचने का समाचार भिजवाया। गुरु आज्ञानुसार आप तत्काल राधनपुर पहुंचे। आचार्य श्री ने श्री प्रेमविजय जी को कहा कि मैं जानता हूं कि तुम इसमें आनाकानी करोगे, फिर भी मेरी भावना है कि समुदाय का दायित्व अब तुम्हें सौंप दूं। यह सुनते ही अश्रुपुरित नेत्रों से आप कहने लगे कि साहेबजी, यह भार तो मैं वहन करने में अक्षम और असमर्थ हूं। आखिरकार गुरुदेव के अत्यन्त आग्रह और भावना को ध्यान में रखते हुए आपने सहमति प्रदान की। पद के प्रति वे कितने निर्लिप्त थे।

आपके जीवन के अनेकों प्रेरणास्पद प्रसंग आज भी स्मृतिपटल पर अंकित हैं। संवत् 2020 में पूज्य आचार्य श्री के साथ उस्मानपुरा (अहमदाबाद) की प्रतिष्ठा में साथ था। वहां पर सुतरिया परिवार (खुशाल भवन) के कुछ भाइयों ने साहबजी से कहा कि पालीताणा स्थित पू० दर्शनसागर जी महाराज का फैक्चर हो जाने से उनको वाडीलाल साराभाई हास्पिटल में भर्ती कराया गया है। उनकी सेवा में कोई साधु नहीं है—सो आप किसी को भेजो। यह सुनते ही आचार्य श्री ने तत्काल मुझे एवं मुनि सत्यविजय जी को उनकी सेवा में भेजा। साहबजी के हृदय में यह बसा हुआ था कि "जो गिलाण पडियज्जइ सो मा "

अपने 67 वर्षों के संयमी जीवन में आपने कभी फल, मिठाई मेवा का सेवन नहीं किया। भक्तों की अपार भक्ति थी, फिर भी मन को कितना वश में कर रखा था। रसना पर विजय का अनूठा उदाहरण। दीक्षा लेने के बाद लगभग 60 वर्षों तक आपने एकासना ही किया।

पूज्य श्री के साथ चातुर्मास मध्ये कम से कम 60–70 साधु तो रहते ही थे। सभी प्रेमपूर्ण, सौहार्दपूर्ण एवं अनुशासित वातावरण में। मेरी दीक्षा भी पूज्य श्री के कर कमलों से

अचलगढ़ में सम्पन्न हुई थी। तब से चार वर्ष तक उनके साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैंने कभी पूज्यश्री के चेहरे पर परिवर्तन नहीं देखा। गम्भीर बीमारी का उपद्रव होने पर शान्त भाव से परिषह सहन करते। कभी किसी पर क्रोध या गुस्सा नही किया। एक बार अहमदाबाद में दशापोरवाड सोसायटी की बात है। एक मुनि ने आवेश मे साहेबजी को निम्न स्तर की भाषा का प्रयोग किया परन्तु आप एक शब्द भी नही बोले। शाम को जब मैं वन्दन करने गया तब पूज्यश्री से पूछा कि आप श्री को इस मुनि ने मांडली में ऐसा कहा फिर भी आप कुछ नही बोले। तब साहेबजी ने कहा—देख, उस समय वह आवेश में था। मैं कुछ बोलता तो वह और ज्यादा आवेश में आता और कर्म बन्धन करता। यह सुनते ही मेरा हृदय पूज्यश्री के चरणों में नम गया। अहो, कितनी सहनशीलता, कितनी पाप भीरूता। मुनियों को समझाने की भी ऐसी सुन्दर शैली थी कि गलती करने वाले मुनियों को थोड़ा समय का अन्तराल देकर उसको अपने पास बिठाकर वात्सल्य भाव से ऐसी हित शिक्षा देते कि वह दूसरी बार गलती करने का नाम भी नहीं लेता। सजगता से क्रिया में मस्त बना देते। बाल दीक्षा को प्रतिबन्धित करने वाले विधेयक को निरस्त कराने में आपने अपूर्व भूमिका निभाई।

ऐसे गुणों के सागर आचार्य भगवन्त की पावन निश्रा में जैन शासन के महान प्रभावक सन्त एवं अत्यन्त सुदृढ श्रमण संघ तैयार हुआ। शासन प्रभावक विजय रामचन्द्रसुरीश्वरजी महाराज वर्तमान तपाराधक आचार्य विजय भुवनभानूसूरीश्वर जी महाराज आदि उदाहरण स्वरूप उल्लेखनीय है।

विजय प्रेमसूरीश्वर जी महाराज का जीवन शासन के प्रति प्रेम की सरिता से लबालब भरा था। यथा नाम तथा गुणी थे। शासन के प्रति समर्पित वफादार सेवक थे। उनके मन में स्व-पर समुदाय का विचार कभी नही था। ऐसे महान सूरीश्वर के चरणों में हमारी कोटि-कोटि वन्दना। हमारे संयमी जीवन मे, भी आपके दिव्य–अनुपम गुणो का अंश मात्र भी हृदयंगम हो, ऐसी भावना के साथ।

विषमगता अपि न बुधाः परिभव मिश्रां श्रियं हि वाञ्छंति,
न पिबन्ति भौमभम्भः सरज समिति चातका एते।

अर्थ—दुःस्थिति से आक्रान्त होने पर भी मनस्वी व्यक्ति अनादर युक्त लक्ष्मी को कतई नहीं चाहते। प्यासे रहने पर भी चातक धरती का पानी नही पीते, क्योंकि उनकी धारणा यह रहती है कि ये पानी, मिट्टी से सम्पृक्त होगा।

इन्सान तट और नाव

प्रो श्री सजीव अग्रवाल 'सोमेन्द्र'

नाव तैर रही
नदी की सतह पर
और बूढा इन्सान
उसे खे रहा है।
तट से चलकर तट तक
सुबह से शाम तक
चक्कर लगा रहा है
धोखा खाकर भी
धोखा दे रहा है।
स्वय से स्वय को छिपाकर
दूसरो को तारने का
अभिनय कर रहा है।
सच तो यह है कि तट
स्वय तर जाते हैं
तीर्थ बनकर।
और नाव
प्रभु के पुजारी।
पर इन्सान
खोए हुए उस राही की तरह है
जिसकी मन्जिल का ठिकाना
उसकी डायरी से कही
गुम हो गया है
इसीलिए वह
खो गया है।
भटक गया है।।

मगल कलश, ३९४ सर्वोदय नगर,
आगरा रोड, अलीगढ–२०२००१

"धर्म, क्रिया एवं अनुष्ठान"

पू. मुनिराज श्री जयरत्न विजयजी म.
आत्मानन्द सभा भवन, जयपुर

जिनेषु कुशलं चित्तं, तन्नमस्कार एव च ।
प्रणम्यादि च संशुद्धं, योगबीजमनुत्तमम् ।।१।।

परम ज्ञानी शास्त्रकार महर्षि आचार्य हरिभद्र सूरीश्वर जी महाराज योग दृष्टि समुच्चय ग्रन्थ में फरमाते है कि इस आत्मा ने अनन्त काल में अनेक भवों में, अनेक प्रकार की धम क्रिया की होगी, परन्तु वह क्रिया द्रव्य क्रिया रूप में ही परिणीत हुई । आत्म भाव से एक भी क्रिया की होती तो भव भ्रमण करना नही पड़ता ।

आज हमारी भी यही मनोदशा है । हम धर्माराधन करते हैं, तप, त्याग करते है परन्तु आत्म भाव के अभाव से आडम्बर जैसा हो जाता है । कुछ भाव से धर्माराधन जरूर करते है लेकिन वह क्षणिक ही रहती है । मन को आत्म भाव में केन्द्रित करने के लिए धर्मक्रिया व अनुष्ठान शास्त्र सम्मत विधि-विधान सहित एवं शब्दो का सही उच्चारण किया जावे तो जैसे-जैसे अनुष्ठान की क्रिया चलेगी वैसे-वैसे भद्र जीव आत्म भाव मे लवलीन बनता जावेगा । शब्दों का आरोहण. अवरोहण होता जावेगा, वातावरण मे झुरझुरी पैदा होगी । पवित्रता की महक से पूरा अनुष्ठान स्थल सुरभि गन्ति होकर मानव देह का एक एक रोम कूप इस पवित्र शब्द ध्वनि से सुवासित होगा । जब भौतिक देह पर पवित्रता की लहर हिल्लोर करेगी तो आत्म प्रदेश के कर्ममल धुलने देर नही लगेगी । फिर आत्मा का प्रकाश पुन्ज पूरे शरीर को आलोकित करेगा । मानव गुण स्थानों के एक-एक श्रेणी चढ़ता जावेगा । क्षपक श्रेणी पर पहुंचते ही मोक्ष पद प्रदाता केवल ज्ञान भी प्राप्त हो जावेगा ।

अगर धार्मिक अनुष्ठानों को किया ही नहीं जायेगा तो हमारे धर्म शुष्क हृदय में पवित्रता, सद्भाव, दया आदि पुद्गलों से आत्म प्रदेश भरा-हरा कैसे होगा ? प्रभु के आगे भाव-भक्ति से कोई नृत्य करता है, अगर साज व ताल का समन्वय है तो जैसे-जैसे तबले की थाप पड़ेगी, नृत्यकार के पैर व हाव-भाव उसी द्रुत गति से कार्य करेगा और नृत्य इतनी चरम सीमा तक पहुंच जायेगा कि मानो नृत्यकार एक विद्युत गति चलित मशीन हो । स्वयं तो भक्ति से भाव विभोर होता ही हैं परन्तु देखने वाले भी भक्ति से ओत-प्रोत हो जाते है । उनका एक-एक रोम भक्ति के सागर मे झूम जाता है । हमारे पुद्गल परमात्म भक्ति के प्रति आकर्षित होते हैं । यह है अनुष्ठान में दिव्य शक्ति ।

अगर हम अनुष्ठानों को भुला देते हैं तो इस भौतिक युग में हमारी आत्मा का उद्धार सम्भव नही हैं । आडम्बर के लिए धर्माराधना या प्रतिस्पर्धा करना राख मे घी डालने के समान ही है ।

अनुष्ठानों के माध्यम से जिनेश्वर देव के प्रति समर्पण भाव लाना आवश्यक है । वे ही हमारे आदर्श है । उनका ही कथित मार्ग आचरणीय है हमारे वज्रलेप या हल्के कर्मों का क्षय करने के

लिए जैन शासन ही प्रकाश स्तम्भ का कार्य कर सकता है। जैन दर्शन के अलावा अन्य दर्शन मे इतने सूक्ष्म एव गहराई तक पहुचने की क्षमता नही है। ऐसे जिनेश्वर का हमे अनुपम शासन प्राप्त हुआ है, उन परम कृपालु जिनेश्वर देव के प्रति श्रद्धा-भक्ति होना अनिवार्य है। उनकी आज्ञा शिरोधार्य करना हमारा परम पुनित कर्त्तव्य है तब ही हम सर्वासिद्धि को प्राप्त कर सकते हैं।

यह हमारा परम सौभाग्य है कि जन्मते ही हमे वीतराग प्रभु का शासन प्राप्त हुआ जो अनादि काल से आज तक चला आ रहा है। जो अनेक विलक्षण गुणो से सरोबार है। अगर हम इस गुण सम्पन्न शासन का आचरण नही करते तो हमारा भविष्य अन्धकारमय है। हम किसी भी यात्रा पर जाते है तो पूर्व तैयारी करते हैं जैसे भोजन, वस्त्र आदि। अगर मार्ग अनजान हो तो मार्ग के जानकार को सहयात्री बनाते हैं। लौकिक मार्ग की इतनी चिंता, पर लोकोत्तर मार्ग के लिए हमारी कोई तैयारी नहीं, कोई पुरुषार्थ नहीं। यह कैसी विडम्बना ?

आज हमे महापुरुषो के जीवन को आदर्श मानकर आचरण करने की खास आवश्यकता हैं। हमे आत्म साधना में तल्लीन होकर स्वय के आत्मोत्थान के लिए आराधना करनी है, उसमे दिखावा या समाज मे अच्छा लगे इसके लिए नहीं होनी चाहिए। वतमान मे चाहे तप, अनुष्ठान हो सब मे स्पर्धा होने लगती है और प्रतिस्पर्धा से आगे बढने में ही आत्म तुष्टी है इससे धर्म स्थानो का वातावरण दूषित-कलुषित होता हैं। महापर्वो या अन्य कार्यक्रमो मे तो ऐसा विशेष रूप से होता है, फिर आत्म साधना म लीन रहने का स्थान कहा होगा ? दिखावा या गुटबन्दी के लिए तो ससार मे अनेक स्थान है। धर्मस्थानो की पवित्रता अक्षुण्ण रहनी चाहिये, इसको दूषित न होने दें। धर्म आत्मा का विषय है, प्रमाण-पत्र का नहीं। आत्मोत्थान करने वाला ही यहा श्रेष्ठ, सर्वोत्तम है। भरत चक्रवर्ती सासारिक लोगो के नजर मे रागी एव भोगी थे, परन्तु उनका हृदय इनसे कितना निर्लिप्त था तब ही तो आरीसा भवन मे केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। इसके विपरीत महान तपस्वी प्रसन्नचन्द्र मुनि ध्यान योग मे भी मन से भयकर युद्ध मे रत थे। उन्होने अपने पुत्र के बाबत श्रेणिक राजा के सुभटो द्वारा षडयन्त्र की बात करते हुए जो कान मे भनक पडी उससे ही उन्हें अत्यन्त रोष आया और पुत्र की रक्षा के लिए मन मे ही घोर युद्ध किया। युद्ध के समय सर्व शस्त्र खत्म हो गए तब अन्तिम शस्त्र उनके मुकुट से ही लडकर विजय प्राप्त करने का विचार किया। मुकुट उठाने के लिए सिर पर हाथ रखते है पर यह क्या—मैं तो ध्यान मे हू दुर्ध्यान कैसा ? ऐसा विचार आते ही पश्चाताप की अग्नि से कर्मो को जलाने लगे। नरक मे ले जाने वाले कर्मो को क्षय करते हुए क्षण-क्षण मे गुणस्थानको की श्रेणी बढती गई। क्षण भर में समस्त कर्मो का क्षय करके केवल ज्ञान के दिव्य प्रकाश से विभूषित हुए। यह साधु वेष का आलम्बन ही उन्हें इतने कर्मो का क्षय करने मे सहायक हुआ। जबकि भरत चक्रवर्ती के अगुली से मुद्रिका गिरजाने से वह आगली दूसरी अगुलियों से भिन्न लगने लगी और उसी समय ससार की असारता पर विचार का अवसर आया। आत्मा मे शुद्ध भावो का समावेश होता रहा और कर्मो का क्षय दावानल की तरह हो गया और वे केवलज्ञान के दिव्य प्रकाश से अलौकिक हुए यह सब आलम्बन से ही हुआ। धर्म क्रिया व प्रत्येक अनुष्ठान भी कर्मक्षय के आलम्बन हैं। हमे आत्म साधना के लिए ही आलम्बन चाहिये न कि ससार के कर्म बढाने वाले भौतिक आलबन रेडियो, टेलीविजन, वीडीयो आदि सुविधायें रग-राग, मौज-मस्ती की तरफ प्रवृत्त करते हैं इससे नैतिक पतन होता है। पाप-पोषक वृत्तियो के गुलाम बन जाते हैं। धर्म से,

आत्मा के उत्थान के सद्गुणों में अरूचि पैदा होती है। ऐसी भयावह मनोदशा देखकर हृदय खिन्न हो जाता है। भावी पीढ़ि के विचार मात्र से ही हृदय सिहर उठता है! क्या ये नर पुंगवों का शासन सम्भालने में, उनके पदचिन्हों पर चलने में समर्थ बन सकेंगे? क्या आर्य संस्कृति में अनार्य संस्कृति की विकृति को रोक पायेंगे ऐसे अनेक विचार हृदय में घन की तरह गर्जन करते है, उमड़ते हैं, घुमड़ते है?

विद्या गुणों को चमकाने के लिए है। गुणों की सरिता का प्रवाह विद्यारूपी वाहिनी से हमारे आत्म प्रदेश में प्रवाहित होना चाहिये, विद्यार्थी विनय सम्पन्न होना चाहिये। परन्तु आज परिस्थिति इसके विपरीत है। ऐसे हालात में सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्था कैसे चलेगी? धर्म नीति में राजनीति का प्रवेश होना ही खतरनाक है। इस पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है? इस प्रकार से अनेक समस्याओं का हमें हल ढूंढना है।

हम भौतिक साधनो मे ही आत्म केन्द्रित बनते जा रहे है। अपने मान, सन्मान के लिए, गच्छ-समुदाय आदि में ही उलझे रहते हैं। इससे हमारा उत्थान नहीं हो सकता। संगमदेव ने भगवान महावीर स्वामी पर छः महिने तक घोर उपसर्ग किया। ऐसे उपसर्ग, कष्ट कि जिनको सुनते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं परन्तु भगवान महावीर का हृदय दया, करुणा से छलाछल भरा हुआ था। उनके नैत्रों से आंसू आए पर क्यों? दुःख से? नही। उनकी भाव दया, उनका हृदय विदीर्ण कर रही थी। संगमदेव ने 6 मास तक ऐसे जघन्य कर्म उपार्जन किए कि वज्रलेप कर्म नरक व अनेक भव भ्रमण करायेगा, उसका निमित्त मै बना। परम कृपालु जिनेश्वर देव को अपना फिकर नही था परन्तु संगमदेव पर करुणा भाव था: यह है हमारा आदर्श और ऐसे ही आदर्शो का पालन हमारा भ्रमण मिटा सकता है, अन्यथा भव-भ्रमण की चक्की चलती रहेगी और यह पामर जीव उसमें पिसता ही रहेगा। इस भयावह स्थिति से हमें उबरना है। सिद्धि पद को प्राप्त करना हैं तो इसका आलम्बन, अनुष्ठान व धर्मक्रिया ही है। यही शुभ कामना।

प्रकाश-किरण

श्रोत्रं श्रुतनैव न कुण्डलेन, दानेन पाणिः न तु कंकणेन।
विभाति कायः करुणापराणाम्, परोपकारैः न तु चन्दनेन॥

अर्थ -- कान वेद-शास्त्र सुनने से ही शोभा पाते है, कुण्डल पहनने से नहीं। हाथ दान करने से शोभा पाते है, कंगन पहनने से नहीं। दयालु व्यक्तियों का शरीर परोपकार करने से ही सुशोभित होता है, चन्दन लगाने से नहीं।

हम इन्सान है —श्री सुरेश कुमार मेहता

लोग सोचते है हम जैन है, हिन्दू हैं,
अपनी-अपनी कौम का उनके दिलों मे अभिमान है,
पर मै हैरान हू कि वे कैसे भूल जाते हैं,
कि हम एक है, क्योंकि सब से पहले हम इन्सान है।

यह सच है विज्ञान का यह तूफान आया है
क्योंकि कदम-कदम पर मनुष्य-मनुष्य से घबराया है,
हसी आती है यह सोचकर, कि करेगा क्या वह चान्द पर जाकर
जो धरती पर ही रहना नहीं सीख पाया है,

प्रश्न पानी का नहीं केवल प्यास का है,
प्रश्न मौत का नही केवल सास का है,
मजिल की राह भरी है, काटो से मगर,
प्रश्न चलने का नहीं पर विश्वास का है।

यह आजाद देश अपनी आत्मा स्वय कब भर सकेगा,
अपने रफ्तार से अपने पावों के बल कब दौड सकेगा,
चान्द पर पहुचने का स्वप्न देखने वाला मेरा देश,
पेट भरने के खातिर मागने की आदत कब छोड सकेगा।

छोड महल की सुख-सुविधा मे जिनको रहना भाया,
तकलीफों को हसते-हसते जिनको सहना आया,
बने उन्हीं मे से कोई महावीर, बुद्ध या गाधी,
नही शब्द से, किन्तु कर्म से, जिनको कहना आया।

अमावस किस माह मे नहीं आती,
थकावट किस राह मे नहीं आती,
इस ससार मे बताए तो कोई,
समस्या किस राह मे नही आती।

आंखो मे आसू भी हैं, मुस्कान भी,
धागे मे गाठे भी है सधान भी
हर सिक्के के होत हैं दो पहलू,
जीवन मे समस्या भी है समाधान भी,

ज्वाला नही ज्योति बन जलना सीखो,
काटे नही फूल बन खिलना सीखो,
जीवन म आने वाली कठिनाई से,
टरना नही समझ कर चलना सीखो।

बटन को दबाए बिना लाईट जलेगी नही
कदम को बढाए बिना मजिल मिलेगी नही,
हर काम मे पुरुषार्थ की आवश्यकता है,
बीज को सीचे बिना कलिया खिलेगी नही।

अष्टोत्तर शतजिनपट्ट के अंश

राज्य संग्रहालय लखनऊ के आधार पर

—श्री शैलेन्द्रकुमार रस्तोगी
एम. ए. पुरातत्व, एम ए. संस्कृति,
सहा. निदे. पुरा., राज्य संग्राहलय, लखनऊ
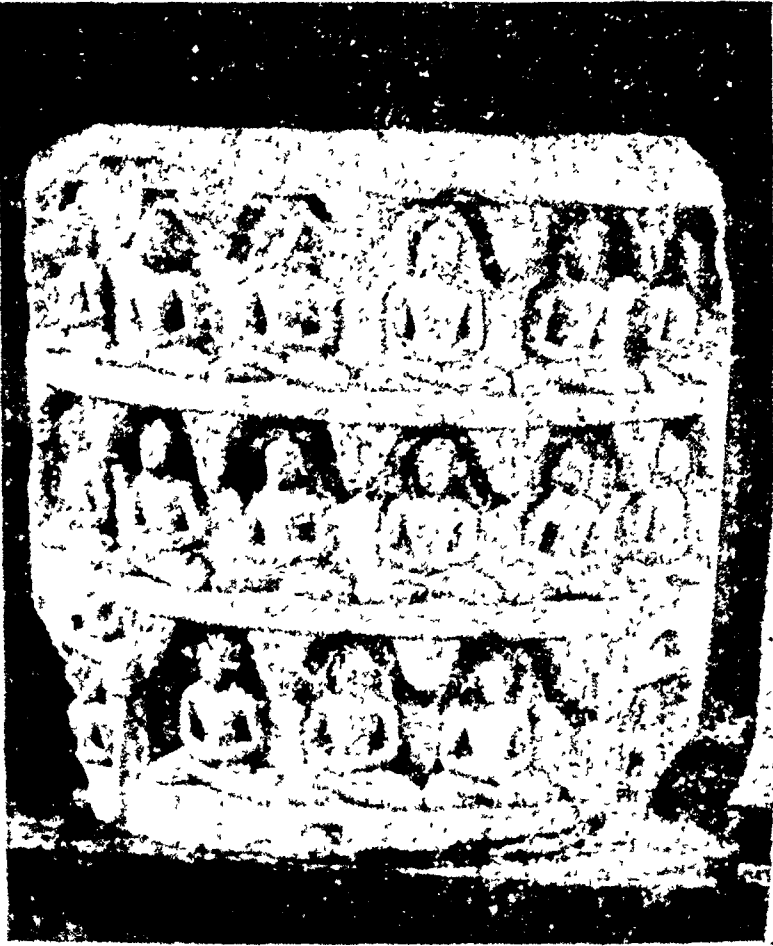
जे–८१४ ए
जिनो से अंकित वृतांश
१० वीं शती ई.

बटेश्वर–आगरा, (उ. प्र.)
निदेशक, राज्य संग्राहलय,
लखनऊ के सौजन्य से

लखनऊ के राज्य संग्राहलय मे पुरा सम्पदा का संग्रहसागर है। इस बार सुधी पाठकों हेतु दो कलारत्न सचित्र परिचय हेतु प्रस्तुत है। संग्रह मे मात्र दो यह वृत्तखण्ड है। बहुत बार इनको देखा किन्तु समझ में इनका उद्देश्य नही आता था। किन्तु इस बार जब इनको निहारा तो "ज्यो ज्यो निहारिए नीरे ह्वै नयन से त्यो त्यो प्रगटतज्यो सरद जुनाई है।" हिन्दी की रीतिकालीन उक्ति अक्षरशः सत्य हुई।

अस्तु, ऐसा प्रतीत होता है कि ये दो वृत्तखण्ड होंगे जो सम्भव है भगवान नेमिनाथ की जन्म भूमि बटेश्वर आगरा जनपद में हो या अन्यत्र कहीं हो क्योंकि ये यहीं से संग्राहलय मे आये हैं। एक फलक पर सत्ता., दूसरे पर सत्ताइस कुल चौवन है। इसी प्रकार दो अनुपलब्ध पर भी

यदि चौवन हुए तो इस प्रकार एक सौ आठ अर्थात् अष्टोत्तरशत अर्हंतो से सुशोभित वृत्ताकार सरचना होगी। अष्टोत्तरशत शिवलिंग की प्रतिमाए शैव धर्म मे इसकी रचना की गई। वैसे सहस्रकूटपट्ट देवगढ मे खजुराहो मे भी प्राप्य हैं।
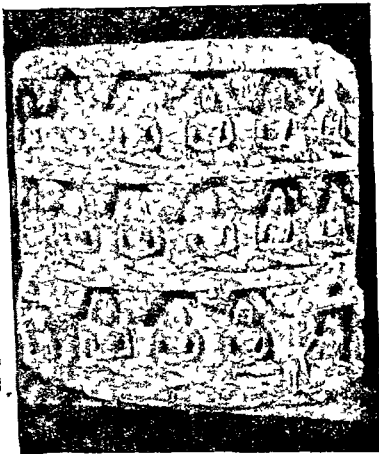
जे-८१४, बी
जिनो से अकित वृत्ताश
१० वी शती ई

वटेश्वर आगरा, (उ प्र)
निदेशक, राज्य सग्राहलय,
लखनऊ के सौजन्य से।

प्रथम खण्ड का अर्द्धव्यास वाईस से मी, ऊचाई 62 लम्बाई 83 से मी है, दूसरे की भी यही नाप है। दोनो ही पर तीन पक्तियो मे अर्हंत ध्यानासीन हैं। ऊपर से प्रथम पक्ति मे 6, द्वितीय मे 6 तथा तृतीय मे 5 तीर्थंकरो का अकन है। सभी तीर्थंकरो के साथ दोनो ओर वृक्षो की पक्तिया है किन्तु तृतीय पक्ति के दोनो कोनो पर बनी अर्हंत प्रतिमाओ को स्तम्भो पर बने चैत्यगवाक्षयुत मदिर के भीतर स्थापित किया गया है। किसी भी तीर्थंकर का लाछन-परिचय चिन्ह नही, कोई अभिलेख उत्तीर्ण नही है, उपासक, उपासिका कोई भी नही है। प्रस्तुत दोनो ही पट्ट यत्र-तत्र मामूली से टूटे हैं। यह फलक श्वेत मिश्रित पीले अर्थात् बफ सैन्डस्टोन-प्रस्तर पर रूपायित है। शैली एव सरचना के आधार पर लगभग 10वी शती की कृति प्रतीत होती है। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है मात्र दो ऐसे पट्ट सग्रह मे हैं।

THE INNER ENEMIES

Muni Ratnasen Vijay ji Maharaj

Passion, anger, avarice (greed), pride, boast, and joy at the cost of others are the inward enemies. It is difficult to recognise these inner enemies. They are invisible to the naked eye and it is an unuphill task to conquer these enemies even if we recognise them.

A man who has conquered lacs of enemies in the war may be a slave to these enemies. Soul cannot be free without conquering these enemies. Soul can be free only after gaining victory over these foes.

A slave to these inner enemies is a slave to the world and a conquerer is a world-conquerer. All the creatures of the world are friends of our soul, because they are our cast fellows. These inner enemies create differences, between the brethern of our soul and they also are responsible for giving birth to outer enemies of our soul.

It is a great pity that the whole world has become a slave of inner enemies. Even many great saints feel defeated in recognising these enemies. Inner enemies cause mutual enmity, disputes, nation wide revolution, voilence, loot robbery, rape, murder, slaughter, suicide and other undesirable activities.

So the great seers tell again and again that there is no soul's enemy in the outer world. Every creature, who lives in the world, is its friend. Passion, anger, pride etc. are the only real enemies of our soul. So it is our duty to conquer them.

Now we discuss them one by one.

1. PASSION

Co-habitation, desire to satisfy the carnal desires, lust etc. are the different phases of kam (sex). Soul has been a slave to these passions from time immemorial. The soul is suffering from various fortures due to lust for passion. The main cause of war between Ram and Ravan was Ravan's keen desire for lust.

A passionate man becomes devoi of discrimination of power, his far sightedness is also gone. Charmed by Sita's beauty, Ravan kidnapped Sita. Jatayu, Hanuman and Vibhisan etc. tried their best to make Ravan understand. But he did not give up his stubborn nature and at last a terrible war was fought due to this stubborn nature. Crores of people were killed in this war. In the end Ravan also had to meet his end.

Generally there is a sense of fear in hellish creatures *The animals have the* lust of eating There is a lust of greed in gods and man has a lust of senses Due to this only man has a power of celebacy with self desire Man is only capable to destroy these inner enemies Celebacy is the state of soul moving in the form of Bramh Knowledge is the nature of the soul

Only that man live in himself who *has avoided all other outward things* Soul itself has eternal joy But ignorance of nature, shlavary of moho and due to lust of passion man is always involved in sensual activities

If you have soul power you should have to avoid lust of sensual ac ivities compeletely and live in celebacy

If you have not this power you must at least treat other women as mothers *and sisters* It means your behaviour with other ladies should be as with mothers and sisters and try to live in celebacy also

Body becomes powerful by celebacy We feel peace of mind by it Spiritual virtues are developed by celebacy also If a man has rot a will power to live in celebacy he should try to control the lust of senses Many paople are destroyed by the lust of beauty *Only by* this sin the power of vitality of youths has gone to dogs The youth has lost their creative power due to the lust of senses

Some one has said correctly *that a* man who is a slave of beauty is the slave of world A man who is charmed *by beauty of face only, is completely* devoid of far sightedness and he has to repent in the end due to this

The sum and substance is that if you cannot become a conquerer of cupid you must not be a lust blind A blind man is better than a lust-blind because a lust blind loses his sense of discrimination and consequently he has to undergo various hardships

2 ANGER

Anger is the innermost terrible and hidden enemy of soul It steals away the treasure of serenity of the soul **Anger is Moha born result of the** soul Man begins to shiver and becomes excited when he is angry He loses the power of discrimination and he acts without *thinking*

Anger burns the heart of others and finally he also becomes our enemy Anger burns our heart also Anger is the root of all quarrels To err is human, but when we scold and reprimand immediatly it causes rage and hate in others and at last it causes fighting also Anger is like the fire which burns us and sometimes also others We disturb the *peace of others* with anger A man becomes unfriendly to all by this We have to be careful with that man who becomes angry at trifles

Virtues of forgiveness vanishes by it Other virtues also varish when the virtue of forgiveness is gone If forgive-

ness is an ornament of a braveman, anger is a bad spot for that man also.

Forgiveness is the sign of sanithood. If a saint loses his forgivness, his saint hood is also lost. He becomes a devil.

Now we shall try to understand this thing by an example.

There was a saint who took a giant in subjugation with the power of Tapas. When the saint remembered him, he came to earth and satisfied his all desires. Once the saint was going on the roap. A washerman was also coming from another side. Suddenly the saint was collided with the washerman. The saint became angry and talked atrandom. The washerman also became angry, So they started to quarrel with each other.

Tha saint had a confidence that as soon as he remembered the giant it would come and with the help of him, he could easily defeat the washerman. After a moment the saint remembered the giant but it didnot come. Both of them fought tooth and nail. At last the saint was defeated and felldown on the earth. The washerman ran away. After a moment the giant came there. The saint said, "where had you gone when I remembered you ?"

The giant replied, that he had come at once but could not recognise who was the saint and who was the washerman. The saint realised his mistakes. He began to repent of his mistake.

Sum and sustance is that anger pollutes the soul. So we should take up the weapon of forgiveness to drive away the anger.

With the power of pardon Lord Mahaveer calmed the terribly poison-sighted snake named Chanda Kaushik.

It is very difficult to conquer the long-standing habit of anger. But if we try, we can win over it gradually.

Anger may be conquered with the help of control over speech. Keep silent and control your voice for some time even if you feel excited and keep Maun.

If a man is angry with you without any fault of yours, you should keep silent and should not give any reply. If you reply a tonce it may cause a quarrel.

If you are silent for some time, the man will know the real position and dispule will be settled and he will realise his mistakes.

A man, who becomes angry over trifles, makes his life unhappy. His face has no sign of joy and it looks frightful.

The nature of our soul is also spoiled by anger as a bitter medicine spoils the taste of the mouth.

After knowing these results of anger we should try to avoid it in our life.

3. GREED

The great seers of ancient culture have rightly said that greed is the father of all evils and sins. It means it causes

eft evil deeds We see that as the profit grows the greed also increases

A man overpowered by greed forgets what is good and bad for him A greedy man thinks that wealth is supreme He is not afraid of doing injustice for earning money He has no fear of dishonesty He feels joy in looting customers. Man tells lie under the passion of greed He employs counterfeit weights and measures He avoids taxas and other government dues He uses different means to earn money He cheats the simple people After hoarding grains he makes artificial scarcity in the market and sells the things at the price he likes

Great seers have said that greed is the root of all calamities Greedy man can neither utilise the money nor can give it in charity

Wealth has three stages-Charity, Utilisation and destruction A greeey man cannot give money in charity which he has earned with many difficulties and he can not use it himself His wealth has only one way and that is wastage

A man who is mellowed deeply in passion of wealth bears hunger and thirst in the presene of wealth also He does not take food in time He cannot sleep in time He has a great botheration of wealth in his mind

We can see the example of Mamman Sheth for explaining the passion of greed for a man

One day it was raining cats and dogs The sky was looking terrible due to thundering of clouds of all around In the mean time the Queen of king Shrenik of Rajgrih city was sitting in the palace window looking all around the city Water was visible all around The whole of the city was desolete as forest that is none was visible on the city road.

There was a terrible flood in the river outside the city. She caught sight of a man swimming in the river.

The queen felt pity for that man She thought the man's condition was miserable because he was gathering sticks flowing in the terrible spate of the river.

The queen at once went to the king and said 'My lord ! You are rolling in luxury and the condition of your subjects is so misserable ? That man is dragging sticks at the cost of his life '

The king's heart was also moved to see the sight He sent the servant at once to ask the whereabout of the man

The king's servant came to the river side and asked the man "Why are you daring this kind of work in this flood at the cost of your life ?

He replied that he had two bullocks at his house but one of them had no horns and he was trying for that bull

The servant came and reported it to the king The king called him and said ' I have many bulls in my cattle shed and you can chose as you like.

He said, "I do not need such bulls. Please, come to my house and see my bullocks and then talk to me."

The king with his ministers went to mamman's house. Mamman took the king to his inner-most room. There were two beautiful and shining bulls of jewellery. There was bright all around coming out of different gems. King was spellbound to see them.

He said, 'O mamman, What are you doing inspite of possessing so much wealth ?

Mamman replied, 'My lord ! one of the bulls has no horns and so I am trying to get them."

The king found out that even one jewel possessed by mamman was worth more than the whole of his treasury.

The king asked him, "What do you eat ?

He replied, "I eat only millet bread Without ghee with a dish of chaula."

The king also found out that mamman had not given any thing in charity in his life and he belived only in hoarding.

The king felt pity for his life, because he could neither use the money for himself nor could give it in charity. After some years died an insignificant death and went to the seventh hell due to sin of hoarding.

There is another example also,

There was a millionoire in america. He had a big building with a very big hall, in it. There was a room in the hall. There was a big safe in the inner room. There were many parts of the safe and they were full of jewellery worth crores of rupees. He used to check his safe daily from six to seven o' clock and then came out. The hall had four gates and a watch man guarded each gate.

One day he entered his treasury and began to count the money. He took more than an hour to count it.

All the guards thought that the wealthy man had gone away and they closed the doors. The wealthy man kept sitting in side and began to think that his wealth will last for ten generations only. Due to this worry he suffered a heart attack and died.

Fie to such greed for wealth.

The heart of a greedy man may be compared to a under-holed pitcher. We may fill as much water as we can but a holed pitcher will be empty in some time. In the same way a greedy man's heart cannot be satisfied though he gets as much as he likes. He is never contented with whatever he gets.

Who is the most miserable man in the world ?

The man who has no wealth is not miserable but the man who is dissatisfied inspite of possessing enormous wealth, is the most misserable man in this world.

Some poet has rightly preached a very greedy man in the following way—

Sikandar had thousands of luxury and he had hundreds of mullas and servants, but when he left this world he was empty-handed.

4 PRIDE

Pride means thinking high for possessed things pride has eight forms (1) Caste (2) Clan (3) Apperance (4) Strength (5) Profit (6) wisdom (7) glory (8) education

If you are born in high caste or in high clan due to the fortunate of the past If you are pretry as that of cupid, having strong body profit in business along with mastery and deep knowledge in any subject you should not be proud It means don t insult others at the cost of your caste clan etc

The great seers have said that this life is momentary young age is as brisk as a water way this body is an abode of many diseases We can not say that any time any disease can be born So we should not be proud of any thing

The thing becomes inaccessible for us for which we have been proud We can see a lot of examples in the history that many difficulties have been borne by the proud

1 Harikeshi had to be born in chandal family as the result of pride of his caste in the previous life
2 Marichi had to wander in the world for a long time due to the pride of clan and in the last life he had to be born in Brahmin clan
3 Chakravarti sonatkumar had been very proud of his beauty and at once his body was mellowed with dropsy etc
4 King Shrenik had killed a pregnant doe for this he had to go in hellish atmosphere
5 Mohammad Gajnavi had attacked India for seventeen times and made heaps of wealth but at last he died in madness
6 Muni kurgadu felt hindrance in his tapas because he had pride for his tapas in his last life
7 Muni Sthulbhadra could not get the fourteen poorvas with meaning because he had pride for education

Pride makes the things inaccessible for future A man who prides for one thing, that thing will be difficult for him in the future So we should not pride for any thing

5 BOAST

Boast means feeling pride for some thing which is not possessed by us Under the pressure of boast man does not accept even tne facts presented by others

A proud man is inclined to under estimate others where-as pride for unpossessed things is called boast Suppose you have keen intellect and if you are proud of it it is a pride If you have no such intellect and even then you are proud that 'I am some thing is called boast

Boast is destroyer of politeness When politeness is gone all the other virtues of a man also perish A life of a boastful man is quite different from others He resorts to boast every now and then Desirable behaviour can not be expected of him and undesirability of behaviour brings about defamation

Boast destroys all the other virtues. Boastful man will be angry when his boastful-ness is hurt. Anger will create in dignation and in dignation gives birth to jealousy.

Duryodhan met his end due to his boastful nature.

It is an in ward enemy. It is not known when it will attack our soul, so we must alert and try to give up boasting.

HAPPINESS.

In generalsense happiness means joyful state-of our mind but here under the category of inner enemies, happiness means the joy, enjoyed at the cost of misserable condition of others. It is a sign of meanness to put others in trouble or to enjoy when others are in trouble.

Noble man treat al' the creatures of the world as friendly and ıry their best to remove their difficulties.

It is a moral saying that peacock feels joy at the thunder of clouds in the same way a noble man feels happy when he observes others in happiness. Where as an evilman feels joy by putting others in troubles. Such man feels extremely sorry in the end.

King Shrenik shot an arrow at a pregnant doe and killed her. Killing the innocent doe, he felt extremely happy. He praised him self by saying 'How great an archer I am ? that I have killed two creatures with one arrow. Due to this joy he was bound to the karma of hell and he had to go to hell.

MEANS TO CONQUER THE INNER ENEMIES

It is a symptom of a gentleman to try to conquer the inner enemies after knowing them.

1. **Ways to winning the passion :—**
   1. Try to observe celebacy.
   2. Think of moratality of the body.
   3. Avoid stimulating food.
   4. Avoid drinking.
   5. Avoid Cinema and theatre.
   6. Give up the obscence literature.
2. **Ways for winning Anger :—**
   1. Forgiveness
   2. Remember the lives of kindhearted great people.
   3. Think of the bitter results of anger.
   4. Try to be silent.
3. **Ways for corquering Greed :—**
   1. Contentment. It is a moral saying that contentment is the greatest wealth.
   2. Think of short life and momentary Wealth.
4. **Ways to win the pride :—**
   1. Think of imortality of possessed things.
   2. If you have a keen intellect, you should think 'What have I got

compared to that of previous great man ?

If you have a big property then you should think property is short lived I have to go empty-handed at the end of the life so why do I pride for it

5 Ways to conquering boast :—

1 Courtsey
2 Submission to father mother guru and to other great persons

6 Conquering happiness —

1 Showing great concern at the trouble and adversities of others
2 Living friendly life with all creatures

These inner enemies burn our inner and outer peace so we must try to conquer them Carelessness about them can be most terrible for us

Our soul gains strength after winning these inner enemies We get a lot of advantages after winning these inner enemies

---

प्रमाद मत करो

ज कल्ल कायव्व, णरेण अज्जेव त वर काउ ।
मच्चू अकलुणहिअग्रा, न हु दिसइ आवयतो वि ।। वृहत्कल्प भाष्य ।।

जो कार्य कल करना है, उसको आज ही कर लेना श्रेष्ठ है, क्योकि मृत्यु अत्यन्त निदय हृदयी है, वह कब आ जाए कुछ पता नही ।

तुरह धम्म काउ, मा हु पमाय खणपि कुव्वित्था ।
बहुविग्घो हु मुहुत्तो, मा अवरण्ह पडिच्छाहि ।। वृहत्कल्प भाष्य ।।

धम को आराधना करने के लिए शीघ्रता करो एक क्षण भर भी प्रमाद मत करो । क्योकि प्रत्येक मुहूत (२४ मिनट) बहुत सारे विघ्नो से युक्त है अत सन्ध्या काल की भी प्रतीक्षा मत करो ।

कुसग्गे जह ओसबिंदुए थोव चिट्ठइ लबमाणए ।
एव मणुयाण जीविय, समय गोयम ! मा पमायए ।। उत्तराध्ययन सूत्र ।।

जैसे-डाभ के अग्रभाग नाक पर टिका हुआ ओसबिंदु थोडी सी देर ही टिकता है, उसी प्रकार से मनुष्यो का जीवन भी क्षणिक है, अत गौतम ! क्षण मात्र का भी प्रमाद मत कर ।

मुनि अमरेन्द्र विजय जी म०

पुष्प-सन्देश

—श्रीमती शान्ती देवी लोढा

मुझे सतत है हंसना भाता।
कण्टक जालों पर सोता हूं किन्तु सर्वदा मैं मुस्काता।
वायु झकोरे दे दे करके, है मेरा मकरन्द गिराता।
किन्तु नहीं मैं विचलित होता, नहीं तनिक भी रुदन मचाता।
मुझे सतत है हसना भाता।
रवि आकर अपनी ज्वाला से, मेरा कोमल उर झुलसाता।
झंझा का झोंका आ आ कर, मुझको मां से विलग कराता।
धूलि-धूसरित होता हूं मैं, किन्तु नहीं मै अश्रु गिराता।
मुझे सतत है हंसना भाता।

निर्मोही माली ले मुझको गूंथ-गूंथ कर हार बनाता।
मेरे उर का छेदन करके मानों वह मन मे सुख पाता।
बिंधा हुआ लख निज तन को मैं. नही तनिक भय से थर्राता।
मुझे सतत है हंसना भाता।
जो मेरे सम्मुख आता है उस पर मै सुगन्ध बरसाता।
थकित बटोही जो आते हैं, उनमे मै नव जीवन लाता।
कभी नहीं मैं जान सका हूं, मानव क्यों कर रुदन मचाता।
मुझे सतत है हंसना भाता।

मेरा मधु सौरभ पीने को अलि आकर गुंजार सुनाता।
रिक्त बनाता मेरे उर को, किन्तु नही मै रुदन मचाता।
परहित की रख कर अभिलाषा, मैं अपना सर्वस्व लुटाता।
मुझे सतत है हंसना भाता।
क्रूर दैव पाषाण गिराकर मेरी पंखुरियाँ बिखराता।
मेरी दीन, मलीन दशा पर, नील गगन भी अश्रु बहाता।
किन्तु नही मै साहस खोता, धूलि कणों पर भी मुस्काता।
मुझे सतत है हसना भाता।

सुख दुःख सब ही क्षणभंगुर है, अल्प समय का इनका नाता।
इसीलिए मै कष्ट काल मे, हास दिव्य संगीत सुनाता।
संकट मे मानव का क्रन्दन किंचित भी मुझको न सुहाता।
मुझे सतत है हंसना भाता।
जीवन का उद्देश्य यही है, हंसते-हंसते प्राण गंवाना।
कुलिश शिलाओं के प्रहार सह, हंस-हंस कर निजपन्थ बनाना।
मृत्यु करे आवाहन तब भी, मै हंस-हंस कर निकट बुलाता।
मुझे सतत है हंसना भाता।

प्रेरणात्मक एव सुत्रात्मक

श्री भद्रकर सौरभ

सकलन—श्री हीराचन्द वैद, जयपुर

विश्व वत्सल्य आध्यात्मिक योगी पूज्य पन्यास प्रवर श्री भद्र कर विजयजी महाराज के नाम से कौन भविक अपरिचित होगा। जिनने अपने सयमी जीवन के पचास वर्षों जितने अर्द्ध शताब्दी काल मे नमस्कार महामत्र पर गहनतम चिन्तन कर उससे प्राप्त दोहन को जन शासन को समर्पित किया है।

राजस्थान के दक्षिणी पश्चिमी भाग एव गुजरात का उत्तरी भाग आपका प्रमुख विहार स्थल रहा है। वे ही महापुरुष थे जो इतनी महान साधना, तपस्या के साथ सरलता, विनम्रता के इस युग मे प्रतिरूप थे। यद्यपि सभवत वे राजस्थान के गुलाबी नगर जयपुर मे तो कभी नहीं पधारे पर जयपुर सघ के प्रति उनका अपार स्नेह और कृपा तव दृष्टिगोचर हुई जब लुणावा मे जयपुर सघ के अगेवान उनके तथा साथ ही विराजित महान योगनिष्ठ भगवत विजय कला पूर्ण सुरीश्वरजी महाराज सा के पास चातुर्मास मे धर्माराधन के लिये मुनी भगवनो की माँग लेकर पहुँचे। पूरे दिन और आधी रात तक विनतिया करने पर भी जब कोई आसार नही बना तो व अति द्रवित हो गये और आ० भगवत से बोले जयपुर वालो की विनती और भावना को देख कर तथा वहाँ चातुर्मास की कोई व्यवस्था नहीं हो पाने से मेरे दिल मे बहुत विचार है। काश मैं उनकी भावना को पूर्ण कर सकता! और उनकी यह अन्तर्भावना परिणीत हुई जयपुर सघ के महान पुण्योदय के रूप मे -और परिणाम आया युवक मुनि प्रतिभाशाली प्रवचनकार श्री कलाप्रभ विजय जी महाराज आदि ग्यारह साधु साध्वियो के जयपुर चातुर्मास के रूप मे।

आज पन्यास प्रवरस शरीर हमारे बीच नही हैं फिर भी उनकी महान कृपा व आशिर्वाद जयपुर सघ के साथ हैं यहाँ का सघ उनके उपकार को कभी भूल नही सकेगा। ऐसे महा पुरुष को जयपुर सघ का कोटि-कोटि वदन। उन्ही महा पुरुष के श्री मुख से फरमाये हुये सुवाक्य हिंदी व अग्रेजी भाषा मे यहाँ सकलित किये गये हैं। हमारी आत्मा के विकास एव उच्चता प्राप्त करने मे अवश्य ही ये सूत्र सहायक बनेंगे इसी भावना से –

(लेखक)

अहिसा के पालन से क्रोध जीता जाता है और आत्मा शान्त बनती है।

We can conquer angar by resorting to non-violence, and make our Soul Peaceful

× ×

सयम के पालन से काम जीता जाता है और आत्मा शान्त बनती है।

Self-Control can overpower the Sensuosness and bring about the controlling power of the soul

× ×

तप के सेवन से लोभ जीता जाता है और आत्मा शान्त बनती है।

X X

तप से शरीर की शुद्धि होती है स्वाध्याय से मन की शुद्धि होती है, और ईश्वर-प्रणिधान से आत्मा की शुद्धि होती है।

X X

अंहिसा के पालन में प्रभु-आज्ञा की आराधना है तथा प्रभु-आज्ञा का रहस्य जीवन मात्र के साथ आत्म तुल्य अनुभव करने मे है।

X X

सौम्यता अर्थात् समभाव के विना किसी भी सद्गुण का सच्चा वास आत्मा में नहीं हो सकता है।

X X

न्याय पूर्ण व्यवहार से प्राप्त साधनों में मन को तृप्त रखना 'संतोष' है।

X X

सत्पुरूषों के गुणों का बहुमान तथा प्रशंसा करना धर्मरूपी बीज का सच्चा वपन है।

X X

मैत्रीभाव की पराकाष्ठा का दूसरा नाम सम्पूर्ण अंहिसा है। मैत्रीभाव की जितने अश में अपूर्णता है, उतने अश मे हिंसा रहेगी।

X X

विनय से प्राप्त विद्या इस लोक और परलोक में फलदायी बनती है तथा विनम्र विहीन विद्या इस लोक और परलोक दोनों का विनाश करती है।

X X

परमात्म मूर्ति के ध्यान से ध्याता को ध्येय के साथ एकता का अनुभव होता है। इसलिये जिन बिम्ब का बहुमान वस्तुतः भगवान का बहुमान है।

X X

प्राणिमात्र के प्रति मैत्रीभाव रखने से अभेद दृष्टि पुष्ट बनती है। मैत्रीभाव प्रकट होने पर ही दुःखी के दुःख दूर करने की करुणा बुद्धि, गुणाधिक के प्रति प्रमोद वृत्ति तथा विरोधी के प्रति मध्यस्थ वृत्ति उत्पन्न हो सकती है।

X X

Austerity win over gread and makes the Soul Serene.

X X

Tapas purify the body, self-study purify the mind. Concentration on lord purifies our Soul.

X X

Observance of Ahimsa is Submission to lord's wishes. The mystery of lord's command is to consider every creature like the self.

X X

Serenity means politeness. with out politeness no pious virtue can enter and stay truly in a soul.

X X

To keep the mind satisfied with the means acquired by just-behaviour is contenment.

X X

Great regard and appreciation for the virtues of righteous men is the real sowing of the seed of religion.

X X

The climax of the state of friendship is non-violence. There will be voilence proportionate to lack of friendship.

X X

The knowledge acquired through Humility is fruitful in this world and the world beyond and knowledge without Huimility spoils both the worlds.

X X

'Before the Idol of lord jineshwara a devotee feels the union with his aim. So the regard for jineshwar's idol is regard for God.

X X

Friendship for all living being strengthens our clear visions. The appearance of spirit of friendship creates the mercy for the miserable, appreciation for the virtuous, indifference for the crual persons.

X X

शुद्ध धर्म का प्रकर्ष स्वरूप-रमणता है। स्वरूप-रमणता अथवा आत्म-रमणता ही वास्तविक शुद्ध आत्म धर्म है। उसकी प्राप्ति कराने वाला मंत्र नमस्कार मंत्र है इसीलिये नमस्कार मंत्र महामंत्र की संज्ञा को धारण करता है, जो यथार्थ ही है।

X X

अयोग्य को नमस्कार करनेवाले तथा योग्य को नमस्कार नहीं करने वाले को अनिच्छा से भी हमेशा झुकना पडे, ऐसी तिर्यंच गति तथा वृक्षादि के भवों की प्राप्ति होती है।

X X

सद् विचार का फल सद्वर्तन है। सद्वर्तन बिना शुष्क विचार वन्ध्यातुल्य निष्फल है।

X X

मुक्ति मार्ग मे जो सहायता करता है वह साधु कहलाता है। सहायता वही करता है, जो प्रेम से भरपूर और ईर्ष्या-असूया से मुक्त होता है।

X X

मनुष्य की वाणी और वर्तन उसके मन की स्थिति के ही प्रतिबिम्ब हैं, इसीलिये शास्त्रों मे बन्ध और मोक्ष का प्रधान कारण मन को कहा गया है।

X X

अहंभावपूर्वक की गई स्वार्थ साधना आत्मा को नीचे ले जाती है, जबकि नमस्कार भावपूर्वक की गई परमार्थ-साधना आत्मा को ऊँचे ले जाती है।

X X

धर्म की प्राप्ति के लिये भी और धर्म करने के लिये भी परोपकार आवश्यक है।

X X

प्रभु आज्ञा का आराधन मोक्ष का कारण होता है तथा प्रभु-आज्ञा का विराधन संसार का कारण होता है।

X X

A deep concentration of soul is the climax of pure religion It can be acquired only by Namaskar Mantra So this mantra has rightly been called maha-mantra

X X

Those who do not bow down to the worthy and bow to the unworthy ones are doomed to the life of Tiryanch and Plant life so that they remain in bowed down condition forever

X X

The result of pious thinking is good conduct The good ideas which are not put into practice are barren

X X

A guide to the way of salvation is called sadhu Only he can help who is full of affection and free from jealousy

X X

Speech and actions of a man reflect the condition of his mind So mind has been stated as the chief source of Karmas and and Salvation

X X

Selfish ends with egoism degenerate a soul where as philanthropy with spirit of namaskar elevates the soul

X X

Benevolence is essential to gaining religiosity and doing religious actiuvties

X X

Obedience to lord jineshvara is the cause of salvation and disobedience is the cause of birth and rebirths

X X

अंहकार उपकारियों के पहिचान में बाधक है तथा स्वयं के अपराधों को स्वीकार नही करने देता है।

X X

समस्त क्रियाओं का मूल श्रद्धा है, श्रद्धा का मूल ज्ञान है, ज्ञान का मूल भक्ति है, भक्ति का मूल भगवान है, क्योंकि भगवान का आत्म द्रव्य विशिष्ट कोटि का है।

X X

नमस्कार कृतज्ञता व कृपा का सिद्धान्त है क्षमापना प्रेम और दया का सिद्धान्त है।

X X

अनुकंपा–'अनु' अर्थात् दूसरे का दुःख देखने के बाद–'कंप' अर्थात् उस दुःख को दूर करने की हृदय में तीव्र भावना होना वह अनुकंपा कहलाती है।

X X

धर्म वृक्ष का प्रथम अंकुर औदार्य है। दान और औदार्य (उदारता) में भेद है। सामने वाले को आवश्यकता होने पर जो दिया जाता है–वह दान है। दाता को देने की आवश्यकता है और दिया जाता है, वह औदार्य है।

X X

बीज को बोये विना धान्य पैदा नही होता, उसी प्रकार गुण के प्रति बहुमान रूपी बीज के आधान विना गुण प्राप्ति शक्य नही है अतः गुण प्राप्ति के लिये गुणानुरागी बनना चाहिये।

X X

Egoism is hurdle to recognising the real pilanthropist and it disallows a person to confess his mistakes,

X X

Ardent faith is the root of all activities, the root of the faith is knowledge, the root of knowledge is devotion and the root of all devotion is the Almighty' because the soul of God is extraordinary.

X X

One is the law of grace and gratitude other is the law of mercy and love.

X X

Compassion (Anukampa) means a feeling in heart to remove other's trouble after realising them.

X X

The initial sprout of a tree of religion is generosity. There is difference between charity and generosity. To give a needy person something of demand is called chartiy and to give a needy person with out demand from him, is called generosity.

X X

Grain can not be acquired without souring the seed. In the same way, virtues can not be acqiured without souring the deeds of respect and regard for the virtuous. So we must be virtue-loving for acquiring virtue.

X X

मानव कर्म से महान् बनता है जन्म से नहीं

जोग-संजोग का अनोखा बन्धन

— बाबू-माणकचन्द कोचर

बहुत पुरानी बात है कि जम्बु क्षेत्र मे रत्नगिरि नाम का बहुत बडा नगर था। उस नगर मे राजा विजय सैन राज करता था। उसका पराक्रम दूर-दूर तक फैला हुआ था। राजा जैन धर्म का मानने वाला व न्याय प्रिय था। उस नगर मे बहुत जैन देरासर थे जिनके गगनचुम्बी शिखर थे। विजय सैन के वीर सैन, अजय सैन पुत्र व रत्नावली पुत्री थी। तीनों अभी बाल अवस्था म ही थे। वे तीनो एक गुरकुल मे पढते थे। उसी पाठशाला म एक गरीब ब्राह्मण का लडका भी पढता था। वह शक्ल से बदसूरत था। एक ही जगह पढने के कारण उन चारो मे अच्छी बनती थी। एक समय की बात ह कि दोपहर के समय एक देव-विमान उस गुरकुल के ऊपर से गुजर रहा था। हरे-भरे वृक्षा के झुरमुटों को देखकर कुछ समय के विश्राम के लिये दोनो ने अपना विमान नीचे उतारा और जहा चारो बालक विश्राम कर रह थे उसी वृक्ष से कुछ दूर वे भी विश्राम करने लग गये। गरमी का समय था। निद्रा ने दोनो को आ घेरा। कुछ समय बीतन पर दोनो देवताओ की आखें खुली और वे चलने को तयार हुए। पहले देवता की नजर उन सोये हुए बालको की तरफ गयी। उसने दूसरे देवता से पूछा ये तीनो बच्चे काफी सुन्दर है परन्तु ये चौथा बच्चा काला और बदसूरत कौन है ?" तब देव ने कहा "ह देव इस बदसूरत बालक के साथ ही इस राजकुमारी का विवाह होगा। इसको कोई नही रोक सकता।" ये कहकर दोनो देव विमान मे बैठ कर अपनी दिशा चले गये। ये वार्तालाप राजकुमारी ने सुन लिया। वह अर्द्ध निद्रा मे थी। वह घबरा कर बैठ गयी और सोच मे पड गयी। पाठशाला से वह वापस राजमहल आ गयी। राजकुमारी ने चिन्ता मे खाना छोड दिया और बीमार रहने लगी। जब राजा विजय सैन को मालूम पडा तो उसने राजकुमारी से पूछा—बेटी क्या बात है तुम दिनोदिन कमजोर हो रही हो और खाना भी नही खाती हो ?" राजकुमारी ने सारी दास्तान पिता को सुनाई। राजा भी चिन्ता मे पड गया। राजा ने कहा बेटी देवताओ के वचन कभी खाली नहीं जाते। जोग सन्जाग को कौन रोक सकता है। राजा काफी समझदार था। राजकुमारी ने कहा, "उस बदसूरत लडके की दोनो आंखें निकालकर मेरे सामने हाजिर होनी चाहिये, नही तो मैं आत्म हत्या कर लूगी। राजा ने पुत्री की बात रखने के लिये उसी समय दो जल्लादो को बुलवाया। उस लडके को भी बुलवाया। उसका रग काला होने के कारण वह कालू के नाम से जाना जाता था। जल्लाद उस लडके की आखे निकालने के लिए मरघट पर ले जाने लगे। दोनो जल्लादो मे से एक की आत्मा थर्रा उठी और उसने दूसरे जल्लाद से कहा इस बेकसूर बालक की हत्या करके हमको

क्या मिलेगा।" दूसरे ने कहा हम क्या करें। "आंखे लेजाकर नही देंगे तो राजा हमें मरवा देगा। फिर दोनों जल्लादों ने बालक से कहा तू इस नगर को छोड़कर हमेशा के लिए दूसरे नगर चला जा," बालक वहां से प्रस्थान कर गया। फिर जल्लादों ने हिरण की आंखे लेकर राजकुमारी को भेंट कर दीं। राजकुमारी बड़ी प्रसन्न हुई और मन में सोचने लगी कि अब देवनाओं की बात झूठी साबित हो जायगी।

उधर कालू उस राजा की राज्य सीमा छोड़ कर दूसरे राजा के राज्य की सीमा में प्रविष्ट हो गया। बहुत दूर चलने पर वह एक बगीचे में आराम करने लगा और गहरी नींद मे सो गया। अचानक एक विशाल काय पक्षी आकाश से उस बालक को मरा हुआ जानकर नीचे उतरा और उसको मजबूत पकड़कर आकाश में उड़ गया। काफी दूर जाने पर वह राजा के निजी बगीचे में उतरा। बालक को नीचे रखते ही वह सुस्ताने लगा। तब वह पक्षी उसे जिन्दा समझ कर वहां से उड़ गया। फिर वह बालक एक चबूतरे पर वापस सो गया। इसी नगर के राजा का देहान्त एक दिन पहले हो गया था। उस राज्य मे यह नियम था कि उसकी गद्दी पर उस राजा का लड़का नहीं बैठ सकता था। राजा का चुनाव वहां की जनता राज दरबार की हथिनी द्वारा करती थी। हथिनी माला लेकर पूरे शहर में घूमती थी। जिस आदमी को यह माला पहना देती वही उस नगर का राजा होता था। हथिनी माला लेकर पूरे शहर का चक्कर लगाकर वापस उस बगीचे में आयी और उस चबूतरे पर सोये हुए बालक के गले में माला पहना दी। यह देखकर जनता जय-जयकार करने लगीं। अचानक वह बालक खड़ा हो गया और इतनी जनता को देख कर घबरा गया। इतने में राज्य के चार प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने उस बालक को उठा कर उस हथिनि पर बैठा दिया। पूरे नगर में हर्ष और उल्लास से उसका स्वागत किया गया। और दूसरे दिन उस बालक का शुभ मुहूर्त में राजतिलक कर दिया। अब वह कालू से कुलवन्तसिंह बन गया। समय का पहिया चलता रहा राजा युवास्था में आ गया। दूर-दूर से उसके विवाह के निमन्त्रण आने लगे। कुलवन्त ने सबको ठुकरा दिया। कुलवन्त ने अपने मन्त्री को बुला कर कहा—मैं विवाह करुंगा तो राजा विजय सैन की पुत्री रत्नावली से ही करुंगा। मन्त्री उसी समय अपने खास-खास आदमियों को साथ लेकर रत्नगिरी आ गया। मन्त्री ने अपना सन्देश राजा को सुनाया। राजा विजय सैन ने यह सन्देश स्वीकार कर लिया। कुछ समय पश्चात् कुलवन्त व रत्नावली का विवाह हो गया। रत्नावली कुलवन्त के नगर में आ गयी। कुछ समय बीतने पर एक दिन रत्नावली व कुलवन्त सिंह बगीचे में एक वृक्ष के नीचे प्रेमवार्ता कर रहे थे। कुलवन्त ने रत्नावली से कहा हे रत्ना! तुम देवताओं की बात व जोग-संजोग को मानती हो या नही। तब रत्नावली ने कहा कि मैं इन सब में विश्वास नही करती हूं। उदाहरण के लिये अपने पिछले दिनों की कहानी कुलवन्त को सुनाई। कुलवन्त ने कहा वह बालक कहां है? तब रत्नावली ने कहा वह तो पहले ही कह चुकी हूं कि मैंने उसे मरवा दिया। यह सुनते ही कुलवन्तसिंह क्रोधित हो गया और कहने लगा आंख खोलकर देख "ये कुलवन्त के रूप में कालू खड़ा है। रत्नावली की हालत देखने लायक थी। वह घबरा कर बेहोश हो गयी। होश आने पर उसने कुलवन्त से क्षमा मांगी। कुलवन्त समझदार था। उसने रत्नावली को क्षमा कर दिया। और कहा "हे रत्नावली दुनियां मिट सकती है पर विधाना के द्वारा लिखी कर्मों की रेखा व जोग-संजोग नही मिट सकता। समय बीतता गया। कुलवन्त व

शेष पृष्ठ 41 पर

खण्डहरो की कहानी–वैभव की जुबानी

श्री हीराचद बैद, जयपुर
सयोजक 'मालपुरा देरासर जीर्णोद्धार समिति'

एक खण्डहर जिन प्रासाद, जिसकी कहानी इतिहास मे मिली-शिलालेखो म मिली-प्राचीन रचनाओ मे मिली, कैसे ४०० वर्षो के बाद अपने अतीत के वैभव को पुन प्राप्त करन मे सक्षम हुआ। यह एक अनुठी कहानी है-जिसे पढ कर जहा आपको रोमाच होगा, वहाँ भाग्य न केवल चेतन का अपितु जिनेश्वर के देरासर का भी कैसे उदित होता है यह जान कर अवश्य ही जिन शासन के प्रति, प्रभु भक्ति के प्रति, गुणानुराग के प्रति आपका मस्तक श्रद्धा से झुकेगा और आपको प्रेरणा देगा ऐसे सुकृतो मे अपने को समर्पित कर देने के लिये।

आइये। तैयारी करें भव्य प्रतिष्ठा महोत्सव के लिये।

–लेखक–

कहावत है हरेक के जीवन मे कोई क्षण ऐसे आते हैं जब उसका सुषुप्त भाग्य जागता है- अभाव मिटते हैं और समृद्धि आती है। यह स्थिति न केवल जीवन धारी जीव के लिये ही आती है अपितु जड पदार्थों के जीवन मे भी आती है। हजारो हजार वर्ष तक खडहर के रूप मे रहने पर भी जब कभी स्थान का भाग्य उदित होता है तो पुन वे ही खडहर वैभव को प्राप्त कर लेते हैं। इतिहास मे इस तथ्य के साक्षी रूप सैकडो उदाहरण खोजे जा सकते हैं

ऐसी ही एक कहानी है आज की अभी की पुरानी नही जयपुर के निकट एक स्थान मालपुरा के देरासर की। समृद्धि की गगनचुम्बी सीमाओ पर रह कर काल के थपेडो ने न केवल इस शहर की अपितु इसके देरासरो की गरिमा को भी समाप्त प्राय कर दिया। जब समय अनुकूल नही होता तो इतिहास भी छिप जाता है। यही इस नगर के साथ हुआ।

महाराजा कुमारपाल और महामात्य वस्तुपाल तेजपाल के काल मे यह स्थान अपनी भरपर जाहो जलाली पर था–मुगलकाल मे मदिरो पर हुये आक्रमणो की चपेट मे यह शहर भी आ गया।

सोलहवी शताब्दी जैन शासन का उत्कर्ष काल रहा। कई प्रभावक व्यक्ति इस शासन के सिरमौर रहे। सम्राट अकबर को प्रतिबोध करने वाले उनसे ही जगतगुरु का विरुद पाने वाले, मुगल सम्राट से अमारी परावतन के लिये वर्ष मे ६ माह के पट्टे प्राप्त करने वाले, हिन्दुओ पर से जजीया कर हटवाने वाले, शत्रु जय गिरनार आदि तीर्थों के पट्टे जैन सघ के नाम प्राप्त करने वाल जैन शासन के सीरताज विजय हीर सुरीश्वर जी महाराज साहब इसी सदी मे हुये। श्री जिनचद्र सुरीश्वर जी, श्री समयसुन्दरजी, आचाय सवाई विजय सेनसुरी, उपाध्याय भानुचद्र जिनका उपाध्याय पद का महामहोत्सव स्वय सम्राट अकबर ने स्वद्रव्य से किया एव खुश फहम की पदवी प्रदान की। शातिचन्द्र, सिद्धीचद जिन्होने बालमुनी होते

हुये अबुलफजल का स्नेह प्राप्त कर अरबी भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त किया तथा अरबी भाषा मे जैन ग्रंथों का अनुवाद किया, इस युग की महान विभुतियाँ थी। अब तो यह ऐतिहासिक तथ्य बन चुका है कि सम्राट अकबर के निमंत्रण पर जब आचार्य देव विजय हीर सुरीश्वर जी महाराज सा. गुजरात से आगरे की ओर पधारे तो राजस्थान में विहार मार्ग सिरोही, मेवाड़ से मालपुरा चंदलाई, सांगानेर होकर रहा। उस काल मे मालपुरा का उत्कर्ष चरम सीमा पर था।

यहाँ के खण्डहर हुये अति विशाल देरासर का जिर्णोद्वार उसी काल मे प्रभावक मुनि प्रवरों के हाथो सम्पन्न हुआ जिसका प्रमाण आज भी इस देरासर मे लगे वि० सं० १६७० के वृहत शिला पट्ट मे अंकित है। यह साधारण शिलालेख नही ऐतिहासिक व जिन शासन की गरिमा का द्योतक है। इसमें शत्रूंजय आदि तीर्थों के कर के विमोचन के पट्टे परवाने देने, सम्राट द्वारा भानुचद को उपाध्याय पद प्रदान करने, खुशफहम की पदवी प्रदान करने का स्पष्ट उल्लेख अंकित है। पुरातत्वज्ञों एवं इतिहासकारों ने इसकी महत्ता को माना है और आंका हे।

इस नगर की ऐतिहासिक महत्ता के और भी प्रमाण विद्यमान है। वि० सं० १६६८ में विजय सागरजी ने सम्मेत शिखर तीर्थमाला ढाल ६ में लिखा है "चंद्रप्रभ चिन्ता हरइ, मालपुरइ मन माहि"। बाद में वि० सं० १७५० मे सोभाग्य विजय जी ने तीर्थ माला की ढाल १२ में लिखा है "चंद्रप्रभ चिन्ता हरे, मालपुरा मन रंग"।

भानुचन्द्र चरित्र मे उल्लेख है कि मगसर सुद २ सं० १६७८ (5-11-1621 AD) में पंडित जयसागर जी के सानिध्य में मालपुरा संघ ने चंद्रप्रभु भगवान के परिकर का निर्माण कराया।

हीर सूरी रास मे भी इस नगर हेतु वि० सं० १६३९ की एक घटना का उल्लेख है कि आगरा से भानुचंद्र उपाध्याय मालपुरा गये और शास्त्रार्थ में एक समुदाय के आचार्य को हराया और इस खुशी में यहाँ के देरासर पर स्वर्णकलश चढाया गया तथा प्रतिमा जी की स्थापना भी की गई।

यहाँ जैन साहित्य का लेखन भी काफी हुआ। 'रत्नपाल कथानकम्' यहीं लिखी गई। इसकी अन्तिम पंक्तियाँ इस प्रकार लिखी हुई हैं:—

"उपाध्याय श्री भानुचंद्र गणिभिरूदक दानोपरि कृतं रत्नपाल कथानकम् समाप्तम्, सम्वत १६६२ वर्षे जेष्ठ सुदी १ गुरों दिने मालपुरा नगरत: मु० रत्नालिखितं"। Jain inscriptions of Rajasthan में भी उल्लेख दिया गया है "Munisuvrita swami's massive Temple was constructed in V. E 1672 by malpura sangha under the instruction of Bhanu chandra & Siddhi chandra....... The temple has got a beautiful Ranga mandap. Vijaya Devsuri of tappgacha is referred to in an inscriptions of V. E 1678.

आनन्द जी कल्याण जी पेढी द्वारा करीब 30 वर्ष पूर्व प्रकाशित जैन तीर्थ संग्रह में भी मालपुरा के देरासर का उल्लेख किया गया है उसमे वहाँ ३३ पाषाण व ४७ धातु की प्रतिमाओं के होने का उल्लेख किया गया है।

हाल ही मे चांपानेरी (जिला अजमेर) में सम्वत् १८५६ के अभिलेख मे चातुर्मास हेतु निकाले गये पट्टक मे आचार्य भगवंत विजय धर्म सुरीश्वर जी महाराज के समुदाय के आचार्य विजय जिनेन्द्र सुरीश्वरजी महाराज ने मालपुरा के लिये प० भाग्य विजय जी गणि को भेजा ऐसा स्पष्ट उल्लेख है।

ऐसे ऐतिहासिक स्थल के खंडहर होने पर किसे दुःख नहीं हुआ, पर एक तो यहां समाज री

सख्या में निरन्तर ह्रास होता रहा। दूसरा साधु भगवतो का विहार इस क्षेत्र मे समाप्त प्राय हो गया। वैसे यह स्थन चारो ओर जैन समाज की बस्तियो से बसे नगरो के बीच मे पडता है। जयपुर, केकडी, ब्यावर, अजमेर, कोटा जैसे शहरो के बीच मालपुरा आता है पर योगानुयोग किसी भी सघ का ध्यान इस क्षेत्र के गरिमा पूर्ण इतिहास की ओर आकृष्ट नहीं हुआ। समय-समय पर जयपुर सघ के आगेवाना का ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया पर यो मान लें कि क्षेत्र का भाग्योदय नहीं हुआ था। स्थानिक सघ इतने बडे कार्य को हाथ मे लेने मे अपने आप को सक्षम नही मान रहा था। इस सबके बावजूद भी मालपुरा के स्थानीय सघ को साधुवाद देना पडेगा–सैकडो वर्षों तक उन्होंने मदिर की रक्षा की, सेवा पूजा की व्यवस्था रखी।

मालपुरा के निकटतम क्षेत्र मे जयपुर ही ऐसा स्थान है जहा का सघ इस ऐतिहासिक स्थान के जिर्णोद्वार का दायित्व वहन करने मे समर्थ हो सकता था। एक और भी सुखद सयोग था कि मालपुरा मे ही स्थित श्री जिनकुशल सुरीश्वर जी की वृहत दादावाडी है और भक्त जन वर्ष भर मे हजारो की सख्या म आस पास से खास कर जयपुर से आते रहे हैं। कई बार यहा के देरासरो के जिर्णोद्वार का विचार किया तो गया पर इसके लिये कोई सुदृढ प्रयास नहीं हो सका। सौभाग्य से जैन कोकिला श्री विचक्षण श्री जी महाराज साहब का मालपुरा म चातुर्मास कुछ वर्षों पूर्व हुआ इससे यहाँ के सघ मे चेतना आना स्वाभाविक था और जीर्ण शीर्ण देरासर के लिये विचार करने का भी। योग बना, इस काय हेतु पूज्य साध्वी जी महाराज सा से वार्ता हुई और उनका इस काम के लिये आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ।

जैन सघ की प्रतिनिधि सस्था शेठ आनन्दजी कल्याणजी पेढी से इस काय के लिये निवेदन किया गया तथा तुरन्त ही वहा से सोमपुरा को स्थिति का अवलोकन करने को भेज भी दिया गया। प्रारम्भ मे अर्थ की तो इस काय हेतु कोई व्यवस्था थी ही नही अत सोमपुरा को सामान्य रूप में ही जीर्णोद्वार काय का तखमीना बनाने को कह दिया गया, सामान्य स्थिति को देखते हुए इस काय हेतु कुल ४५ हजार के खर्चे का अनुमान पत्र तैयार किया गया। पेढी को भी प्रेरणा करने पर इस राशी मे से २५ हजार की राशि वहाँ से दिये जाने का निश्चित आश्वासन मिल गया। इससे स्वाभाविक था कि सबका उत्साह बढता। मालपुरा के वयोवृद्ध व्यापारी एव सेवाभावी श्री लाभचद जी सोधी ने अपना पूर्ण योगदान इस काय हेतु देने का सकल्प किया। उनकी अध्यक्षता मे स्थानिक भाइयों की एक समिति बनाई गई, कारण स्थानिक भाइयो के सहयोग से ही इस तरह के काय सुगमता से सम्पन्न हो सकते हैं। स्थानिक बन्धुओ के सहयोग से बहुत बडा भार हल्का हो गया। प्रारम्भ में ही एक ही पेढी से करीब सारे खर्च का ६० प्रतिशत सहयोग का आश्वासन मिल जाने से उत्साह बढना स्वाभाविक था। इस उत्साह का परिणाम जहाँ एक ओर इस कार्य के लिये अत्यधिक महत्त्वाकाक्षी भावना व्याप्त हो गई वहाँ यह भी दिखने लगा कि जिस ढग से काय प्रारम्भ हुआ है खर्च के अनुमान की सीमा बहुत अधिक लाघ जावेगी। यह तो निश्चय ही था कि काम सुदृढ व सही हो, साथ ही मितव्ययिता से हो।

जब इस कार्य की सुवास समिति की ओर से भेजे गये आमत्रणो से सारे भारत के सघो एव आचाय भगवतो के पास पहुची तो सब ओर से खूब सहयोग के आश्वासन मिले। और साल डेढ साल मे ही इस काय की खर्च राशी एक लाख तक पहुच गई। इस देरासर म निकले ५ फीट लम्बे शिलापट की कहानी जब शासन के अनेक दिग्गज आचार्यों के पास पहुची तो समर्थन व

आशीर्वाद इस कार्य के लिये इतना मिला कि वर्णन करना मुश्किल है। जीर्णोद्वार कार्यो में गुरु भगवंतों का आशीर्वाद मिलता ही रहा है पर इस कार्य में सभी समुदायों, सब ही गच्छों के आचार्य भगवंतों का जो आशीर्वाद मिला वह अनुठा था अत्यधिक प्रेरणादायक था।

एक लाख खर्च हो चुकने पर यह समझा जाने लगा कि काम का समापन निकट ही है पर सब ओर से यह प्रेरणा की जाने लगी कि ऐसे ऐतिहासिक देरासर को अवश्य ही शिखर युक्त बनाया जाना चाहिये। काम बडा था खर्चा भी काफी होने का अनुमान था पर क्षेत्र का उदयकाल प्रारम्भ हो चुका था, अधिष्टायक देव जागृत हो चुके थे। साहस कर शिखर बनाने का निर्णय ले लिया गया साथ ही यह भी कि यह ५० फीट ऊँचा गगन चुम्वी शिखर सामान्य नही पर गरिमा युक्त बने। ठोस मकराने के पत्थरो से बनाने के लिये आदेश दे दिये गये। करीब १ लाख के तखमीने के साथ। वह बन गया और दूर-दूर तक इस देरासर की ध्वजा को फरकाने का निमित्त बन गया। शानदार तीन रंगी फर्श, गम्भारे का कलात्मक द्वार, देरासर का सुन्दर मूल द्वार साथ ही शिखर में ऊपर की मंजिल मे नया गम्भारा, प्रवेशद्वार के दोनों ओर मकराने का शालीन जीना भी बन गया। इन सब कार्यो के अलावा और भी कई विशेषतायें इस देरासर को प्राप्त हुई। तीन रंग के पाषाण से गम्भारे के मूल द्वार के आजू-बाजू दो समवसरण के गोखले बने हैं तथा दीवारो पर प्रमुख तीर्थो के ६ विशाल पट्ट भी लग चुके हैं। काष्ट का काम भी मनोहरी बना है दरवाजो में काष्ट के साथ पीतल का अति सुन्दर काम हुआ है। देरासर जी के चारों ओर गढ सदृश्य परकोटा भी पूरा पत्थरों से बना है। मुख्य द्वार ही नही पर पूर्व बाजू का प्राचीन द्वार भी मकराने के पाषाण से आच्छादित हो गया है। एक अनुठी वस्तु और यहां सजाई जा रही है। सारे भारत के जैन तीर्थो के न केवल कलात्मक चित्र अपितु मूल नायक भगवंतों के मनोहारी चित्रों सहित तीर्थों का पूर्ण इतिहास भी करीब ३०० वर्ग फिट में लगाया जा रहा है। नई पीढी के लिये, नवागन्तुकों के लिये यह दीर्घा न केवल उपयोगी होगी अपितु तीर्थो के साक्षातकार के लिये प्रेरणास्पद भी होगी।

इस सारे कार्य के उपरांत भी जो काम बाकी रह गये है उन्हें पूरा कराने को समिति पूर्ण रूपेण प्रयत्नशील है। श्री सीमंधर स्वामी तीर्थ मेहसाना के सौजन्य से यहाँ परोपकारी श्री सीमंधर स्वामी जी की एक कलात्मक देरी व उसमें भव्य प्रतिमाजी स्थापित करने की योजना बन चुकी है और आशा है वह कार्य जल्दी ही प्रारम्भ हो जावेगा। मेहसाना पेढी से सोमपुरा (इन्जीनीयर) यहां आकर सारा प्लान बनाने की तैयारी कर गये है।

यह तो हुई सबके अपूर्व सहयोग एवं प्रयास से निर्माण कार्य की एक झलक। उससे भी बडी सुखद घटना इसी कालान्तर में अनायास ही और घट गई। चूँकि इस निर्माण कार्य की सुवास आस-पास के क्षेत्रों में खूब व्याप्त हो चुकी थी। इसी क्षेत्र के एक दूरस्थ गाँव से आमंत्रण मिला कुछ अति प्राचीन प्रतिमाओ को मालपुरा ले जाने के लिये। ऐसा अवसर भाग्य से ही मिलता है। क्षेत्र का प्रबल पुन्योदय जागृत हो चुका है यह वस्तुत: दैविक सदेश था। २१ इँची माप की विभिन्न तीर्थंकरों की १० प्रतिमायें जिनमे स्पष्टत: १००० वर्ष पुराने लेख अंकित है इस देरासर में ले आई गई और आज वहाँ विद्यमान है। इस प्रकार इन वर्षो मे इस तीर्थ के पुन: निर्माण पर करीब ७ लाख रुपया खर्च हो चुका है। जब केवल एक लाख रुपया खर्च हुआ था तब शासन के एक महान आचार्य श्री ने यहाँ की सारी कहानी सुन व जान कर पत्र द्वारा सूचित किया था कि इस तीर्थ पर ११ लाख रुपया लगेगा। उस वक्त यह

बात स्वप्नवत् लगती थी, पर यह लिखित भविष्य वाणी आज सही हो रही है, जैन शासन के कर्ण-धारों की बात सही उतरती ही है यह आज के युग का स्पष्ट प्रमाण है।

अभी वस्तुत हम इस काय के महत्त्व को नहीं समझ पा रहे है, पर प्रथम तो अधिष्टायक जागृत हैं दूसरे जिन गुरु भगवतो का पुन्य नाम इस क्षेत्र से जुडा हुआ है, उनका अपरोक्ष आशीर्वाद प्राप्त है। आज के प्रभावक गीताथ आचार्यों की प्रेरणा साथ ही उनकी निश्रा, देश के हर भाग की पेढीयो ट्रस्टो व सद्‌ग्रहस्थो का हार्दिक सहयोग इस काय मे मिला है और मिल रहा है। जिनसे सहयोग मांगा गया उनका तो सहकार मिला ही बल्कि जहाँ नही पहुच पाये वहाँ सामने मे आकर मुक्त के व्यय की भावना जाहिर की गई। इसी से तो समिति इस काय को इस स्तर तक लाने मे सक्षम बन सकी। इस काय की महत्ता से व्यक्ति ही प्रभावित हुए हो ऐसा नही कई पेढीयो ने इस काय हेतु पुन पुन दो-तीन बार आर्थिक सहयोग प्रदान किया है। शेठ आनन्द जी कल्याण जी पेढी ने तीन बार मे ६० हजार रुपये नाकोडा ने दो बार मे ७० हजार, सखेश्वर पेढी ने भी दो बार मे २५ हजार व एक हजार वर्ग फिट से भी उपर मकराना (पाषाण) की सहायता प्रदान की है। देश के हर प्रात यथा तामिलनाडु कर्नाटक, आध्र, महाराष्ट्र, गुजरात, बगाल मध्यप्रदेश, पजाब, दिल्ली, हरियाणा आदि सब जगह से आर्थिक सह-कार प्राप्त हुआ है। राजस्थान और जयपुर का तो यह पूण दायित्व था ही जिसे स्थानीय सघों और ट्रस्टों ने खूब उदारता से निभाया है।

देरासर की इस जीर्णोद्धार कहानी के साथ ही शुरू होती है समीप ही लगे विशाल किन्तु जीर्ण शीर्ण उपाश्रय की कहानी। एकदम खडहर स्थिति मे पडे इस उपाश्रय के विकास की कल्पना की भी नहीं जा सकती थी। पर इतना सुदर देरासर बन रहा हो और उसके समीप ऐसा खण्डहर उपाश्रय हो यह किसे अच्छा लगेगा। इस काय हेतु एक परिवार का सौजन्य मिला और एक छोटा सा उपाश्रय बन जावे इस हेतु ३१ हजार की राशी का आश्वासन भी। फिर क्या था, काम प्रारम्भ हुआ। यहाँ भी दो चमत्कार हुये जैसे ही उपाश्रय की नीवें खोदी गई नीचे से जैन देरासर के शिखर के खण्डहर, वे भी सुदर कलात्मक कारीगरी के एक नही बडी सख्या मे प्राप्त हुये साथ ही करीब ४०० वर्ष पुराना धान भी जली हुई हालात मे निकला। सोगानुयोग यहाँ कुछ पुरातत्वज्ञ पहुच गये और उन्होंने इन खण्डहरों को करीब १ हजार वर्ष पूर्व का बतलाया। उन्होंने शीलालेख देख कर यह भी कहा, ऐसा दिखता है यह मदिर कम मे कम एक हजार वष पुराना है और मुगल काल मे कभी आक्रमणो से ध्वस्त हुआ है और पुन निर्माण कराया जाकर १६७० सम्वत मे पुन प्रतिष्ठा कराई गई है। एक पुराने परिकर पर भी बहुत सुन्दर लेख उत्किर्ण है।

दूसरे यह उपाश्रय प्रारम्भ से (खण्डहर अवस्था मे) सम चोरस भुजाकार नहीं था। एक कोना दबा हुआ था। मदिर जी के जिर्णोद्धार के प्रारम्भ होने के साथ ही जब इस ओर ध्यान गया तो उसको सीधा कराने के लिये निकट के पडोसी से कीमत देकर जमीन क्रय कर उपाश्रय को सम चोरस बनाने का निश्चय किया गया था। काफी अच्छी रकम देने की तैयारी पर भी उस स्थान का मालिक जमीन देने को तैयार नहीं थे। मामला तब ही समाप्त मान लिया गया था। जब उपाश्रय का काय प्रारम्भ हुआ और पुरानी दिवारें गिरा दी गई तो वह कोना सब की आँखों में आया पर क्या किया जा सकता था? यकायक एक रोज अधिष्टायक देव की कृपा से उस जमीन के मालिक को प्रेरणा हुई वह स्वत आया और अनुरोध किया कि वह जमीन आप लेलें और उपाश्रय को चोरस

करा लेवे। यह ध्यान रहे उसके रहने के मकान का कौना तोड़ कर ही यह कार्य किया जा सकता था। उसने विनम्रता से इस जमीन के लिये कोई रकम लेने से भी इन्कार किया। निःशुल्क यह जमीन उपाश्रय को मिल गई। और देखते देखते यह उपाश्रय निर्मित हो गया। एक बृहत हाल और चार कमरों वाले इस उपाश्रय के निर्माण में करीव 1¼ लाख रुपया खर्च आ गया। स्थानिक कार्यकर्ताओं के असीम उत्साह को तोड़ना उचित न समझ कर इतनी राशी खर्च तो हो गई पर समस्या अर्थ की विकट हो गई। प्राप्त राशी से उपरोक्त बाकी सारी राशी मंदिर जी की लग चुकी थी जो बड़ी दुखद स्थिति थी।

समिति ने इस संकट से निकलने के लिये एक योजना बनाई जिसके अनुसार यह निश्चय किया गया कि २५० रु० के भाग्योदय पुष्प (टिकिट) निकाले जावें और जितने टिकट विके उनमें से प्रतिष्ठा समय में एक टिकिट का चयन कराया जावे। और जिस भाग्यशाली के नाम का टिकिट निकले उसका नाम इस 1¼ लाख से निर्मित पूरे उपाश्रय पर लिखाया जावे। यह भी तैय हुआ इस उपाश्रय का नाम 'श्री जगद्‌गुरु विजय हीरसूरी स्मारक भवन" रखा जावे। सब जगह इस योजना के परिपत्र भेजे गये और यह बतलाते अति प्रसन्नता है कि अब तक इस कार्य हेतु करीव ७० हजार रुपये के आश्वासन प्राप्त हो चुके हैं, और इस तरह यह एक बहुत बड़ा संकट हल होता दिखाई दे रहा है। भाग्योदय पुष्प की योजना अभी चालू है और कोई भी व्यक्ति २५० रु० भेजकर टिकिट प्राप्त कर सकता है तथा सवा लाख के उपाश्रय पर २५० रु० मात्र में अपना सुकृत नाम अंकित कराने का सौभाग्य प्राप्त कर सकता है।

समिति ने यह भी निश्चय किया है कि मंदिर जी के जीर्णोद्वार में एक हजार से ऊपर की राशी भेट करने वालों का नाम शीलापट्ट पर अंकित किया जावेगा साथ ही प्रतिष्ठा महोत्सव की कुंकुंम पत्रिका में भी निवेदकों में उनका नाम लिखा जायेगा। इसमें भी लाभ लिया जा सकता है।

यह सारी कहानी पढ़ व सुनकर आपका मन उद्वेलित हो रहा होगा यह जानने के लिये कि आखिर इतने वडे काम के बाद प्रतिष्ठा समारोह कव व किनके हाथों होगा। सब्र का फल मीठा होता है। जिस प्रतिष्ठा के लिये २-३ वर्षो से प्रयत्न था शायद विधि को यही मंजुर था कि अभी बहुत काम और होना है इसलिये जल्दी क्या है। वस्तुतः देरी इस भव्य देरासर के निखार के निमित्त ही हो रही थी ऐसा माना जावेगा। पर अब प्रतिक्षा की घड़ियाँ समाप्त प्रायः हो रही है। महान योगनिष्ट, तपस्वी प्रवचन कार राजस्थान के गौरव, शान्त स्वभावी, मृदुभाषी-आचार्य भगवंत विजय कलापूर्ण सुरीश्वरजी महाराज सा. ने समिति के सदस्यों एवं जयपुर संघ की खूब परीक्षा लेकर चातुर्मास के बाद गुजरात प्रदेश से पधार कर प्रतिष्ठा कराने की स्वीकृति प्रदान करदी है। इस समाचार से सब ओर से वधाई संदेश प्राप्त हो रहे हैं। समिति को पूर्ण विश्वास है कि जिस शालीनता से जीर्णोद्वार कार्य सम्पन्न हुआ है उसी भावना के साथ प्रतिष्ठा महोत्सव भी अवश्य सम्पन्न होगा। मालपुरा तीर्थ के अधिपती बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रत स्वामी भगवान एवं १५ जितनी अन्य भव्य प्रतिमाओं का प्रतिष्ठा महोत्सव जयपुर-स्थानिक व निकटवर्ती क्षेत्रों के संघो के सौजन्य से इस क्षेत्र का यादगारी समारम्भ बनेगा।

चातुर्मास लग चुका है, पर्वाधिराज की आराधना प्रारम्भ है, जल्दी ही चातुर्मास पूर्ण होगा और वे घड़ियां निकट दिखाई देगी जब जयपुर के समीप

मालपुरा मे यह ऐतिहासिक अवसर प्रस्तुत होगा। समिति ने जीर्णोद्धार की जिम्मेवारी निभाने का भरसक प्रयत्न किया है और वह गौरव करती है कि सारे देश से हमने खूब विश्वास व्यक्त किया गया है और उसी कारण यह देरासर जो खण्डहर था अपने अतीत के वैभव को प्राप्त हुआ है। ठोस मकराने के ५० फिट ऊँचे शिखर वाला यह देरासर इस क्षेत्र मे अपने ढग का अनूठा, गौरव युक्त शालीन व जैन शासन की ध्वजा को फहराने वाला बनेगा।

आईये, हम सब मिलकर इस प्रतिष्ठा महोत्सव के लिये अपने तन, मन धन का समर्पण करें जिन शासन के प्रति अपनी श्रद्धा व निष्ठा व्यक्त कर अपने को कृतार्थ करें।

जय मुनिसुव्रत स्वामी-जय जगद्गुरु
–जय मालपुरा

परमोपकारी निश्रादाता एवं प्रेरक

आ० देव श्री विजय रामचद्र सूरीजी म०सा०
" " " विजय धर्म सूरीजी "
" " " कैलाश सागर सूरीजी "
" " " कल्याण सागर सूरीजी "
" " " पद्म सागर सूरीजी "
" " " विजय कलापूर्ण सूरीजी "
" " " विजय कीर्तिचद सूरीजी "
" " " विजय भुवन भानु सूरीजी "
" " " विजय दक्ष सूरीजी "
" " " विजय सुशील सूरीजी "
" " " विजय विक्रम सूरीजी "
" " " विजय यशोदेव सूरीजी "
" " " विजय इन्द्रद्दिन सूरीजी "
" " " विजय विशाल सेन सूरीजी "
" " " विजय वर्धमान सूरीजी "
" " " विजय हीकार सूरीजी "
" " " विजय सूर्योदय सूरीजी "
" " " विजय हेमचन्द्र सूरीजी "
" " " जिनकाती सागर सूरीजी "
" " " दर्शन सागर सूरीजी "

पन्यास प्रवर श्री भद्रगुप्त विजयजी म०
" " " सूर्योदय विजयजी म०
" " " जिनप्रभ विजयजी म०
" " " राजशेखर विजयजी म०
" " " अशोक सागरजी म०
" " " महानन्द विजयजी म०
" " " अभ्युदय सागरजी म०
मुनि प्रवर श्री कलाप्रभ विजयजी म०
" " " धर्मगुप्त विजयजी म०
" " " गुणरत्न विजयजी म०
" " " केवल विजयजी म०
" " " कमल विजयजी म०
" " " चरणप्रभ विजयजी म०
" " " जय कुजर विजयजी म०
आ० देव श्री विजयश्री जयन्त श्री सूरीजी
साध्वी जी श्री विचक्षण श्री जी म०
" " " देवेन्द्र श्री जी म०
" " " निपुणा श्री जी म०
" " " ज्योति प्रभा श्री जी म०
" " " अमितगुणा श्री जी म०

बोध कथा

जिएँ तो जानकर जिएँ

—प्रो. श्री संजीव प्रचंडिया 'सोमेन्द्र'

जीने की कला ही जीवन है। जो सहज ही जीता है, वह कलाकार हो जाता है और जो बोझ में होकर जीता है, वह जीने का नाटक करता है। जीता नहीं है। वह अपराधी बन जाता है। एक घटना मुझे स्मरण हो आती है। इस घटना से समस्या समझी जा सकती है।

एक बार गांधी जी ने अपने शिष्यों से पूछा, "तुम्हें कोई गाल पर एक चांटा मारे और तुम बिलबिला जाओ तो क्या करोगे ?" कुछ का उत्तर स्पष्ट था, "हम उसे भूनकर रख देंगे" "हम उसे यह कर देंगे, वह कर देंगे।" महात्मा जी हंसने लगे। संत थे सो मूर्खता पर हंसी आ गयी। संयत हो बोले, "नहीं आप लोग मेरे शिष्य नहीं दिखते। मेरे शिष्यों में सहिष्णुता का अभाव भला कैसा ? कहीं मुझ में तो यह अभाव नहीं। खटका ! मन में शंका जाग पड़ी। तभी किसी जागरूक-कार्यकर्त्ता ने महात्मा जी का ध्यानाकर्षित किया, बोला, "आप इसका मार्ग बताइए।" गांधी जी मुस्कराते हुए बोले, "प्यारे शिष्यों ! तुम अपना दूसरा गाल भी उसी ओर कर लो। शिष्य भौंचक्के रह गए। इस घटना को कुछ ही दिन बीते होंगे कि गांधी जी के एक शिष्य पर किसी उत्साही ने गाल पर एक चांटा जमा दिया। हंसते हुए शिष्य ने दूसरा गाल भी उसी ओर कर दिया। उसे गांधी जी की बात स्मरण हो गयी। उत्पाती बड़ा खुश था। उसने दूसरे गाल पर भी एक जोरदार चांटा जमा दिया। शिष्य थोड़ी देर रुका और फिर अपने हाथ से उस उत्पाती के गाल पर एक चाटा जमकर मार दिया। उत्पाती हैरान हो गया। हैरान होना सुनिश्चित था। बोला, "तुम तो गांधी जी के शिष्य हो न ! तुमने हमारे चांटा क्यों मारा ? तुम तो सहिष्णुता के सच्चे पुजारी होने चाहिए।" शिष्य ने कहा, "मेरे पास दो गाल थे। दोनों गालों पर मैंने चांटे की मार खाली तो तीसरा गाल तो उत्पाती मित्र तुम्हारा ही था, सोचा इस कमी को मैं ही पूरा कर लूं।" सहिष्णुता केवल सहन प्रक्रिया ही नहीं है बल्कि यदि कोई हिंसक, अमानुष या उत्पाती की तरह उद्दण्डता फैलाता है तो उसको सबक सिखाने के लिए मारना भी आवश्यक है। अन्यथा, जिसे आप सहिष्णुता कहते हैं, वह सहिष्णुता नहीं है, अमानुष है। नासमझी है। अपराध है। पाप है। अतः जीना तभी सार्थक है जबकि आप जानकर जिएं, बोझिल होकर नहीं।

पृष्ठ 33 का शेष

रत्नावली ने वृद्धावस्था आने पर जैन धर्म अंगीकार कर लिया और अपना पूरा समय तपस्या में बिताने लगे। समय आने पर राजा ने दूसरे राजा के चुनाव की घोषणा की और नया राजा बनने पर उन्होंने दीक्षा अंगीकार कर ली। समय आने पर अपना आयुष्य पूर्ण कर देवगति को प्राप्त हुए।

अन्यायोपात्त वित्तस्य- दानमत्यन्तदोषकृत् ।
धेनु निद्रव्य त्मासैध्व क्षिणायिवत्तपणम् ॥

—आचार्य श्री विजयइन्द्रदिन्नसूरिश्वरजी म सा

मार्गानुसारिका प्रथम लक्षण न्याय सम्पन्न-विभव के गुणो मे प्रथम गुण जिसको नीति-अनीति का द्रव्य का प्रभाव बताते हुए उपरोक्त गाथा से सिद्ध करते हैं कि अन्याय से प्राप्त किया हुआ धन दान देने मे भी दोष ही पैदा करता है। जैसे—गौ को मारकर के उस माम से कौवे को खिलाने जैसा है। अपने जैन शास्त्रो मे मार्गानुसारी के ३६ गुणो में प्रथम गुण न्याय सम्पन्न विभव आता है। न्याय यानि शुद्ध व्यवहार याने उसमे यह लोक और परलोक हित-कल्याण होना है। द्रव्य प्राप्ति का उत्कृष्ट और रहस्य भूत उपाय ही है।

अन्याय से व्यवहार की प्रवृत्ति करन मे द्रव्य का लाभ होवे या न भी होवे परन्तु परिणाम में हानि तो निश्चित होती है। अन्याय से व्यवहार प्रवृत्ति करने वाले कोई पुण्यानुबन्धी पुण्य के उदय वाले जीव को द्रव्यलाभ होता है, परन्तु उस अन्याय प्रवृत्ति मे बान्धा हुआ पाप निश्चित अवश्यमेव अपना फल दिये बिना पाप का समापन नही होता। अन्यायोपार्जित द्रव्य से आलोक और परलोक मे भी कारण है, उसमे शका नही है। सब अपनी अन्तरात्मा को पूछ लो तुम स्वयं धन पैदा कर रहे हैं, नीति से या अन्याय से, स्वय विचार करो अन्याय से उपार्जन किये हुए पैसे से जीवन भ्रष्ट होता है। आज के गृहस्थो और राजाओ से लेकर बडे-बडे राज काज करने वाले अधिकारी, छोटे से लेकर बडे तक सभी मे परिवर्तन आ चुका है। अपने-अपने धर्म व कर्त्तव्य को भूल रहे दिखाई देते हैं उसका निश्चित कारण अनीति द्रव्य का अन्न पेट मे जाना है। यहा यह दृष्टान्त आता है।

अनीति द्रव्य का क्या प्रभाव पडता है। एक राजा को महल बनाना था। नीव के मुहुत के दिन राजा ने सभा बुलाई। राजमहल बनने वाला था, बडे बडे माने हुये मन्त्री आदि उपस्थित थे। आना स्वाभाविक था, कारण राजमहल बनने जा रहा था। उसमे एक ज्योतिषी भी बुलाया गया। ज्योतिषी ने कहा पाच सोने की मोहरें चाहिये। राजा ने कहा अपने पास विशाल खजाना है। खजाने से जितनी चाहिये उतनी आप ले सकते हैं। ज्योतिषी ने कहा नीव मे डालने के लिये तो न्याय का द्रव्य चाहिये। अन्याय, अनीति का द्रव्य नीव मे डाला जाय उसका असर बुरा होगा, महल लम्बे समय तक नही टिकेगा। राजा ने सोचा इतनी बडी सभा है। इसमे किसी के पास से पाँच गिन्नी तो मिल जायेगी ऐसा सोचकर राजा ने हुकम लगाया कि सभा में से कोई भी विना सम्पन्न वैभव वाले है वे अपने घर से पाच सोना मोहरें ले आवें।

अपने मे कहावत है कि 'आप जाने पाप, मा जाने बाप" अर्थात् लडके का सच्चा पिता कौन है यह तो मा ही जानती हैं और अपने दिल ले क्या-क्या पाप किये हैं वे स्वय जानते हैं अथवा ज्ञानी भगवान सभी के पाप पुण्य जानते हैं। सभी

राजसभा में आये हुए सभासदों के मस्तक नीचे झुक गये थे, तब राजा ने सोचा "जैसा मैं हूं वैसी मेरी प्रजा। किसी ने राजा को कहा अमुक सद्‌गृहस्थ के पास नीति का धन मिलेगा। परन्तु वे सब के बीच आये नहीं है। राजाने अपनी गाड़ी भिजवाकर राजकर्मचारी से उन्हें बुलाने भेजा। सज्जन भी राजकर्मियों के साथ राजा के पास आ गये। हाथ जोड़ राजा से प्रार्थना की क्या हुआ है। राजा ने कहा कि आप सज्जन के पास से पांच सोना मोहरे चाहिये। सज्जन ने कहा मेरे नीति का धन है परन्तु महल के नींव मे डालने के लिये मैं नही दे सकता हूं, कारण कि महल बनेगा उसमें आप बड़े आदमी हो, विषय भोगों का महल स्थान बनेगा, बड़ी-बड़ी महफिलों में नाच होगा, मदिरा-मांस की मनुहार होगी, सत्ता के आधार पर बिना गुनाह किये हुए निर्दोष व्यक्ति को पीड़ित करेंगे। इस महल में मेरा द्रव्य न लगेगा, मेरे को क्षमा करें। अपनी प्रजा स्वयं राजा के पास ऐसे स्पष्ट बोलने की हिम्मत करें यह देख राजा भी आश्चर्य मे डूब गया। क्रोधवश लल आंख करके कहा 'अरे-सबके बीच इन सज्जन को बोलने का भी ख्याल नही। सोना मोहरें देनी है या नहीं ? ज्योतिषी उसी समय बोल उठा अब तो उसमे आप जबरन पैसा, यानी मोहरे लेंगे तो वो भी अन्याय की होगी। जबरन पैसा लेना अन्याय है। बातो-बातो में ही नीव का मोहरत का समय समाप्त हो गया। राजा ने सोचा ज्योतिषी सच्चा है। परन्तु ज्योतिषी की नीति अनीति की बातें सही है या नही उसकी परीक्षा करनी है। इस तरह विचार करके उन सज्जन की एक मोहर और राजा की एक मोहर दोनों मोहर मंत्री को दी।

मंत्री ने विचार किया कि नीतिवान सेठ की मोहर नीति से प्राप्त हुई ही है उस मोहर को भी पापी के हाथ मे रखूं उसका क्या असर होता है वह मेरे को मालूम पड़ेगा ऐसा सोच प्रातःकाल उठ अपने निवासी बाग मे चल पड़ा। एक मच्छीमार मछलियों को मारकर टोकरी भर लेकर जा रहा था उसके हाथ एक सोना मोहर पकड़ा दी। मछलियां बेचकर चार:छ आना कमाने वाला मच्छीमार ने अचानक एक सोना मोहर मिलने पर विचार किया आज मेरे को कमाने की जरूरत नहीं है। मच्छीमार बहुत खुशी था। टोकरे मे जो मछली थी उसको पानी में डाल दी और मछली पकड़ने की जाल भी पानी में डाल दी हमेशा-हमेशा के वास्ते। वापस वहां से सीधा बाजार में गया, अनाज लिया, घी लिया, और भी चीजें ली कुल एक रुपया लगा दिया। व्यापारी ने 14 रुपये वापस दिया। नीति का पैसा आने पर मच्छीमार के दिल में परिवर्तन हुआ अब मैं ऐसा पाप का धन्धा नही करुंगा और कोई धन्धा कर लूंगा ऐसा सोच उसने मछली पकड़ का धन्धा छोड़ दिया। उसके कुटुम्बियों को भी नीति का पैसा खाने से ऐसा पाप का धन्धा न करने की समझ आई। यह था, नीति का प्रभाव तथा दूसरी मोहर जो राजा की थी वो लेकर मंत्री गंगा के किनारे चला गया वहां एक योगी समाधि में बैठे थे उसके सामने एक मोहर रख दी। योगीराज योग में लीन थे उनका मुंह तेजस्वी था, योगी जब समाधी से उठे धीरे से सामने पड़ी सोना मोहर उठा ली। सोना मोहर चमक रही थी। योगी ने सोचा सूर्य का उदय हो गया। योगी के हाथ में मोहर आ गई थी उसके प्रभाव से दिल में परिवर्तन हो गया। योगी सोचने लगा गांव के लोग तो खाने-पीने को पैसा भी नही देते सो सोना मोहर की बात ही क्या। समाधी के आधार पर भगवान का दिया फल ही है। योगी ने कभी सोना मोहर देखी नहीं थी।

योगी मोहर लेकर बाजार गया। गांजा पीया मस्त हो गया। 40 वर्ष की तपस्या योगीराज की

पानी मे जाने लगी। दिल मे विचार आया चलो दुनियाँ का रँग-ढग देखें जो आज तक न देखा है। ऐसा विचार कर वेश्या के वहा गये और अपना जीवन उनके साथ अनाचार करके खतम किया। यह है अनीति के धन का प्रभाव।

अनीति के पैसे से योगी भी भोगी बन सकते है तो साधारण व्यक्ति की बात बहुत दूर की है। एक ध्यान देने योग्य बात भी है कि नीति का पैसा प्राप्त करने की गति धीमी होती है। और खर्च की गति भी धीमी ही होनी है। अनीति का पैसा प्राप्त करने की गति तीव्र होती व खर्च की गति भी तीव्र होती है। यही नीति अनीति का लक्षण है। नीति का रग सफेद होना है। अनीति का रग काला होना है। अनीति मे भय, नीति मे निर्भयता का समावेश होता हैं तथा नीति से नीति का व अनीति से अनीति का ही जन्म होता हैं।

सम्यक् क्रिया तथा उसका फल

जह खलु भुसिर कट्ठ, सुचिर सुक्कु लहु डहइ अग्गी।
तह खलु खवति कम्म, सम्मच्चरणे ठिया साहू ॥ आचाराग निर्युक्ति।

जिस प्रकार पुराने, खोखले, अच्छी तरह से सूखे काठ को आग जल्दी ही जला देती है, उसी प्रकार सम्यक आचरण करने मे तत्पर साधु (साधक) कर्म को शीघ्र जला देता हैं।

जह खलु मइल वत्थ, सुज्झइ उदगाइएहि दव्वेहि।
एव भावुवहाणेण, सुज्झए कम्मट्ठविह ॥ आचाराग नियुक्ति ॥

जिस प्रकार मैला कपडा जल आदि शोधक द्रव्यो स धोने पर शुद्ध हो जाता है, इसी प्रकार आध्यात्मिक तप आदि साधना द्वारा आत्मा ज्ञानावरणीयादि आठ प्रकार के कर्मों से शुद्ध हो जाती है।

सजमहेऊ जोगो पउज्जमाणो अदोसव होइ।
जह आरोग्गणिमित्त, गडच्छेदो व विज्जस्स ॥ वृहत्कल्प भाष्य।

सयम के हतु की जाने वाली मानसिक, वाचिक, कायिक प्रवृत्ति वैसे ही निर्दोष होती है जैसे कि वैद्य के द्वारा किया जाने वाला व्रण-फोडे का ओपरेशन निर्दोष होता है, क्योंकि वह ओपरेशन आरोग्य का कारण है।

बालमुनि इन्द्रसेन विजय जी म

धर्म साधना का बंधन आवश्यक है

आचार्य श्री पद्मसागर सूरिश्वरजी म० सा०

विचारों की भीड़ में यदि हम आत्मा को खोजें तो वह नहीं मिलेगी। आत्मा खोजने के लिए हमे धर्म साधना का बंधन अपनाना पड़ेगा। हमने जीवन के अन्य बन्धनों को तो स्वीकार कर लिया हैं किन्तु धर्म साधना का बन्धन स्वीकार नहीं किया। जिन्दगी मे बंधन शाश्वत है, गर्भ के बन्धन में जीव नौ महीने बन्धक की स्थिति मे रहता है। युवावस्था तक पिता की इच्छाओं के बन्धन मे रहता है। फिर इस बन्धन के प्रकार में परिवर्तन आता है किन्तु बन्धन मृत्यु पर्यन्त रहता है। जेल मे भी बंधन है जीवन मे भी बंधन है। एक बार मै एक जेल मे कैदियो को प्रवचन देने के लिए गया। मुझे लगा कि जेल के कैदी भी जीवन के कैदियो की तरह ही जीवन बिता रहे हैं। जेल के कैदयो को प्रवचन देकर जब मैं बाहर आ रहा था तो कुछ पुराने कैदी शिष्टता के नाते मुझे छोड़ने गेट तक आए। वहा एक नया कैदी अन्दर दाखिल हो रहा था। आने वाला कैदी जेल के भावी वातावरण का अहसास कर रो रहा था। पुराने कैदियो ने रोते हुए नये कैदी को सात्वना दी, उसके आसू पोछे एव तालियां बजा-कर उसका स्वागत किया। जेल के नये कैदी की तरह ही जीवन के नये कैदी की भी यही कहानी है। धर्मराज का गुनहगार बालक इस संसार रूपी जेल मे जब दाखिल होता है तो वह भी नये वाता-वरण के डर से रोना प्रारंभ करता है और हम इस संसार के पुराने कैदी इसका थालिया बजा बजा कर स्वागत करते है, उसके आसू पोंछते है। वही बालक फिर मृत्यु पर्यन्त के लिए इस जीवन रूपी जेल के पराधीन बंधन में फंस जाता है। इस भागती हुई गाड़ी को सिर्फ धर्म साधना का बंधन रूपी ब्रेक ही संतुलित रख सकता है।

इन्द्रिय निग्रह

यदि धर्म साधना करना है तो इन्द्रियों पर निग्रह करना जरूरी है। इन्द्रियों पर अनुशासन में भी सबसे पहले जिव्हा पर नियंत्रण करना पड़ेगा। फिर विचार करना पड़ेगा कि मुझे क्या सुनना है? मुझे क्या देखना है? हम बहुधा अपने को नही देखते है और पराये पर अंगुली उठाने में नहीं चूकते पर ऐसा करते वक्त भूल जाते हैं कि पराये पर एक अंगुली उठती है तब तीन अंगुलिया खुद की ओर स्वतः ही उठ जाती है। इसलिए पर दोष झांकने की बजाय स्वदोष पर ध्यान देना पड़ेगा। इन्द्रिय निग्रह के लिए हमें यह नियम लेने होंगे। उन यम नियमों पर दृढ़ता कायम रखनी होगी। आमतौर पर हम उस दृढ़ता पर कायम नही रहते। हम उन यम नियमो मे से रास्ता, गलियां निकाल लेते हैं। धर्म के पेकिंग में भी अधर्म का माल मिला लेते है। सेठ मफतलाल ने प्रतिज्ञा ली कि मैं झूठ नहीं बोलूंगा। प्रतिज्ञा लेकर वे घर पहुंचे और एक पठान उगाही करने पहुंच गया और मफतलालजी को आवाज दी। आवाज सुनकर श्री मफतलालजी घबराये और अपनी पत्नि से कहा तुम जाकर पठान से कह दो मफतलाल घर मे नही है। पत्नि ने कहा। तुम झूठ बोलोगे? प्रतिज्ञा

तोडोगे ? मफतलालजी ने कहा पगली झूठ मुझे थोडेही बोलना है बुलवाना है। मैंने झूठ न बोलने की प्रतिज्ञा ली है कोई बुलवाने की थोडी ली है। यह है हमारी दृढता का नमूना। जब तक यम नियम मे दृढता आएगी नही, वाणी मे पवित्रता आएगी नही, हम गलत बोलना व सुनना छोडेगें नही, तब तक इन्द्रियो मे अनुशासन आएगा नही। ऐसे मे की गई कोई भी साधना सिद्धि का कारण नही बन सकती।

नाहम् स्थिति की साधना

जो धर्म साधना अहं के साथ होती है वह विकास मे बाधक होती है। हमारी दृष्टि गुण ग्राहकता की होनी चाहिये जब कि हम सिर्फ आलोचना करने से ही बाज नहीं आते। साम्प्रदायिक सकीर्णताओं के चक्कर मे हम भूल जाते हैं चिल्लाते हैं कि मैं धर्मात्मा हू मेरा धर्म ऊचा हैं हालाकि उनमे अभी तक धर्म भाव पैदा ही नही हुआ,। मौहल्ले में नये आए हुए बडे मिया एक दिन अपनी बीवी से झगड पडे। और झगडे भी तो ऐसे कि गली तक आ गये। मौहल्ले वाले सारे इकट्ठे हो गये और बोले मियाजी क्या बात है ? मियाजी ने बताया यह कहती है मैं लडके को डाक्टर बनाऊगी डाक्टरी का धधा ऊचा है और मैं कहता हू उसे वकील बनाऊगा क्योंकि वकालात का पशा ऊचा हैं। मौहल्ले वालो ने कहा हुजूर तो इसमे लडाई की क्या बात ह ? लडके से ही पूछ लेते हैं कि उसे क्या बनना हैं। बडे मिया ने कहा—अमा अभी तो लडका पैदा ही कहा हुआ ? यह तो कौनसा धधा बडा है उसकी लडाई है। इसी प्रकार जिनमे धर्म भावना अभी पैदा ही नहीं हुई वे लोग किसकी सम्प्रदाय ऊची इस बात की लडाई लड रह हैं यह कितने ताज्जुब की बात है। और फिर क्या धर्म टकराव की स्थिति पैदा करता है ? नही, धर्म तो कहता ह नमो लोए सव्व साहूण। यानी जगत के सभी साधुओ को मेरा नमस्कार। तो फिर टकराव कौन करता है। आज हमारी भाषा इतनी विकृत होती जा रही है कि कही हम महामत्र मे परिवर्तन न कर दें णमो लोए मम साहूण। इसलिए टकराव धर्म नही करता हम करते है सम्प्रदायो की सकीर्णता मे। आवश्यकता है विचारो मे विशालता लाने की, सकीर्णता एव अहम् समाप्त करने की।

साधना का स्वाद

बडा बनने के लिए बहुत प्रतिकूल सयोग को भी मित्रता के रूप मे स्वीकार करना पडेगा। श्रम सिद्धि करनी पडेंगी। अनवरत प्रयास करने पडेगें। भागीरथ प्रयत्न करने पडेगें तब कहीं जाकर साधना का स्वाद मिलता है। एक बार एक सज्जन स्वादिष्ट आग्रह कर दही बडे को खाकर तृप्त हुए व तारीफ करने लगे वाह दही बडे का क्या स्वाद है ? दही बडे ने तपाक से प्रतिवाद किया, जनाब यह मेरी साधना का स्वाद है। इसकी प्राप्ति के लिए मुझे कितना दर्द, कितना अपमान, कितनी वेदना सहनी पडी है। पहले हम मूग और चवले कहलाते थे। हमे अपनी मर्दानगी पर गर्व था। फिर हमे इस स्वाद की खातिर दाल बनना पडा हम स्त्रीलिंग कहलाए। फिर पौष माह की जान लेवा ठण्डी रातो मे हमे सारी रात ठडे पानी के बर्तन मे डुबो कर रखा गया। सवेरे मेरे शरीर के छिलके २ उतार दिये गये। मुझे पत्थर की सिल बट्टो मे पीसा गया। फिर उबलते हुए तेल मे डालकर तला गया। इतने सारे कष्टो को सहने के बाद आप मुझ दही बडे के स्वाद की तारीफ करते हैं। वास्तविकता मे यह तो मेरी साधना का स्वाद है। इसी प्रकार इन्सान भी साधना के दौर से गुजर कर ही प्रशसा योग्य बनता हैं।

वीतराग दृष्टि

आज हम वीतराग प्रभु की उपासना करने की बजाय सम्प्रदायों की दुकानदारी मे उलझे हैं।

मंगलमय जिन शासन की प्रभावना गौण हो गई है और हमारी तथाकथित दुकानें ऊंची हो गयी है। एक जगह मैं गोचरी लेने गया। वहां प्रथम ग्रहित होने के अधिकार का वडा विचित्र सवाल पैदा हो गया। दूध ने सर्वप्रथम अपने ग्रहण किये जाने का अधिकार प्रस्तुत किया तो दही ने कहा 'सुगन मुझसे लिया जाता हैं इसलिए महाराज के पात्र में ग्रहित होने का अधिकार मुझे है"। घी ने कहा "भोजनस्य घृतं स्वाद - अतः बरीयता मेरी है"। मक्खन ने कहा "मंथन कर के मुझे निकाला जाता है और स्निग्धता मेरा गुण है इसलिए वडा मैं हूं। छाछ ने कहा "तुम सबको खाकर जब अपच हो जाता है तो मैं पाचन कराती हूं। अतः वरिष्ठता मेरी है। इन से थोड़ी दूर खड़ी गाय के आंख से टप टप कर निकल रहें आंसू कह रहे थे "तुम सब लघुता वरीयता के चक्कर में व्यर्थ झगड़ रहे हो जब कि तुम सबकी जननी मैं हूं। इसी प्रकार आज हम भी झगड़ रहे है कि मेरी सम्प्रदाय वड़ी है; मेरी सम्प्रदाय ऊंची है, मेरी सम्प्रदाय पुरानी हैं यह सब हमारी दृष्टि का विकार है। सर्वोच्च वरिष्ठता तो जिनेश्वर प्रभु के जिन शासन की है। इसलिए कहता हूं मिथ्या दृष्टि वदल दीजिये सृष्टि स्वय में वदल जाएगी। विचारों की विषाक्तता समाप्त कर दीजिये मृत्यु स्वयं ही महोत्सव बन जाएगी मृत्यु स्वयं मंगल मय हो जायेगी।

श्रवण धर्मिता

प्रवचन आरोग्य पथ्य है Devine Medicine है। इसके द्वारा गुरुजन धर्म भाव का अमृत पान कराते है। हर श्रोता की अपनी अपनीं श्रवण ग्राह्यता होती है। कुछ श्रोता दिखाने के तौर पर रस्म अदायगी करने हेतु प्रवचन में आते है तो कुछ परम जिज्ञासु श्रोता भी होते हैं। जो चाहते है कि जिन शब्दों में आत्म वेदना का पश्चाताप हो मुझे वे ही शब्द चाहिये। कुछ रसिक श्रोता चाहते हैं कि वाणी का यह व्यापार उनकी धर्म साधना का प्रतीक वन जाए। ऐसे श्रोता ही प्रवचन का सही आनंद ले पाते है।

मणिभद्र के लेखकों से विनम्र निवेदन

यह तो सर्वविदित है कि प्रतिवर्ष भगवान महावीर वांचना दिवस पर "मणिभद्र" प्रकाशित किया जाता है जिसमे आचार्य भगवन्तों साधु-साध्वी वृन्द एवं विद्वान मनीषियों की मौलिक रचनायें संकलित होती है। लेख भेजने हेतु प्रति वर्ष निवेदन पत्र प्रेषित किए जाते है। लेकिन गुरु भगवन्तो के चातुर्मासिक स्थानों की जानकारी के अभाव मे यथा समय पत्र उनकी सेवा में नहीं पहुंच पाते।

अतः पुनः विनम्र निवेदन है कि जो भी अपनी रचनाएं प्रकाशनार्थ भिजवाना चाहें वे कृपया अधिकतम श्रावण मास के मध्य तक अवश्य भिज-वाने की कृपा करें।

चिंतन की चिनगारी

□ मुनि श्री रत्नसेन विजय जी म सा

सम्यग् दर्शन अनिवार्य है !

भारत के तीन मित्र अमेरिका में घूमने गए। अमेरिका मे कोई रिश्तेदारी तो थी नही अत वे न्यूयाक के सुप्रसिद्ध होटल मालिक के पास गए। वह १०० मजिल का सुप्रसिद्ध होटल था। हर प्रकार की साधन-सामग्री उपलब्ध थी। तीनो मित्रों ने होटल मालिक से १० दिन तक ठहरने के लिए Room की माग की। लबी मुद्दत होने से उन्हें १०० वीं मजिल का Air-Conditioned Room किराये पर मिल गया।

दिन भर तो वे मित्र नये-नये प्राकृतिक स्थलो के भ्रमण मे बिता देते थे और रात को सोने के लिए Room पर आ जाते थे। भले ही १०० वी मजिल पर ठहरे थे, किन्तु आखिर तो Lift में ही जाना था अत उन्हें कोई तकलीफ नही थी।

एक दिन वे घूमने के लिए बहुत दूर गए और लौटते समय रात के १२ बज गये थे। गाडी मे से तुरन्त बाहर निकलकर वे Lift के पास आए। पास मे ही Lift man सोया हुआ था मित्रो ने उसे जगाया और बोले Lift चालू करो हमे ऊपर जाना है।

Lift man ने कहा So ry Please Lift खराब हो गई है अत Lift से आप नहीं जा सकेंगे।

इस बात को सुनकर तीनो मित्रों को खेद हुआ। आखिर तीनो ने सोचा 'अब तो सीढिया से चलने के सिवाय दूसरा कोई चारा ही नहीं है। एक मित्र बोला-चलो ! बात करते-करते पहुच जाएगे ! बस इस प्रकार निर्णय कर तीनो मित्र सीढियो से चढने लगे, एक मित्र ने सुन्दर कहानी (Story) प्रारम्भ कर दी जिसे सुनने में दोनो मित्र इतने तल्लीन हो गए थे कि उन्हें मार्ग कटने का पता ही न चला, उसकी कहानी पूरी होने होते तो वे ४० मजिल पार कर गए। फिर दूसरे मित्र ने जासूसी कहानी चालू कर दी और उस कहानी को पूरी करते करते तो वे ९५ वीं मजिल तक पहुच चुके थे। अब मात्र पांच ही मजिल बाकी थी। अब तीसरे मित्र की बारी थी। दोनों मित्रो ने कहा भाई। जो कुछ कहना हो Short मे कह देना।

उसने भी कहा-यार मेरी कहानी बहुत छोटी है।

अरे कह दो न, जो कहना हो वह।

'Room की चाबी का बेग गाडी मे भूलकर आ गया हू।' उसने अपनी बात सक्षिप्त में कह सुनाई।

उसकी इस बात को सुन दोनों मित्रो को अत्यत दु ख हुआ। इतनी मेहनत कर यहाँ तक पहुचे और सब मेहनत निष्फल गई।

यह मुझे इसलिए याद आ गई कि बेचारी अभव्य और दूर भव्य की आत्मा ज्ञान और चरित्र की उत्कठ साधना तो करती है किन्तु सम्यग् दर्शन की चाबी उसके पास न होने से उसकी की कराई मेहनत निष्फल हो जाती है।

सम्यग् दर्शन रहित ज्ञान और चरित्र, आत्मा को मुक्ति दिलाने में संभव नही। जब तक सम्यग् दर्शन की चाबी हाथ नहीं लगेगी, तब तक किया गया अन्य प्रयत्न सार्थक सिद्ध नही हो सकेगा, अतः उसकी प्राप्ति के लिए सर्वप्रथम प्रयत्न करना चाहिये।

आदर्श ऊंचा रखें

विहार-यात्रा में मैं जंगल से प्रसार हो रहा था। चारो ओर प्रकृति का सुहावना वातावरण था, अच नक मेरी नजर आकाश की ओर गई। देखा-खुले आकाश में एक गिद्ध ऊँची उडान भर रहा था, देखते ही देखते वह इतना ऊँचा उड़ गया कि अब तो वह स्वच्छ आकाश में एक श्याम धब्बे की भांति ही दिखाई दे रहा था। मैंने सोचा 'वह इतनी ऊँची उड़ान भर रहा है तो उसका आदर्श कितना ऊँचा होगा! परन्तु ज्योही मैंने उस गिद्ध को एक क्षण में नीचे आते हुए देखा तो मेरी वह मान्यता भ्रमित सिद्ध हो गई। ओहो। उस गिद्ध की उड़ान कितनी ऊँची है! किन्तु उसका लक्ष्य कितना नीचा है? इतनी ऊँची उड़ान के बावजूद भी वह भूमि पर पड़े मुर्दे की ही शोध कर रहा है। मुर्दे को देखते ही वह नीचे आ जाता है और उस पर टूट पड़ता है।

पद ऊँचा किन्तु लक्ष्य नीचा!

जरा हम भी अपने हृदय को टटोलें!

गिद्ध की ऊँची उड़ान की भांति उच्चतम धर्म क्रियाएं करते हुए भी हमारा लक्ष्य नीचा तो नही है?

हमें नीचे से ऊपर उठना हैं। गिद्ध की भांति ऊपर से नीचे नहीं आना हैं। अतः हमें अपना आदर्श ऊँचा रखना चाहिये।

परमात्मा की पूजा करें, सद्गुरु को दान देवें अर्थात अन्य कोई धर्माचरण करें किन्तु यदि उन धर्मानुष्ठान के फलस्वरूप किसी प्रकार के सुख की आकांक्षा करें तो हमारे धर्मानुष्ठान का हमें कोई धार्मिक लाभ नही है।

सदैव कीचड में ही मस्त रहने वाले उस सुअर को आप सुंदर उद्यान मे भी छोड दोगे तो भी वह वहाँ पर गंदगी की खोज करेगा। बगीचें के खुशबूदार वातावरण में उसे किसी भी प्रकार का आनंद नही आएगा।

लोभ में सब खोया

महाराजा की राज सभा खचाखच भरी हुई थी। तभी एक आशुकवि ने राज-सभा में प्रवेश किया। राजकीय और सामाजिक परिस्थिति के अनुरूप आशुकवि ने इस प्रकार कविता बनाई कि जिसको सुनते ही महाराज भावविभोर हो गए। प्रजा में चारो ओर आनद की लहर फैल गई। सुप्रसन्न बने महाराजा ने खजांची को आदेश दिया कि दस से ग्यारह बजे तक भंडार खुले कर दो और यह कवि जितना ले जा सके, ले जाने दो।

महाराज की आज्ञा सुनते ही खंजाची ने भंडार के द्वार खोल दिये।

कवीश्वर भी अत्यत प्रसन्न थे, महाराज की कृपा का पान करने का यह सर्वश्रेष्ठ सुअवसर था।

धन को उठाने के लिए कवीश्वर के पास कोई साधन नही था अतः वह दौड़ता हुआ बाजार में गया और सस्ते से सस्ती जीर्ण शीर्ण एक झोली खरीदकर ले आया।

कवि खजानें में पहुच गया।

सामने ही चादी के सिक्के दिखाई दिए, उसका मन भर आया और वह जल्दी से अपनी झोली भरने लगा। किन्तु ज्योंही उसने अपनी झोली भरी इसकी नजर पास में पड़े सोने के सिक्कों पर जा गिरी। कवि की लोभवृत्ति जाग्रत हो गई, उसने अपनी झोली खाली कर दी और अब उसे सोने के सिक्कों से भरने लगा।

लेकिन ज्योंही झोली भर देता है उसकी नजर पास में पड़े हीरों के ढेर पर जा गिरती है। और अदर से आवाजें आती हैं-हीरे को छोड सोना क्यों उठाता है? और उसने अपनी झोली वापस खाली कर दी और अब उसे हीरों से भरने लगा। घडी में बराबर 10 58 हो चुके थे, अब एक ही मिनिट की देरी थी। खजाची सम्राट की आज्ञानुसार द्वार बद करने के लिए तैयार खड़ा था।

ठसाठस भरी हुई उस झोली को वह उठाने जाता है, वजन काफी था। झोली जीर्ण थी। ज्योंहि वह झोली को कन्धों तक उठाता है, वह थैली फट जाती है और सब हीरे भूमि पर बिखर जाते हैं।

घडी में ग्यारह बज चुके थे खजाची कवि को बाहर आने की आज्ञा करता है। बेचारा कवि। खाली हाथ बाहर लौटता है।

अपनी लोभवृत्ति के कारण वह कुछ भी पा न सका और प्राप्ति काल के सुअवसर को खो देता है।

मानव जीवन के ये क्षण कितने अमूल्य हैं? इन अमूल्य क्षणो में से तो मानव अपने शाश्वत जीवन का सर्जन कर सकता है किन्तु लोभवृत्ति उसको बेहाल कर देती है।

मानव अपने पुरुषार्थ से अमाप समृद्धि इकट्ठी करता है किन्तु ज्योंही उसे उस कवि की भांति खजाने से बाहर निकलने का समय आता है त्योंही उसका जारदाना फट जाता है, और वह बेचारा! यहाँ से खाली हाथ विदाई ले लेता है।

किन्तु इस तत्वज्ञान को कौन समझे?

कुल को कलंकित क्यों करूं

एक सरोवर के किनारे अनेकों जाति के पक्षी रहते थे। सभी पक्षियों के बीच परस्पर मैत्री और प्रेम था। वे एक दूसरे के हित की सदैव चिन्ता करते थे। उन पक्षियों के बीच एक चातक पक्षी भी था। जिसके जन्म के कुछ दिनों बाद उसकी माँ मर चुकी थी। एक चिडिया के साथ उसकी मैत्री हो गई।

एक बार चिडिया ने चातक को कहा-चलो। आज हम देश विदेश के भ्रमण के लिए जा रही हैं। चिडिया की बात सुनकर चातक पक्षी जाने के लिए तैयार हो गया।

चिडिया ने चातक एव अपने परिवार के साथ खुले आकाश में उडान भरी। थोडी ही देर में वह दूर सुदूर गगा नदी के तट पर पहुच गई।

चिडिया को जोर से प्यास लगी। वह अपने परिवार के साथ गगा के किनारे उतर गई और अपनी चोच से गगा के सुमधुर जल का पान करने लगी।

लबी उडान से चातक पक्षी को भी प्यास लगी हुई थी किन्तु वह गगा तट पर मौन बैठा रहा। उसे मौन देखकर चिडिया बोली भय्या! प्यास लगी है गगा का पानी पीलो न?

चातक ने कहा-बहिन! तू जानती है न? हम स्वाती नक्षत्र की जल बूदों के सिवाय अन्य जल ग्रहण नहीं करते हैं। अत मुझे मरना कबूल है किन्तु अपने कुल को कलंकित करना कबूल नहीं है।

शेष पृष्ठ 53 पर

पर्वाधिराज पर्यूषण महापर्व का अमर संदेश

लेखक
पू. मुनिराज श्री जयरत्न विजयजी महाराज
आत्मानन्द सभा भवन,
जयपुर (राज.)

जैन शासन में अनेक पर्व है। उन सभी पर्वो में पर्वाधिराज पर्यूषण महापर्व है। इस महापर्व में पापों का प्रक्षालन करने के लिए भव्यात्मा अनेक प्रकार की आराधना करके आत्म कल्याण करते है।

परि यानी चारों तरफ उषण रहना यानी चारो तरफ से पापो का त्याग करके आत्म साधना मे लीन बने वही पर्यूषण।

इस महापर्व की साधना के लिए साधन की आवश्यकता रहती है। साधन अच्छा होगा तो साध्य की सिद्धि भी जल्दी होगी। साधना के विना सिद्धि प्राप्त नही होती है। इस पर्व की साधना में पाच प्रकार के कर्त्तव्यों का यथाशक्ति पालन करना चाहिये, ऐसा ज्ञानी भगवंतों ने कहा है।

(१) अमारि प्रवर्तन (२) सार्धमिक भक्ति (३) परस्पर क्षमापना (४) अट्ठमतप (५) चैत्य परिपाटी।

1. अमारि प्रवर्तनः—

यानी जीवों के प्रति अभयदान। पापारंभ-समारम्भ के त्याग बिना आराधना संपूर्ण नही हो सकती। सामान्यतः इस पर्व में छ:काय के जीवो की हिंसा न होवे उसका पूरा ध्यान रखना। समस्त जीवों को जीने की इच्छा रहती है कोई भी मरण नही चाहता है। इसलिए किसी भी प्रकार के जीवो का मारना, आरंभ समारंभ की प्रवृत्ति करना यह विवेकी आत्माओ के लिए उचित नहीं है। पर्व में आराधना हेतु आठ दिन पौषध व्रत लेना। यह न बन सके तो उचित धर्माराधन कर आत्म कल्याण साधना चाहिये। शक्ति हो तो पशुओं को अभयदान दिलवाने का प्रयत्न करना चाहिये। श्री हीर सूरीश्वरजी महाराज के उपदेश से अकबर बादशाह ने ६ महीने की जीवदया की घोषणा करवाई थी, तथा बादशाह ने स्वयं मांसाहार का त्याग किया था। कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचंद्र सूरीश्वर जी महाराज की प्रेरणा से प्रेरित होकर परमार्हत राजा कुमारपाल ने अपने अट्ठारह देश मे अमारि पडह बजवाई। यहां तक कि वे अपने पशुओं को पानी भी छान कर पिलाते थे। कसाई खाना, भडभूजों की भट्टिया. हलवाई की दुकानें भी आठ दिन के लिए बंद रखते थे। इस तरह की नगर मे घोषणा भी करवाते थे। इस प्रकार आचार्य महाराजों ने शासन की अद्भुत शोभा बढ़ाई। आराधना को दृढ़ स्थिर बनाने हेतु जीव हिंसा का त्याग करना। अभयदान दिलवाकर आराधना में प्रयत्न करना श्रेष्ठ है।

2 सार्धमिक भक्ति --

समान धर्म का जो ग्राचरण करें वह सार्धमिक, ऐसे सार्धमिक की भक्ति करनी। कुटुंब परिवार का सबंध तो अनतभवो में प्राप्त हुआ यह सुलभ है। परतु सार्धमिक का सबंध प्राप्त होना बहुत ही मुश्किल है। अरिहत परमात्मा ने तो यहा तक कहा है कि "जो सार्धमिक भक्ति करता है वह मेरी भक्ति करता है।" "सार्धमिक समान सगपण दूजो न कोई" वर्तमान समय मे इसका बहुत ही अभाव देखने मे आता है। हमारे समाज मे कुछ लोग (सार्धमिक) इतनी दयनीय स्थिति मे जीवन यापन कर रहें है पर उनकी सार समाल लेने वाला कोई नही हैं। नाम की तख्ती के लिए हजारो रुपये दान मे खर्च कर देते हैं परन्तु सार्धमिक भक्ति पर खर्च के नाम से कठिनाई महसूस होती है। सार्धमिक भक्ति का भी फल कम नही है। माडवगढ के महामन्त्री पेथडशाह के हृदय मे सार्धमिक के प्रति अनुपम भक्ति थी। किसी भी सार्धमिक को वे देखते तो उनका सत्कार करने हेतु घर ले जाकर भोजन की भक्ति करने के बाद तिलक करके उनको पहेरामणी पहनाते। राजा कुमारपाल प्रतिवर्ष सार्धमिक भक्ति हेतु एक करोड स्वर्ण मुद्रा खर्च करते। आजकल यह सार्धमिक भक्ति विस्मृत हो गई है। कर्म के सयोग से कोई सार्धमिक की स्थिति सामान्य हो तो श्रीमन्तो को चाहिए कि वे उनकी भक्ति करके उनको धर्म के मार्ग पर स्थिर करें। उत्थान पतन का सयोग तो कभी भी किसी को भी आ सकता है। सार्धमिक भक्ति की उपेक्षा न कर भक्ति करेंगे तो जैन शासन की अपूर्व प्रभावना हो सकती है।

3 परस्पर-क्षमापना .—

वैर-झेर की शुद्धि के लिए महापर्व के पवित्र दिनो मे आपस मे क्षमापन करनी चाहिये। जैन शासन का रहस्य ही क्षमा हैं। क्षमा-वीरस्य-भूषणम्" कोई क्षमापन करें या न करें पर अपने स्वय को तो सामने वालो से अत करण पूर्वक क्षमापना कर लेनी चाहिये। जब तक हृदय मे समता भाव नही आवे वहाँ तक जीवन की शुद्धि नही हो सकती है। कषायो से जलते हुए हमने अनेक भवो मे भ्रमण किया हैं। पापारभ से आने जीवन को कठोर बनाया। जब तक कषायो का शमन करने का प्रयत्न नही करेंगे तब तक आराधना किस प्रकार सफल होगी। राजा उदायी ने चडप्रद्योत के ललाट पर "ममदासीपती" लिखवाया परन्तु महापर्व के दिन आने पर प्रद्योत राजा को अपने पास बुलाकर खमाया तथा ललाट पर जो दासीपती लिखवाया था उनके स्थान पर सोने का पट्टा बनाकर बधवाया तथा सन्मानपूर्वक जेल से निकाल कर विदा किया। हृदय मे क्षमा आवे, कषायो का शमन होवे तब ही आराधना का आनद आवेगा। मृगावतीजी ने चंदनबालाजी के साथ अत करण पूर्वक पश्चाताप के साथ क्षमापन की भावना को हृदयगम करते हुए केवल ज्ञान प्राप्त किया। इस प्रकार से की हुई क्षमापना से भवोभव के वैर-झेर के अनुबधो को तोडकर जीव ऊर्ध्वगति को प्राप्त कर यावत् मोक्ष सुख को प्राप्त कर सकता हैं। क्षमा ही जीवन का नवनीत है। क्षमा के बिना जीवन विषमय बन जाता हैं। आत्मोन्नति मे सहाय करने वाली क्षमा है। यह क्षमा इस महापर्व का अपूर्व सदेश है। वैर-झेर की शुद्धिकरण क्षमापना है।

4 अट्ठम तप--

पर्यूषण महापर्व मे अट्ठम तप की आराधना करने का विधान हैं। इसलिए पर्व के मध्य तेला करना अत्यन्त ही आवश्यक हैं। तेले की आराधना महा मागलिक है। आत्मा पर लगे हुए कर्मों को दूर करने का साधन तप है। तप के बिना विषय

कषाय शान्त नही होते इंद्रिया भी वशीभूत नही रहती। अट्टम तप के प्रभाव से नागकेतू ने मोक्ष प्राप्त किया। धर्म की प्रभावना कर नगर की रक्षा की। पुष्प पूजन करते हुए तंदुलिया सर्प के डंक मारने पर शरीर में विष व्याप्त हो गया! इस प्रकार शुभ-भावना में चढ़ते हुए क्षपक क्षेणी में आरूढ़ होकर केवल ज्ञान प्राप्त हुआ और अंत-मुहूर्त में ही मोक्ष प्राप्त किया। ज्ञानी भगवंतों ने तप का अद्‌भुत वर्णन किया। तप से अनेक प्रकार के मनोरथ पूर्ण होते हैं, ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त होती है। इसलिए महामूल्यवान मानव जीवन प्राप्त कर आत्मा को तप में लवलीन बनाकर महापर्व के संदेश को आत्मा मे उतारने का प्रयत्न करना चाहिये।

5. चैत्य-परिपाटी—

महापर्व में करने योग्य पांचवां कर्त्तव्य चैत्य परिपाटी महामहोत्सव पूर्वक करनी चाहिये। नगर में जितने भी चैत्य (मंदिर) हों उन सबकी गुरु महाराज के साथ बाजते गाजते धाम धूम के साथ करनी चाहिये। सामूहिक चैत्यवंदन, भक्ति करके सामूहिक पुण्य उपार्जन करना चाहिये। सामूहिक रूप से किया हुआ शुभ या अशुभ कर्म के बंधन का उदय भी सामूहिक रूप से होता है। सनत्कुमार चक्रवर्ती के ६० हजार पुत्रों ने पूर्व भव में जो कर्म का उपार्जन किया था उसका फल भी उन्होंने एक साथ ही भोगा। अष्टापद की खाई खोदते समय अग्निकुमार ने क्रोध के आवेश में सभी को जलाकर भस्म कर दिया। इसीलिए ज्ञानी भगवंतो ने कहा है कि कर्म करते समय उसका उपयोग रखो। नहीं तो किए हुए चिकणे कर्म रोते हुए भी नही छूटेंगें। इन सब पापों से बचने के लिए ही महापर्व पर्यूषण की आराधना करनी हैं। देव-गुरु-धर्म की अंतःकरण पूर्वक आरा-धना-उपासना कर आत्मा का जो मूल स्थान मोक्ष है, उसको प्राप्त करने हेतु जिन बिंब-जिनागम है, उनकी जो भी भव्यात्मा आराधना-उपासना करेगा वह अजरामर पद को प्राप्त करेगा।

यही मंगल कामना

———

(पृष्ठ सं. 50 का शेष)

और आखिर चातक ने भयंकर प्यास में भी गंगा का जल नही पिया।

एक पक्षी जाति मे भी अपने कुल की खानदानी होती है।

किन्तु अफसोस है कि आज मानव अपनी खानदानी को भूल बैठा हैं। वह अपने आपको भगवान महावीर और भगवान राम का वंशज कहलाने का गौरव लेता है किन्तु उसका आचरण तो बिल्कुल विपरीत ही हैं।

———

धर्म के तीन सूत्र

कु॰ अजना सिंघी

अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर ने जीवन विकास के लिए कहा है–इस ससार मे पुत्र-पिता पति-पत्नि आदि परिजन, धन-वैभव आदि कोई भी पदार्थ व्यक्ति को दुख से बचा नही सकता, परम सुख-शान्ति एव आनन्द दे नही सकता। एक मात्र धर्म ही व्यक्ति को दुख के जाल से मुक्त कर सकता है। सिर्फ माला फेरना, जप करना या कुछ क्रिया-काण्ड कर लेना धर्म नही है। भगवान महावीर की भाषा मे धर्म है–अहिंसा, सयम और तप।

अहिंसा निषेधात्मक शब्द है, परन्तु उसका अर्थ सिर्फ निषेध अर्थात् किसी को मारो मत, किसी को उत्पीडित मत करो किसी के मन को, हृदय को आघात मत पहुचाओ आदि ही नही वरन् अहिंसा का विधेय पक्ष है मैत्री-भाव। समस्त प्राणीमात्र के साथ एकात्मक भाव स्थापित करना अहिंसा है। प्राणी मात्र का अभ्युदय चाहना एव यथा सभव प्रयत्न करना भी अहिंसा है। इसका सीधा सा अर्थ है– अन्य व्यक्तियों के सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझना और अपनी शक्ति का– भले ही वह बौद्धिक शक्ति हो, शारीरिक शक्ति हो, आर्थिक शक्ति हो, दूसरे के हित मे, समाज एव राष्ट्र के उत्थान मे, सत्कर्म मे उसका उपयोग करना अहिंसा है। अहिंसा कभी भी यह नहीं सिखाती कि सब सुख-साधनो को अकेले समेट कर बैठ जाओ। तुमको जो कुछ प्राप्त है, सबके साथ मिलकर बाट कर खाओ। सिर्फ खाकर ही मत रह जाओ, दूसरे को खिलाओ भी। मनुष्य का धर्म है कि वह अपनी शक्ति का अपने आस पास के जरूरतमन्द व्यक्तियों मे समान रूप से वितरण करे, तभी वह मोक्ष पा सकता है। सिर्फ सग्रह करके रखने वाला परिग्रही है। वह हिंसा को बढाता है। इसीलिए वह ससार बधन से मुक्त नही हो सकता। अत जन-जन के साथ बन्धुत्व भाव स्थापित करना, जाति, पथ, रग, वर्ण, वर्ग, प्रान्त एव देशी-विदेशी के भेदभाव से ऊपर उठकर मानवीय भावना का विकास करना अहिंसा है।

दूसरा धर्म है–सयम। सयम का अर्थ है–नियन्त्रण। अपने मन पर अपनी वृत्तियो पर नियन्त्रण रखना सयम है। बिना नियन्त्रण के, बिना अनुशासन के न तो व्यक्ति प्रगति कर सकता है, न समाज, न राष्ट्र की प्रगति हो सकती है। आज व्यक्ति के जीवन मे किसी चीज का अभाव है, तो वह है–नियत्रण का। अपने आत्म विकास के लिए उत्थान के लिए मन, वाणी एव शरीर पर सयम रखना आवश्यक ही नही, अनिवार्य है।

धर्म का तीसरा तत्व है—तप। बिना तप के कोई भी सिद्धि नहीं हो सकती। धन कमाने के लिए भी तप करना पडता है। बिना तपे घी भी नहीं पिघलता है। तप से ही व्यक्ति का व्यक्तित्व निखरता है। अग्नि के ताप को सहकर ही स्वर्ण का रग-रूप निखरता है, चमकता है। बिना आग के कूडा-कर्कट जल कर भस्म नहीं हो सकता। केवल भूखे रहना इतना ही तप नहीं है। इच्छाओं का, आकाक्षाओ का,

तृष्णा का एवं वासना का निरोध करना ही तप है।

अपने स्वयं के, परिवार के, समाज के एवं देश के विकास के लिए, उत्थान के लिए—अहिंसा संयम और तप आज भी उतने ही उपयोगी एवं आवश्यक है, जितने 2500 वर्ष पूर्व थे। राष्ट्र का उत्थान मात्र धर्म ही कर सकता है। परन्तु, वह धर्म, पंथों एवं परम्पराओं मे बँटा हुआ साम्प्रदायिक धर्म न हो। वह हो आत्मा का धर्म, मानव का धर्म और जन-जन का धर्म। और वह है—अहिंसा, संयम और तप।

तप-त्याग, धार्मिक क्रिया-काण्डों का अहंकार यश-प्रतिष्ठा का व्यामोह ऐसा हैं, जो भौतिक पदार्थो के ममत्व से भयंकर है। बिना अंहकार का परित्याग किये साम्प्रदायिक कटुता एवं विषमता मिट नही सकती। अतः आवश्यकता है, भगवान महावीर के अहिंसा एवं अपरिग्रह के यथार्थ स्वरूप को समझकर उसे जीवन में साकार रूप दे एवं विवेक के साथ सत्कर्म करे, जीवन-क्षेत्र मे गति-प्रगति करे।

समझ अपनी अपनी

श्री शान्ति कुमार सिंघी

जब कभी धर्म चर्चा होती है तो उसकी शुरुआत एक मतभेद को दूर करने के लिए होती है। उसका अन्त अनेक मतभेदो को बढ़ा कर होता है ?

क्या आपने इस विषय पर कभी गहराई से चिंतन किया है ?

इसका मुख्य एव सबसे बड़ा कारण है कि अब हम भगवान महावीर के अनुयायी न रह कर केवल स्वार्थ के अनुगामी रह गये है।

मूल सूत्रों का अपनी प्रसिद्धि एवम् स्वार्थ वश अपने अनुकूल अर्थ निकाल रहे हैं। एक दूसरे पर कीचड़ उछाल रहे है। अपने ज्ञान का उपयोग अच्छे कामों मे करने के बजाय एक दूसरे को नीचा दिखाने में कर रहे हैं। हम अपनी विचार धारा के विरुद्ध कुछ भी सुनना व समझना नहीं चाहते मन मे अपनी झूठी शान के लिए अड़े रहते है। अकड़पन तो खास मुर्दो की पहचान है। इसलिए धर्म को अड़ियल बनाकर उसे मार रहे हैं।

यदि हमें वास्तव में धर्म से लगाव है तो हमें सबसे पहले अड़ियलपना छोड़ना होगा अपने को निर्मल बनाना होगा। विरोधी विचार धारा को शान्ति पूर्वक सुनकर उन पर मनन करना होगा। और यदि उसमें कुछ अच्छा महसूस हो तो अपनी झूठी शान को छोड़ते हुए उसे अपनाना होगा।

अपनी एक गलती को छुपाने के लिए उसके चारों तरफ गलतियों का पहाड़ बनाने की कोशिश छोड़नी होगी। तब ही सच्चे धर्म का मार्ग मिलेगा आपस के मतभेद दूर होंगे। मिच्छामि दुक्कड़म की आवाज जुबान से ही नही दिलसे निकालनी होगी।

जुदाई सिखलावे वह धर्म भला किस काम का। वह आडम्बर है निरा, धर्म है खाली नाम का॥

जय वीर

मैं कौन हूँ–अमर आत्मा

□ श्री राजमल सिंघी

इस विश्व के सभी जीव जन्म, जरा, मरण, आधि, व्याधि और उपाधि आदि नाना प्रकार के दुखो का अनुभव करते हैं। यह दुख क्षणिक है या हमेशा चलने वाला है, उसका नाश हो सकता है या यह हमेशा चलने वाला है, इस विषय मे हमको अवश्य विचार करना चाहिए। पशुओ से मनुष्यो मे विचारशक्ति प्रवल होती है। पशुओ से मनुष्यों का मन विशष स्पष्ट है जिससे वे किसी विषय पर विचार कर निर्णय ले सकते हैं और उसके प्रतिकार के निमित्त प्रयत्न कर सकते है। ऐसी असीम सामर्थ्य होते हुए भी यदि मनुष्य दुख का मूल कारण ज्ञात करने और दुख का विनाश करने का विचार या प्रयत्न न करे तो मनुष्य जन्म का क्या उपयोग हुआ ! मनुष्यो व पशुओ मे क्या अन्तर हुआ ?

प्रत्येक मनुष्य को यह सोचना चाहिए कि मैं कौन हू ? यह जगत क्या है ? परम शांति कैसे मिले ? जो मनुष्य स्वय के भले के लिए प्रयत्न नही करता है वह मनुष्य कहलाने के योग्य कैसे हो ?

यदि आप अपने आप को पूछें कि मैं कौन हू, तो उत्तर मिल सकता है कि मैं राजा हू, क्षत्रिय हू, पुरुष हू, मनुष्य हू, भारतवासी हू। क्या यह उत्तर आपको उचित लगता है? कुछ विचार करेंगे तो विशेष स्पष्टीकरण होगा। भारत देश मे जन्मे, इसलिए आप भारत वासी हैं। भारत देश मे न जन्मे होते तो भारतवासी नही कहलाते। अत भारतवासी यह आपका नित्य सबधित लक्षण या स्वरूप नही है क्योकि यह पलटने वाला स्वभाव है। आपका सच्चा स्वरूप आपके साथ नित्य सबधित होना चाहिए।

"मैं मनुष्य हू"। मनुष्य की देह मे आप हैं। अत आप सोच सकते हैं कि आप मनुष्य हैं। यदि पशु की देह मे होते तो पशु होते। अत यह लक्षण भी आपका नित्य सबधित नहीं हुआ।

'मैं पुरुष हू"। पुरुष सज्ञा सूचक चिह्न होने से आप पुरुष हैं और स्त्री सूचक चिह्न वाले होते तो आप स्त्री होते। अत यह स्वरूप भी आपका निश्चित नही है।

"मैं क्षत्रिय हूँ"। आप क्षत्रिय कुल मे जन्मे अथवा आप अन्यो की रक्षा करते हैं अत आप क्षत्रिय कहलाए जा सकते हैं, किन्तु यदि आप क्षत्रिय कुल मे नही जन्मे होते अथवा अन्यो की रक्षा करने की आप मे सामर्थ्य नही होती तो आप क्षत्रिय नही कहलाए जाते। अत आपका सत्य स्वरूप क्षत्रिय भी नही है।

'मैं राजा हूँ"। अनेक मनुष्यो पर आप हुकूमत चलाते हैं, आज्ञा पालन करवाते हैं और ऐश्वर्यवान हैं। अत आप' राजा, हाकिम अथवा अफसर कहलाए जा सकते है। किन्तु यह हुकूमत आज्ञा, ऐश्वर्य और वैभव चले जाए तो आप राजा, हाकिम अथवा अफसर नही कहलाए जाएगे। यह राजा, वैभव भी सयोग धर्म वाला

होने से चिर स्थायी नहीं है। अतः यह भी आपका सत्य शाश्वत स्वरूप नहीं है।

आहार, पानी, हवा, चिंता, परिश्रम, निश्चिन्तता, इत्यादि अनेक कारणों से शरीर की वृद्धि या हानि होती है। इसी प्रकार ईंट, चूना, पत्थर सीमेंट, मिट्टी, लकड़ी, लोहा, जमीन इत्यादि की वृद्धि अथवा हानि से घर छोटा या बड़ा होता है। अतः घर का बनाने वाला या घर में रहने वाला घर नहीं है, किन्तु वह घर से जुदा है। इसी प्रकार शरीर का बनाने वाला या शरीर मे रहने वाला शरीर से जुदा है।

घर या महल के झरोखे में खड़े रहकर मनुष्य बाहर के पदार्थ देख सकता है। इसी प्रकार इस शरीर के नेत्र रूपी झरोखे से शरीर में रहने वाला इस संसार के पदार्थों को देख सकता है। झरोखा और झरोखे में रहने वाला मनुष्य दोनों से जुदा है। इसी प्रकार शरीर और शरीर मे रहकर बाहर के पदार्थों को देखने वाला जुदा है।

घर या महल गिर जावे या किराए का मकान हो तो किराए का समय पूरा होने पर उसमें रहने वाला घर या महल खाली कर अन्य स्थान पर रहने के लिए चला जाता है। इसी प्रकार इस शरीर की आयुष्य पूर्ण होने पर, इस देह मे रहने वाला देह को खाली कर दूसरे मंदिर मे रहने चला जाता है। अतः घर खाली करने वाला जिस प्रकार घर से जुदा है, उसी प्रकार यह देह खाली करने वाला भी देह से जुदा है।

अनादि काल से मनुष्य ने समझ रखा है कि देह ही मैं हूं। देह के सुख से सुखी, दुख से दुखी, रात-दिन उसकी सेवा में, उसकी रक्षा करने मे उसका पालन-पोषण करने में समय व्यतीत किया जा रहा है। अतः ऐसा लगता है कि आत्मा देह के समान है, किन्तु ऐसा नही है। आत्मा के लक्षण जुदा है। आत्मा चैतन्य स्वरूप है, अरूपी है, ज्ञानमय है, ज्ञाता है, दृष्टा है। जो दिखने वाली देह (शरीर) है वह जड़ स्वरूप है, रूपी है, अज्ञान स्वरूप है। इन लक्षणों से विचार करने से हमको प्रतीत होगा कि दिखने वाली देह से जो भिन्न है, वही मैं हूँ, वही आत्मा है।

तलवार से जिस प्रकार म्यान जुदा है, उसी प्रकार आत्मा देह से जुदा है। कई मनुष्य शंका करते हैं कि नेत्रों से आत्मा क्यों नहीं दिखती, किन्तु विचार करने से ज्ञात होगा कि नेत्र को भी देखने वाली आत्मा है तो नेत्र से आत्मा कैसे दिखाई देगी। प्रत्येक इन्द्रिय को अपना-अपना ज्ञान है। नेत्र से दिखता है, कान से सुनाई देता है, नाक से गंध आती है, जीभ से स्वाद अनुभव होता है, त्वचा से स्पर्श अनुभव होता है, किन्तु इन पाँचों इन्द्रियों का ज्ञान जिसको होता है, वही आत्मा है।

किसी इन्द्रिय से किसी विषय का कोई ज्ञान हो जाता है तो उस इन्द्रिय के नष्ट होने पर भी उस विषय का ज्ञान स्मरण मे रहता है। जैसे नेत्र से आपने अनेक शहर, पहाड़, नदी इत्यादि देखे हैं, किन्तु यदि नेत्र किसी रोग आदि कारण से नाश हो जावे तो भी उन शहरो इत्यादि की याद मनुष्य को रहती है कि अमुक दिन मैं अमुक शहर में गया था इत्यादि। इससे स्पष्ट है कि इन सब विषयों का जो ज्ञाता है, वह इस देह की इन्द्रियों से जुदा है।

इसी प्रकार मन भी आत्मा को नहीं जान सकता किन्तु आत्म-सत्ता से मन जाना जाता है कि मेरा मन अमुक स्थान पर गया था या मैंने मन में अमुक विचार किया था। अतः मन को जानने वाला और मन पर सत्ता चलाने वाला कोई अदृश्य तत्व इस देह मे है, वही आत्मा है।

निद्रा, स्वप्न और जागृत दशा—इन तीनों दशाओं का अनुभव करने वाला, दृष्टा, वही

आत्मा है। मुझे अच्छी नींद आई, मुझे अमुक स्वप्न आया, मैं जगता हू, इन सब दशाओं को जानने वाला आत्मा है।

जिसकी सत्ता से इस दुनियां के प्रत्येक पदार्थ का अनुभव होता है वही आत्मा है। सक्षेप मे कहें तो मैं कौन हू "ऐसा प्रश्न करने वाला स्वय आत्मा है। अत "मैं कौन हू ?" का उत्तर "मै आत्मा हू" देह आदि सभी पदार्थों से जुदा और विलक्षण हू।

देह से आत्मा भिन्न है—यह जानने पर भी यदि यह मान लिया जाय कि देह के नाश के साथ आत्मा ही नाश होती, तो फिर उसको दुख से छुड़ाने की क्या आवश्यकता है। किन्तु आत्मा अमर है। यह अमरता तभी सभव है जब पुनर्जन्म होता हो। अमुक मनुष्य मर गया—इन शब्दों के सुनते ही इतना तो निर्णय किया ही जा सकता है कि जिस आत्मा की सत्ता से इस शरीर मे हलन-चलन, स्मरण इत्यादि नाना प्रकार की क्रियाए होती थी, व बद हो गई, और इन्द्रियों की प्रेरक "आत्मा" इस स्थल से किसी अन्य स्थल पर चली गई है।

किसी वस्तु का मूल से नाश नही होता। उसका पर्याय ही बदलता है—यह बात अनुभव से सिद्ध है। जसे किसी लकड़ी को जलाने से उसकी राख बन जावेगी—वस्त्र भी राख बन जावेगा—अर्थात् वस्त्र या लकडी का पर्याय बदल गया। वही उसका पुनर्जन्म है। इसी प्रकार इस देह को त्याग कर अन्य देह मे पैदा होना, यही आत्मा का पुनर्जन्म है। अतः आत्मा का नाश नहीं होता। इसका केवल पर्याय बदलता है।

सुख या दुख पूर्व की क्रिया के अनुसार होता है। धूप तेज हो तो पैर मे जूते पहन कर एवम् छाता ओढ कर जाएगें तो धूप कम लगेगी। इस प्रकार प्रत्येक क्रिया का फल अवश्य मिलेगा। इसी प्रकार आप यदि गर्भ मे आएं तो किसी न किसी आपकी पूर्व क्रिया के कारण से आए क्योंकि बिना किसी क्रिया के कोई फल नही होता। अत आत्मा के गर्भ में आने से पहिले वह किसी न किसी स्थल पर थी, और वहाँ से यहाँ इस जन्म में आई—यही उनका पुनर्जन्म है। इस प्रकार आत्मा की अमरता सिद्ध होती है।

अमुक व्यक्ति जन्मा, अमुक मरा, अमुक आया। आया तो कहाँ से आया ? गया तो कहाँ गया ? यह आना और जाना पुनजन्म का सूचक है।

सब सुखी क्यो नही होते ? सब दुखी क्यो होते हैं ? राजा और रक क्यों होते हैं ? ज्ञानी और अज्ञानी क्यो होते हैं ? इन सब का कोई न कोई कारण होता है। एक ही जाति, एक ही कुल, एक ही माता-पिता से उत्पन्न बालको मे विषमता होना—किस कारण से होता है—यह सब उसके द्वारा की हुई पूर्व क्रियाओं—इस जन्म के पूर्व में की गई क्रियाओं—के कारण होता है। यही आत्मा की अमरता और पुनर्जन्म को सिद्ध करता है।

कलिंग जिन

मुनि श्री भुवन सुन्दर विजय जी म. सा.

"महामहिम, द्वादशांगी संरक्षक महान सम्राट राजा खारवेल महान जैनशासन प्रभावक राजा दक्षिण में ई० सन् पूर्व लगभग १६० में हुआ" इस तथ्य की पुष्टि उड़ीसा (कलिंग) स्थित कुमारी पर्वत स्थित खंडगिरि और उदयगिरि के पहाड पर आयी हाथीगुम्फा का शिलालेख पुष्ट करता है। राजा खारवेल द्वारा हाथीगुम्फा में खुदवाये गये शिलालेख से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि जैन-धर्म में ई० सन् पूर्व भी जिनपूजा होती थी।

महान जैन सम्राट खारवेल का यह इतिहास प्रसिद्ध शिलालेख उड़ीसा प्रदेश के पुरी जिले में स्थित भुवनेश्वर से तीन मील की दूरी पर विद्यमान खंडगिरि पर्वत के उत्तरी भाग पर जो कि उदय-गिरि कहलाता है, बने हुए हाथी गुम्फा नाम के एक विशाल एवं प्राचीन कृत्रिम गुफा मंदिर के मुख एवं छत पर उत्कीर्ण है। १७ पंक्तियों का यह लेख ८४ वर्ग फीट क्षेत्र में लिखा हुआ है। सारा लेख गद्य मे है। लेख की भाषा अर्ध मागधी तथा जैन प्राकृत मिश्रित अपभ्रंश है। लेख के साथ में मुकुट, स्वस्तिक, नन्द्यावर्त, अशोकवृक्ष आदि जैन सांस्कृतिक मंगल प्रतीक भी उकेरे हुए है। लेख के प्रारंभ में अरिहंतों और सिद्धों को नमस्कार किया है। बाद में राजा खारवेल का दिग्विजय आदि वृतान्त लिखा हुआ है। बारहवी पंक्ति मे उसने कलिंग देश से नंदराजा द्वारा पूर्व में उठायी गयी आदि जिन प्रतिमा को फिर से कलिंग देश में लाकर मंदिर निर्माण कर स्थापन किया था, ऐसा उल्लेख है। इस प्रकार अपने पिता वुद्धराज की इच्छा का राजा खारवेल ने पालन किया था और कलिंग देश की प्रजा के प्राणभूत प्रतिमा को वापस लाकर उसने कलिंग के गौरव को पुनः स्थापित किया था।

सम्राट राजा खारवेल ने ई० सन्० पूर्व १७० में "कुमारी पर्वत" पर 'जिन महापूजा' और 'श्रमण संघ सम्मेलन' करवाया था। अपने राज्य-काल के तेरहवें वर्ष में राजा खारवेल ने चारो ओर से ज्ञानवृद्ध और तपोवृद्ध निर्ग्रंथ साधुओं का सम्मे-लन और जिन मंदिर का निर्माण करवा कर 'महापूजा' रचवायी थी।

राजा खारवेल द्वारा उत्कीर्ण उक्त शिलालेख पर ई० सन्० १८२५ में सर्व प्रथम स्टर्लिंग नामक अंग्रेज विद्वान् की दृष्टि पड़ी थी। तब से गत १५० वर्षों में अनेक पश्चिमी एवं भारतीय विद्वानों ने इस सम्बन्ध में सुन्दर ऊहापोह की है और निर्णय दिया है कि जैनधर्म में मूर्तिपूजा ई० सन् पूर्व से चलती आ रही है।

हाथीगुम्फा (उड़ीसा) का महामेघवाहन राजा खारवेल का लेख जैनधर्म की पुरातन समृद्धि और शासन प्रभावना पर अपूर्व तथा अद्वितीय प्रकाश डालने वाला है। भगवान श्री महावीर द्वारा प्रबोधित पन्थ के अनुयायिओं में कोई भी प्राचीन राजा का नाम अगर शिलालेख मे मिला हो तो वह अकेले महान प्रतापी राजा खारवेल का है।

यह सबसे प्राचीनतम शिलालेख जैनियो के लिये कीर्तिस्तम्भ है।

ऐतिहासिक साधनो मे शिलालेखो, ताम्र-पत्रो मूर्ति पर उट्टंकित लेखो और सिक्को को सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण और नि सशय रीति से प्रमाणित माना जाता हैं। हाथीगुम्फा से प्राप्त शिलालेखो की चर्चा यूरोपीय और भारतीय पुरातत्वनो मे चली आती है। अनेक लेख और पुस्तकें इस लेख के सम्बन्ध मे प्रकाशित हुई हैं।

विद्वानो में निश्चित समय के बारे में मतभेद जरूर रहा है, किन्तु सब विद्वान् इस तथ्य को अवश्य दुहराते हैं कि ई० सन् पूव २००–३०० वर्षो मे भी जैनधम मे मूर्तिपूजा का अत्यन्त प्रचलन था।

हाथीगुम्फा स्थित शिला लेख से निम्न लिखित तथ्यों को समाज के सामने पुरातत्त्व के विद्वानों ने रखे है, यथा—

महान जैनधर्म प्रेमी जैन सम्राट खारवेल के पिताजी का नाम बुद्धराज था। मरते वक्त पिता बुद्धराज ने पुत्र खारवेल को दो प्रतिना करवायी थी कि (1) मगध देश का सम्राट राजानद कलिंग देश पर लडाई करके भगवान श्री ऋषभदेव की प्रसिद्ध और चमत्कारिक प्रतिमा उठा ले गया है, उनको वापस कलिंग देश मे लौटाना और (2) भगवान श्री महावीर की वाणी 'आगमों' को सुविहित मुनियो द्वारा 'वाचना' करवाना।

सम्राट खारवेल का जन्म ई० सन् पूव २०७ में हुआ था। युवराज पद १५ साल की उम्र मे ई० सन् पूर्व १९२ मे प्राप्त किया था। सम्राट राज्याभिषेक पद ई० सन् पूर्व १७७ मे प्राप्त हुआ था। ई० सन् पूव १७१ में मगध सम्राट वृहस्पति मित्र (पुष्पमित्र) का पराजय करके "कलिंगजिन" नाम से प्रख्यात "आदिनाथ" भगवान की प्रतिमा-मूर्ति वह कलिंग देश मे वापस लाया था और विशाल जिन मदिर बनवाकर ठाठ से उसमें 'कलिंगजिन' प्रतिमा की प्रतिष्ठा करवायी थी।

सम्राट राजा खारवेल ने ई० सन् पूव १७० मे "कुमारी पर्वत" पर "जिनमहापूजा" और "श्रमण सघ सम्मेलन" करवाया था। अपने राज्य-काल का यह तेरहवाँ वर्ष था।

इस पूरे शिलालेख पर भिन्न-भिन्न विद्वानो का क्या अभिप्राय है, यह प्रस्तुत है।

"हाथीगुम्फा में तीर्थंकरो की मूर्तिया एव वदन विधि (नमस्कार) जैनियों की रीति अनुसार है।"

—डा० राजेन्द्रलाल मित्रे

"उदयगिरि पर स्थित शतघर की गुहा में दिवारो पर लाछन युक्त जैन तीर्थंकरो की आकृतिया उट्टंकित है।"

—बगाली विद्वान् डॉ० बाबू मनमोहन गुगुले।
पुस्तक—'ओरीस्सा के प्राचीन एव मध्यकालीन ध्वसावशेष'

डा० बाबु मनमोहन गुगुले का अभिप्राय है कि —

खडगिरि पर अनेक गुफाएँ उट्टंकित है जो बौद्ध और जैन सम्बन्धित हैं। यथा हाथीगुंफा अनन्त गुंफा आदि। पडित भगवानलाल इन्द्रजी के अनुसार (हाथीगुंफा) यह जैन गुहा राजा खारवेल द्वारा निर्मित है। लिपि के अक्षरो से यह विदित होता है कि ई० सन् पूर्व दूसरा या तीसरा सैका मे यह उट्टंकित की गयी है।

हाथी गुंफा 'उदयगिरि" के शिखर पर है। यह एक नैसर्गिक गुंफा है। यद्यपि इसमे अन्य गुहाओ की तरह तीर्थंकरो की प्रतिमा आदि उट्टंकित नही हैं फिर भी सर्व गुहा से वह अत्यन्त

महत्वपूर्ण है, क्योंकि उसमें एक बड़ा "लेख" उट्टंकित है, जिसमें जैनराजा खारवेल का वृत्तान्त लिखा हुआ है। उसकी सबसे प्रथम खोज करने वाले मिस्टर एस्टलीर्ग थे। अनेक विद्वान इस लेख को ई० सन् पूर्व 2 या 3 शताब्दी का मानते हैं।

डॉ. भगवान लाल इन्द्रजी के इस गुहा को जैन सम्बन्धित पुरवार किया है और यह खारवेल द्वारा निर्मित है, क्योंकि लेख की अंतिम यानी १७ वीं पंक्ति में "खारवेल" का नाम उट्टंकित है। इस लेख की मिती मौर्य संवत् १६५ (ई. सन् पूर्व १५७ वर्ष) है। मौर्य सन् ई० सन् पूर्व ३२१ से शुरू होता है, अतः गुहो का सबसे प्राचीन काल ई.सन् पूर्व 200 (दो सैका) का हो सकता है, ऐसा पाश्चात्य विद्वानों का अभिप्राय है, यथा—

डॉ फ ग्युसन और बरगेस के अनुसार हाथी गुंफा वाला खारवेल का शिलालेख ई.सन् पूर्व 300 का है।

[फरग्युशन और बरगेस द्वारा लिखित पुस्तक "केव—टेम्पल्स ऑफ इन्डिया पृ. ६७]

१७ पंक्तियों वाला राजा खारवेल के लेख में पंक्ति बारह मे यह उल्लेख है कि—नंदराजा द्वारा उड़ाकर ले जायी गयी 'कलिंगजिन' प्रतिमा को राजा खारवेल मगध से वापस लौटाकर जिन मंदिर निर्माण करवाकर उन प्रतिमा की प्रतिष्ठा करवायी थी।

संग्राहक और सम्पादक—मुनि जिन विजय की पुस्तक "प्राचीन जैन लेख संग्रह-प्रथम भाग।" मे राजा खारवेल द्वारा लेख दिया गया है। उसमें १२वीं पंक्ति इस प्रकार है—

नंदराजनितस अगजिन सन्निवेस .... गहरतनपडिहारहिग्र मगधे विसवु नयरि ....

(पंक्ति १३)........... विजाधरूलेखितंवरानि सिहुरानी निवेसयति ....

[मूल प्राकृत का संस्कृतानुवाद]

नंदराजनीतस्य अग्रजिनसन्निवेश.........मगधे वास्य नगरीं..............[पंक्ति १३]............. विद्याधरोल्लेखिताम्वर शिखराणिनिवेशयति।

[उक्त लेख का हिन्दी में अनुवाद]

नंदराजा द्वारा उड़ा ले गयी प्रथमजिन की प्रतिमा को...............मगध में एक शहर बसाकर ....स्थापित करता है (राजा खारवेल) ....(जिनमंदिर) के शिखर इतने उन्नत है कि उस पर बैठकर विद्याधर आकाश को खींचे !!

खारवेल के शिलालेख को सबसे पूर्व में यथार्थ पढ़ने वाले गुजराती विद्वान भगवान लाल हैं। बाद में श्री केशवलाल हर्षदराय ध्रुव (गुजराती साक्षर रत्न—महाकवि भास रचित "स्वप्न-वासवदत्ता" के "साचूं स्वप्न" नाम से गुजराती अनुवादक—इस ग्रंथ की प्रस्तावना में लिखते हैं कि—) ने इस लेख को सुवाच्य-सर्वग्राहक और पठनीय बनाया है, लिखते है कि—

इस लेख की १२ वी पंक्ति में लिखा है कि—"आदि तीर्थंकर ऋषभदेव की मूर्ति नंदराजा उठा ले गया था. उस प्रतिमा को पाटलिपुत्र के राजगृह से वापस लाकर जैन विजेता खारवेल ने भारी उत्सव पूर्वक उसकी स्थापना नूतन भव्य प्रासाद बनवाकर करदी।

[केशवलाल ह० ध्रुव का विवेचन प्राचीन लेख संग्रह० पृ० २८]

गुजराती साक्षर रत्न केशव लाल ह० ध्रुव आगे लिखते हैं कि—

ई० सन् पूर्व १६५ में कलिंग के राजा खारवेल ने मगध पर चढाई करी। वहाँ के

लोग साहसिक कहे जाते थे। (कालिंग साहसिक)। यहां की प्रजा मे ब्राह्मण, बौद्ध और जैन इन तीनो धर्म का प्रचार था। किन्तु परिवल जैनो का था। (कलिंग मे जैन निग्र्थो की सख्या ज्यादा थी) [देखिये—Watter's Yuan Chwang II P 198]

खारवेल और उनके पूर्वज जैन थे क्योंकि हाथी गुंफा लेख में राजा खारवेल ने जिनमदिर का निर्माण करवाया ऐसा उल्लेख है।

पुस्तक—प्राचीन भारतीय स्तूप, गुहा एव मदिर" के लेखक-प्रोफेसर डॉ वासुदेव उपाध्याय—(पटना विश्वविद्यालय)— का अभिप्राय है कि—

हाथी गुंफा प्राकृतिक होते हुए भी कुछ सुधारकर तैयार की गई और उसी पर उडीसा के राजा खारवेल का अभिलेख खुदा है जिसकी तिथी ईसा पूव १५७ मानी जाती है। [पृ० १७८]

उडीसा प्रदेश की राजधानी भुवनेश्वर के समीप उदयगिरी और खडगिरी को खोदकर राजा खारवेल द्वारा कई गुंफाएं तैयार की गई। जो ईसवी सन् पूव मे उत्कीर्ण हुई थी। [पृ० १७८]

हाथी गुंफा लेख मे इस बात का वणन है कि मगधराज को पराजित कर राजा खारवेल जैन तीर्थंकर की प्रतिमा उडीसा ले गया। [पृ० १७६]

पुस्तक— भारतीय इतिहास एक दृष्टि" के लेखक—डॉ० ज्योति प्रसाद जैन [पुस्तक प्रकाशन-भारतीय ज्ञानपीठ काशी] राजा खारवेल द्वारा निर्मित हाथी गुंफा के लेख के विषय में लिखते हैं कि—

कलिंग के सबसे प्राचीन उपलब्ध पुरातत्वावशेष जैन हैं और इस देश मे अत्यन्त प्राचीन काल से ही जैन तीर्थंकरों की प्रतिष्ठा रही प्रतीत होती है। इस देश और राज्य के इष्टदेव 'कलिंगजिन' कहलाते थे। विद्वानो में इस विषय मे मतभेद है कि ये 'कलिंगजिन' आदि या अग्रजिन प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव थे, भद्दलपुर (कलिंग देशस्य भद्रावनम् वा भद्रपुरम्) मे उत्पन्न दसवें तीर्थंकर शीतलनाथ थे अथवा २३ वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ थे। किन्तु महावीर के जन्म के पूर्व भी इस जनपद मे उक्त 'कलिंगजिन' की प्रतिष्ठा थी इसमे सन्देह नहीं है। [पृ०१८०-१८१]

महावीर निर्वाण सवत् १०३ (ई० सन् पूव ४२४) मे मगध नरेश नन्दिवधन ने कलिंग पर आक्रमण किया और उस राज्य को अपने साम्राज्य का अग बनाया। सम्भवतया वह स्वय जैनी था अत कलिंग की राजधानी में प्रतिष्ठित कलिंगजिन की भव्यमूर्ति को अपने साथ लिवा लाने और अपनी राजधानी पाटलीपुत्र मे प्रतिष्ठित करने का लोभ सवरण न कर सका। (पृ० १८१)

भगवान महावीर भी वहा (कलिंग के पहाड उदयगीरि-खडगिरि) पधारे थे और राजधानी कलिंग नगर के निकट कुमारीपर्वत पर उनका समवसरण लगा था। उपरोक्त घटनाओं की स्मति में उक्त स्थान पर स्तूपादि स्मारक बने थे और मुनियो के निवास के लिए गुंफाएं भी निर्मित हुई थी जो खारवेल के समय के बहुत पहले से वहाँ विद्यमान थी। इन सब बातो से विदित होता है, जैसा कि प्रो राखलदास बेनर्जी का भी मत है कि उडीसा प्रारम्भ से जैनधर्म का एक प्रमुख गढ था। वस्तुत इस प्रदेश मे आय सभ्यता और सस्कृति के प्रवेश का श्रेय जैनधर्म को है। (पृ० १८१)

सम्राट खारवेल ने कम से कम तेरह वर्ष पर्यन्त राज्य किया जिसका विशद वणन उसके स्वय के शिलालेख में प्राप्त है। सम्राट खारवेल का यह लेख उडीसा प्रदेश के पुरी जिले मे स्थित भुवनेश्वर से तीन मील की दूरी पर विद्यमान खडगिरि पवत पर हाथीगुंफा मे उत्कीर्ण है। १७ पक्तियो का यह महत्त्वपूर्ण लेख ८४ वर्ग फीट क्षेत्र मे लिखा हुआ है। (पृ० १८३)

उक्त लेख में ऐसा उल्लेख है कि—

आठवें वर्ष में वह यमुना तट पर पहुंचा। यमुना तट पर (मथुरा में) पहुंच कर पुष्पित पल्लवित कल्पवृक्ष सभी अधीनस्थ राजाओं तथा अश्व-गज-रथ-सैन्य सहित वह राजा सब गृहस्थों द्वारा पूजित स्तूप की पूजा करने जाता है।

उसने याचकों को दान दिया, ब्राह्मणों को भरपेट भोजन कराया और अरहन्तों की पूजा की। (पृ० १८५)।

बारहवे वर्ष में उसने उत्तरापथ के राजाओं में अपने आक्रमणों द्वारा आतंक उत्पन्न किया।

पूर्वकाल मे नंदराजा द्वारा अपहृत कलिंगजिन (या अग्रजिन) की प्रतिमा को तथा अंग-मगध-राज्यों के वहुमूल्य रत्नों एवं धन-सम्पत्ति को विजित सम्पत्ति के रूप मे अपने घर वापस लाया। उपायन तथा विजित धन के रूप में प्राप्त सम्पत्ति से उसने अपनी समृद्ध विजय के चिह्न स्वरूप ऐसे अनेक शिखर (मंदिर) बनवाये जिनमें रत्नादि सैकड़ों बहुमूल्य पदार्थों से पच्चीकारी की गयी थी। (पृ० १८६)

अन्त मे अपने राज्य के तेरहवें वर्ष में इस राजा ने सुपवंत विजय-चक्र (प्रान्त) में स्थित कुमारी पर्वत पर अपने राजभक्त प्रजाजनो द्वारा पूजे जाने के लिए उन अर्हन्तो की स्मृति में निषधकाएँ निर्माण करवायीं जो निर्वाण लाभ कर चुके थे। तपस्वी मुनियो के निवास करने के लिए गुफाएँ बनवायी, स्वयं उपासक (श्रावक) के व्रत ग्रहण किये और अर्हन्मन्दिर के निकट उसने एक सुन्दर विशाल सभा मण्डप (अर्कासन गुफा) बनवाया जिसके मध्य में एक बहुमूल्य रत्नजटित मानस्तंभ स्थापित किया गया। उक्तसभामण्डप में उसने उन समस्त सकृत सुविहित ज्ञानी तपस्वी श्रमणो (जैन मुनियों) का सम्मेलन किया जो चारों दिशाओं से दूर-दूर से उसमें सम्मिलित होने के लिए आये थे। इस मुनि-सम्मेलन में राजा ने भगवान की दिव्य ध्वनि में उच्चरित उस शान्ति दायी द्वादशाँग श्रुत का पाठ कराया। (पृ० १८७)

इन दो पहाडियों (खंडगिरी और उदयगिरीं) के आसपास जैन तीर्थंकरों एवं देवीं-देवताओं की अनगिनत प्राचीन खण्डित-अखण्डित मूर्तियां और विशाल मन्दिर, देवायतन, स्मारकों सरोवरो आदि के खण्डहर हाल मे हीं गोचर हुए हैं। कुछ मूर्तियों पर ब्राह्मी लिपि में लेख भी उत्कीर्ण है। इन अवशेषों से विदित होता है कि खारवेल के उपरान्त भी भौमकरों आदि के राज्य काल में गुप्तकाल के अन्त तक इस प्रदेश में जैनधर्म पूर्ववत् फलता-फूलता और राज्य मान्य वना रहा था। ऐसा प्रतीत होता है कि ८वीं शताब्दी से वाममार्ग, शैव और वैष्णव धर्मो के बढ़ते हुए प्रभाव ने इस केन्द्र को धीरे धीरे उजाड़ दिया। (पृ० १९२)

पुस्तक—जैनकला एवं स्थापत्य-खंड-१,

मूल (इंग्लिश में) संपादक—बंगाली विद्वान् अमलानंद घोष
(भूतपूर्व महानिदेशक-भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण)

हिन्दी संपादक—लक्ष्मीचन्द जैन,
(भारतीय ज्ञानपीठ-नई दिल्ली)

राजा खारवेल के प्रसिद्ध शिलालेख के विषय में लिखते हैं कि—

बहुत प्राचीन समय से कलिंग (जिसमें उड़ीसा का अधिकांश भाग सम्मिलित था) जैनधर्म का गढ़ था। कहा जाता है कि महावीर ने इस प्रदेश में भ्रमण किया था। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी मे ही कलिंग में जैनधर्म की नींव पड़ चुकी थी। यह बात कलिंग के चेदी राजवंश के महामेघवाहन कुल के तृतीय नरेश खारवेल (ईसा पूर्व प्रथमशती) के हाथी गुम्फा (भुवनेश्वर के निकट उदयगिरि

पहाडी की गुम्फाओ मे से एक) शिलालेख से सिद्ध होती है। इस शिलालेख मे जो अर्हंतो और सिद्धो को नमस्कार के साथ प्रारम्भ होता है, शक्तिशाली शासक (राजा खारवेल) यह बताता है कि–"वह कलिंग की उस तीथकर मूर्ति को पुन ले आ। जो पहले एक नन्दराजा द्वारा बल पूर्वक ले जायी गयी थी। (पृ०७७)

महामेघवाहनो के शासन काल मे उदयगिरी और खण्डगिरि पहाडियो के जैन अधिष्ठान की बहुत उन्नति हुई। हाथी गुम्फा लेख से यह स्पष्ट है कि खारवेल ने, जो जैन धर्मानुयायी था, बडे उत्साह के साथ इस धम के प्रचार हेतु कार्य किया। अपने शासन के तेरहवें वर्ष मे उसने न केवल कुमारी पर्वत (आधुनिक उदयगिरी) पर जैन मुनियो के लिए गुफाएँ बनवायी अपितु इन विहारो के समीप ही पहाडी के प्राग्भार पर एक मूल्यवान भवन (सम्भवत एक मदिर) का निर्माण करवाया जिसके लिए सुदूर खानो से प्रस्तर खण्ट लाये गये थे, और एक स्तम्भ भी बनवाया जिसके केन्द्र मे लहसुनिया मणि लगायी गयी थी।

(पृ०७७)

पुस्तक–'सेलक्ट इंस्क्रप्शन्स बियरिंग ओन इन्डियन हिस्ट्री एन्ड सिविलाइजेशन"

(1965–कलकत्ता पृ० २१३–२१)

मे लिखा है कि–

खारवेल के इस शिलालेख का अनेक विद्वानो ने सपादन किया है और उस पर अपनी राय व्यक्त की है, जिन मे सरकार भी है (दिनेशचद्र सरकार)।

गुजराती साक्षर रत्न, स्वप्नवासवदत्ता के गुजराती अनुवादक विद्वान केशवलाल हर्षदराय ध्रुव अपनी 'साधू स्वप्न' किताब की प्रस्तावना मे लिखते हैं कि–

उक्त तथ्य से इस सत्य की सिद्धि होती है कि जो ढूंढिये लोग '(स्थानकवासी जैन सम्प्रदाय विशेष) मूर्तिपूजा को स्वीकार नही करते हैं और कहते हैं कि जैनधर्म मे मूर्तिपूजा पीछे से घुसी है, इस विवाद ग्रस्त चर्चा का अत और निणय हो सकता है, कि जैन धर्म मे ई सन् पूर्व तीसरे सैके में भी 'मूर्तिपूजा यथाथ रीत से प्रचलित थी।

(प्राचीन जैन लेख सग्रह खड–१ पृ० ३८)

मेगेजिन 'एपिग्राफिक इन्डिका" October 1915 P 166

उदयगिरि का मूल नाम कुमार पवत और खडगिरि का नाम कुमारी पर्वत था। इससे यह सिद्ध होता है कि कुमारी पवत वह खडगिरि था और जिसके ऊपर राजा खारवेल ने निर्ग्रंथ श्रमणो की परिषद् भरी थी।

महामेघवाहन चक्रवर्ती राजा खारवेल के विषय मे अग्रेजी पुस्तक–

'A Comprehensive History of Jainism"
लेखक—Asim kumar Chatterjee
(Calcutta university)

लिखते है कि–"उडीसा हाथी गुम्फा से प्राप्त लेख से उक्त बात विदित होती है कि–ईसा से पूव ४थी शताब्दी मे "कलिग जिन" की प्रतिमा प्रसिद्ध थी, जिसको नदराजा उठा ले गया था। बाद में राजा खारवेल ने इसको वापस लौटायी थी।"

आसिम कुमार चेटरजी-बगाली विद्वान लिखते है कि–

King kharvele also, we are told, set up in his capital the Jina of kalinga (Kalinga Jina) which was taken away from kalinga by king Nanda

श्री महावीर जी तीर्थ के संस्थापक, श्री जोधराज जी दीवान

□ श्री कपूर चन्द जैन (हिण्डौन सिटी)

श्री जोधराज जी पल्लीवाल श्वेताम्बर जैन निवासी ग्राम हरसाना रियासत अलवर के मूल निवासी थे। इनका जन्म सम्वत् १७६० कार्तिक सुदी ५ तदनुसार १४ नवम्बर सोमवार सन् १७३३ को हरसाना ग्राम में हुआ था। इनका गोत्र डंडरियो चौधरी था। बाल्यकाल हरसाना मे व्यतीत होने के पश्चात किसी रिश्तेदार के सहयोग से भरतपुर पहुंच गये और वहां पर सुयोग पाकर राज्यसेवा में सम्मिलित हो गये। भरतपुर राज्य के इतिहास के अनुसार कई युद्धों में अपनी वीरता का प्रदर्शन करने के कारण पांच हजार घुडसवारों के सेनापति हुये ! और अपनी कुशाग्र बुद्धि से महाराजा केहरी सिंह (केसरी सिंह) के राज्यकाल में दीवान जैसे प्रतिष्ठता व जिम्मेदारी के पद पर आसीन हुये। श्री कैलाश चन्द जी जैन शास्त्री के कथनानुसार जो उन्होंने अपना लेख गोरखपुर से प्रकाशित प्रसिद्ध पत्र कल्याण वर्ष 31 संख्या 1 तीर्थांक में निम्न प्रकार प्रकाशित किया है कि एक दिन

The importance of this line of the inscription can hardly be overemphasised. It not shows that worship of Jain images we prectised in the 4th century B.c. (Before crist) but also demonstrates the weakness of the Nanda kings for his relegion. (P. 84)

उक्त सारे अभिलेख से जैनधर्म में मूर्तिपूजा ई. सन् पूर्व मे भी थी, इस सत्य तथ्य की पुष्टि होती है। सत्यान्वेषी को सत्यपथ समझने मे राजा खारवेल के शिलालेख द्वारा बल मिलेगा। सत्य-चाहक मूर्तिपूजा का सत्य जानें, और मानें यही शुभाशा।

● ●

भरतपुर राज्य के दीवान पल्लीवाल जातीय जोधराज जी किसी राजकीय झूठे मामले में पकड़े जाकर चादनगाव (श्री महावीर जी) रियासत जयपुर मे होकर गुजरे। उन्होने चादनगाव मे भूमि से निकली हुई अत्यन्त प्रभावक व सुदर श्री महावीर स्वामी भगवान की नयनरम्य प्रतिमा के दर्शन करके यह सकल्प किया कि यदि मैं मृत्यु दण्ड से बच गया तो मदिर बनवा कर उक्त प्रतिमा को बडी धूमधाम से प्रतिष्ठित कर दूगा। सुयोग एव अहोभाग्य से दीवान जी पर जो तोप चलाई गई थी उससे तीनो बार दीवान जी बाल बाल बच गये। तीनो बार तोप का गोला धूआ बनकर आकाश मे उड गया यह देख राजा आश्चर्य चकित रह गया तथा दीवान जी को ससम्मान रिहा किया।

तब उन्होंने उक्त सकल्प को पूरा करने को चादनगाव—(श्री महावीर जी) जिला सवाई माधोपुर (राजस्थान) मे तीन शिखरबन्धी जिनालय का निर्माण कराया और उसमे उपरोक्त जमीन से निकली हुई भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमा जी को विजय गच्छ के भट्टारक द्वारा प्रतिष्ठा करवा कर सस्थापित किया। दीवान जोधराज जी ने डीग मिरस व करमपुरा इत्यादि जगह भी मदिर बनवाये। जो आज भी विद्यमान है। डीग मदिर के लिये तो राज्य सरकार से आठ आना प्रतिदिन सेवा पूजा के लिये स्वीकृत करवायें जिसका पट्टा आज भी मौजूद है।

श्री जोधराज जी द्वारा महाराज केसरी सिंह के राज्यकाल मे तीन प्रतिमाओ की प्रतिष्ठा करवाई गई थी उनमें से एक मथुरा के सग्रहालय मे व दूसरी प्रतिमा भरतपुर शहर के जाति मोहल्ला के पल्लीवाल जैन श्वेताम्बर मदिर म मूलनायक भगवान के स्थान पर तथा तीसरी महावीर जी क्षेत्र मे आज भी मौजूद है।

श्री जोधराज जी द्वारा दो हस्तलिखित लिखवाई हुई प्रतियां भी आज मौजूद है। मूल पुस्तक आचाराग टीका एक नौगत दिगम्बर जैन शास्त्र भण्डार मे आज भी उपलब्ध है जिनकी प्रशस्ति इस प्रकार है आचाराग टीका लिपि कृतम् मिजु आसारामेण नगर बरोनी मध्ये लिखापित श्वेताम्बर आम्नाये विजय गच्छे पल्लीवाल न अन्वये जैन धर्म प्रतिपालक धर्म मूर्ति सुश्रावक श्री दीवान जोधराज जी तदेन पुस्तक-लिखापित डगियागोत्रे वासी हरमाना का मुवासी दीघपुर डीग लिपिकाल माघ सुदी १० सवत १८२७ है।

अमृत बिंदु

संकलनकर्ता–श्री हरीश मन्सुखलाल मेहता, जयपुर

- जो मनुष्य सभी कामनाओं को त्याग देता है और ममता एवं अहंकार को छोड़ देता है वही शान्ति पाता है। —अज्ञात
- परमेश्वर को कोई आंखों से नहीं देख सकता किन्तु हममें से हर कोई मन को पवित्र करके देख सकता है। —छान्दोग्य
- अवसर उनकी सहायता कभी नहीं करता जो अपनी सहायता स्वयं नहीं करते। —सफो क्लीज
- जब क्रोध आए तो उसके परिणाम पर विचार करें। —कन्फ्यूशियस
- अच्छी समझ और अच्छा स्वास्थ्य जीवन के दो वरदान है। —पी सायरस
- रत्न बिना रगड़ खाए नहीं चमकता इसी प्रकार मनुष्य बिना कठिन परीक्षा के पूर्ण नहीं होता। —चीनी सूक्ति
- श्रम (मेहनत) से हम अपने शोक को भूल जाते हैं। —सिसरो
- जिसे हम अपना दुःख और विपत्ति समझते हैं वह वास्तव में हमारा शत्रु नहीं मित्र है। —अज्ञात
- जो मनुष्य अपने मन का गुलाम बना रहता है वह कभी प्रभावशाली पुरुष नहीं हो सकता। —स्वेटमार्टन
- बड़प्पन सूट-बूट और ठाट-बाट में नहीं है। जिसकी आत्मा पवित्र है वही बड़ा है। —प्रेमचन्द
- सैकड़ों हाथों से इकट्ठा करो और हजारों हाथों से बाँटो। —अज्ञात
- जितनी बार हमारा पतन हो उतनी बार उठने में गौरव है। —गान्धी जी

- विश्व मे हमारी इच्छा ही तो मूलकर्ता है। —रविन्द्र नाथ टैगोर

- सबसे बढकर विरोग वही है जो निश्चित है। —रामप्रताप त्रिपाठी

- प्रकृति की अनुकूलता नही बल्कि सघर्ष और स्वय का प्रयास मनुष्य को किसी योग्य बनाता है। —विवेकानन्द

- मनुष्य केवल सुखी होना चाहे, तो उसकी इच्छा पूर्ण हो सकती है, किन्तु दिक्कत तो यह है कि हम औरो को अपने से ज्यादा सुखी समझकर उनसे भी अधिक सुखी होना चाहते हैं। —इमर्सन

- चरित्र ही गरीब की पू जी है। —सुकरात

- जो व्यक्ति अपने मुख और जिह्वा पर सयम रखता है, वह अपनी आत्मा को सन्तापो से बचाता है। —बाइबल

- इस सनातन नियम को याद रखो-यदि तुम प्राप्त करना चाहते हो तो कुछ अर्पित करना सीखो। —सुभापचन्द्र बोस

- सतत सफलता हमे ससार का केवल एक पक्ष दिखाती है। आपत्तियाँ इस चित्र का दूसरा पक्ष भी दिखा देती हैं। —कोल्टन

- हमारा उद्देश्य समाज की भलाई करना होना चाहिए, अपने गुणो का गान करना नही। —विवेकानन्द

- भलाई का बदला न देना क्रूरता है और उसका बुराई मे उत्तर देना पिशाचता है। —सेनेका

- ऐसा विचार कर के अफसोस मत करो कि विधाता का लिखा हुआ मिट नही सकता। —वाल्मीकि

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल, जयपुर

प्रगति के चरण

श्री अशोक जैन

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल, श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ जयपुर का ही एक अंग है। यह मण्डल युवकों का ही संगठन है जो समाज में धार्मिक एवं सामाजिक स्तर पर कार्य कर रहा है।

इस वर्ष अध्यक्ष श्री सुरेश मेहता के सान्निध्य में मण्डल की प्रगति को चार चाँद लगे।

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल के तत्वाधान में की गई सवालाख फूलों की अंगरचना का दृश्य

इस वर्ष आचार्य भगवन्त श्री मद्विजय हींकार सूरीश्वर जी महाराज एवं पन्यास श्री पुरन्दर विजय जी (ठाणा 2) के स्वागत के साथ (बैण्ड बाजे एवं लवाजमें) चातुर्मास का प्रारम्भ आत्मानन्द सभा भवन मे मगलमय प्रवेश के साथ हुआ उन्हे जुलूस के रुप में आत्मानन्द सभा भवन में लाया गया। महाराज श्री के चातुर्मास काल मे धर्म प्रभावना की ऐसी झंडी लगी कि उन्हें भूलना मुश्किल है। महाराज श्री की प्रेरणा से सवा लाख फूलों की आंगी (तीन वार) एवं 125 । ग्लासयुक्त दीपकों की आंगी के भव्य आयोजन हुए। ये कार्यक्रम इतने भव्य रहे कि दर्शनार्थियों का जमघट

उमड पडा। इस कारण मण्डल के कार्यकर्ताओं को व्यवस्था करने के लिए भूझना पडा। इस अवसर पर मण्डल परिवार ने बैण्ड बजाकर माहोल अति सुन्दर बना दिया। ऐसे आयोजन को जयपुर के इतिहास मे लिखा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

चातुर्मास काल मे सामूहिक स्नान पूजा का आयोजन वाध्ययन्त्रों के साथ किया गया जिसमे मन्डल के सदस्य पूर्ण रुप से भाग लेकर उसे सफल बनाने में सलग्न रह। जिसकी कि उदाहरणाथ सख्या 100 से ऊपर पहुचना इस बात का प्रमाण है।

पर्यूषण पर्व मे रात्रि मे भक्ति सध्या आयोजित की। साथ ही पोथा जी का जुलूस, रात्रि जागरण का कार्यक्रम आदि मे मण्डल के सदस्यो ने सुन्दर भजनो, नृत्यो के साथ भक्ति भाव के कार्यक्रम प्रस्तुत किये जिसे देखने के लिए विशाल जनसमूह उमड पडा। मण्डल की ओर से भगवान महावीर के जन्म वाचन दिवस पर मण्डल के सक्रिय कार्यकर्त्ता श्री सुनील कुमार चोरडिया, श्री सुनील कुमार भडकतिया, श्री ज्ञानचन्द भण्डारी एव श्री शान्ती सिन्धी का श्रीमान श्रीचन्द जी सा० डागा ने पुरस्कार देकर बहुमान किया। साथ ही मण्डल के आगी रचना के सक्रिय कार्यकर्त्ता को भी चादी के सिक्के देकर सम्मानित किया गया।

मण्डल के सदस्यो ने जनता कालोनी के मन्दिर, चन्द्र प्रभु भगवान का मन्दिर, आमेर एव चदलाई मन्दिर के वार्षिकोत्सव के कार्यक्रमों को अपने जिम्मे लेकर सुन्दर व्यवस्थाए की। आमेर की जिम्मे ली गई पृथक व्यवस्था मण्डल के सदस्यो के सहयोग से इतनी सफल रही कि आज तक ऐसी व्यवस्था वहा पर नहीं हो पाई। इसके लिए मण्डल के सभी कार्यकर्त्ता बधाई के पात्र हैं। चन्दलाई मन्दिर की वर्षगाठ पर मण्डल ने व्यवस्था के साथ शिखर पर ध्वज दण्ड चढाने की सामूहिक बोली लेकर बैण्ड बाजे के साथ चढाने का लाभ सामूहिक रुप मे लिया।

मण्डल के कार्यकर्ताओं की जागृत भावना की एक कडी और जुडी जिससे कि मण्डल के तत्वावधान मे जयपुर एव उसके आसपास दर्शनीय मन्दिर के

श्री आत्मानन्द जैन सेवक के कार्यकर्त्ताओ का समूह

दर्शनों एवं सेवा पूजा का लाभ लेने हेतु 'एक दिवसीय' यात्रा आयोजित की गई। स्थान सीमित होते हुए भी आठ बसों द्वारा इस यात्रा की सुन्दर व्यवस्था की गई जिसमे कि प्रातःकालीन नाश्ता, दोपहर में भोजन एव सायं चाय नाश्ते की सुन्दर व्यवस्था की गई। ये सभी मण्डल के कार्यकर्त्ताओं के समुचित मार्गदर्शन एवं सगठन का प्रमाण था कि ऐसा आयोजन प्रथम बार मे ही लोगों के लिए प्रेरणादायी वन गया। चन्दलाई में मण्डल के अध्यक्ष श्री सुरेश मेहता एवं सचिव श्री अशोक जैन का श्री जैन श्वेताम्वर तपागच्छ सघ के अध्यक्ष श्री हीरा चन्द जी एम० चौधरी ने वहुमान किया।

मण्डल ने वरखेड़ा ग्राम में स्थित ऋषभदेव भगवान के वार्षिक उत्सव पर यातायात व्यवस्था एवं भोजन व्यवस्था अति सुन्दर ढंग से की।

मण्डल ने शिक्षा क्षेत्र की प्रवृत्ति को भी जारी रखा है जिसमे निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण साथ ही जिन छात्र-छात्राओ की फीस उनके परिवारजन देने मे सक्षम न थे ऐसे विद्यार्थियो की फीस एवं ड्रेस मण्डल की तरफ से देकर ऐसी व्यवस्था की कि उनकी शिक्षा मे विघ्न न पडे। ऐसे विद्यार्थियों को जिनको आर्थिक सहायता प्रदान की गई उनके नाम पूर्ण रुप से गुप्त रखे है।

युवको को रोजगार दिलवाने हेतु ग्रीष्म अवकाश मे योजनाएं चला कर रोजगार के अवसर प्रदान किये है जिससे युवकों को स्वावलम्वी वनने मे प्रेरण दायक वन सके। साथ ही मण्डल ने महिलाओं को रोजगार के लिए भी इस क्षेत्र मे जैन महिला उद्योग के साथ सामञ्जस्य करके महिलाओं को रोजगार के अवसर दिलवाये है ताकि महिलाएं स्वावलम्वी वनें। श्री जैन महिला उद्योग केन्द्र भी निरन्तर प्रगति के पथ पर है। जिसकी कि कार्यकारिणी में मण्डल के वरिष्ठ कार्यकर्ता इसमें जुड़े हुए हैं। इस वर्ष ग्रीष्मकालीन शिविर का आयोजन मण्डल के कार्यकर्त्ता श्री नरेन्द्र कुमार कोचर ने मोती पुआई का प्रशिक्षण 125 छात्राओं को देकर स्वावलम्वी बनने की ओर प्रेरित किया। उनके द्वारा सिखाई गई चीजें उत्कृष्ट कृतियां कहलाने योग्य रही। श्री कोचर को हार्दिक वधाई।

जयपुर में मोती डुंगरी दादाबाडी में आयोजित शरदकालीन धार्मिक शिविर जो प्रसिद्ध शिविर संचालक कुमारपाल भाई के निर्देशन मे लगा उसमें भी मण्डल के सदस्यों ने भाग लेकर पुरस्कार प्राप्त किये। पुरस्कार प्राप्तकर्ताओ को वधाई। शिविर संचालक कुमारपाल भाई के नेतृत्व में भी संघ द्वारा उनका स्वागत किया गया उसमें भी मडल ने अपना भरपूर सहयोग प्रदान किया।

मण्डल की गतिविधियां केवल जयपुर तक ही सिमित न रखकर हमने वाहर भी दिशा प्राप्त करने की कोशिस की है। किशनगढ में आयोजित "प्रतिष्ठा महोत्सव" पर 31 हजार पुष्प एव 281 दीपक युक्त ग्लासो की झांकी का आयोजन वहां जाकर किया जो कि साध्वी महाराज सा. देवेन्द्र श्री जी के 28वे दीक्षा वर्षगाठ के उपलक्ष में आयोजित किया गया। साथ ही मण्डल के मार्ग-दर्शन एवं प्रेरणा से सभवनाथ मण्डल, किशनगढ की स्थापना हुई।

आशा है कि आप सभी वडे वुजुर्गो का मार्ग दर्शन मण्डल को मिलेगा, साथ ही आप मण्डल को तन-मन-धन से सहयोग प्रदान करते रहेंगे।

मण्डल की गतिविधियां सुन्दर ढग से चल रही हैं। इसके लिए मण्डल श्री जैन श्वे० तपा-गच्छ सघ की महा समिति, अध्यक्ष श्रीमान् हीरा चन्द जी चौधरी तथा संघ मंत्री श्रीमान् मोतीलाल जी भडकतिया का धन्यवाद किए बिना नहीं रह सकता है जिनकी प्रेरणा व सहयोग से आज मण्डल प्रगति कर रहा है। आशा है मण्डल परिवार को श्री संघ का सदैव पूर्ण सहयोग मिलता रहेगा।

अनमोल वचन

□ संग्रहकर्ता—श्री भगवानजी भाई वीरपाल शाह, अहमदाबाद

स्वय का मन सरल, शुद्ध है या नही इसको परखने के लिए हमे अग्रलिखित प्रयोगो को समय-समय पर करना चाहिए —

१– स्वय की आत्मा जो कुछ कहती है उसका अनुसरण वाणी और कार्य मे होता है या नही ? कदाचित किसी प्रसग मे उसका पूर्णतया पालन नही होता तो आत्मा की आवाज को छुपाने के लिए कितने दभ, ढोग के प्रयास करते हैं। कहा भी गया है —

"Self-conscious is the best judge in the world".

२– किसी का सुख देखकर हमे हर्ष होता है या ईर्ष्या।

३– किसी का भी दु ख देखकर मन मे क्या प्रतिक्रिया होती है।

४– जीव मात्र की कल्याण करने की उच्च भावना दिन रात में कितनी बार मन मे आती है।

५– किसी की निन्दा सुनने या करने मे मन को हर्ष होता है या विषाद।

६– किसी की प्रशसा करना या सुनना मन को पसन्द है या नही।

कुछ करने योग्य

१- प्यासे को पानी
२- भूखे को भोजन
३- रोगी को दवाई
४- बेरोजगार को रोजगार
५- नि वस्त्र को वस्त्र
६- पशु-पक्षी की रक्षा
७- निराश हताश को प्रेम
८- निरक्षर को अक्षर ज्ञान

★★★★

धर्म का प्राण मैत्री भाव

मुनि श्री कीर्ति चन्द विजयजी म० सा०

धर्मी के रूप में अपने आपकी पहचान करना, सबको पसंद है।

'मैं अधर्मी हूं" ऐसा मानना व मनाना, किसी को भी नहीं रुचता'। वास्तविक दृष्टि से धर्मी बनना कितना प्रसंद है? धर्मी बनने के लिए अन्तर कितना तड़फ रहा है, यह जाँच करना अत्यावश्यक है।

धर्म का प्रादुर्भाव चित्त भूमि में होता है— "चित्तप्रभवो धर्म"। चित्त में धर्म उत्पन्न हो इस हेतु से बाह्य तप त्यागादि अनुष्ठानों का आ सेवन करने का है। विधिपूर्वक शास्त्रोक्त क्रिया करने से ही शुभ भाव की उत्पत्ति होती है।

जिनेश्वर परमात्मा, उनके बताए हुए दानादि धर्म, परमपद उपदेशक निर्ग्रन्थ साधु भगवंत व सार्धमिकों के प्रति आदर-बहुमान भक्ति भाव पैदा हो, जीव मात्र के प्रति मैत्री भाव विकस्वर बने, सांसारिक क्षणिक सुखों का राग भयंकर लगे अनादि के काम-क्रोध, मद-मत्सर आदि कुसंस्कारों को निर्मूल बनाने के लिए मन प्रोत्साहित व प्रवृत्त बने।

इस प्रकार के चित्त में प्रगट होते हुए शुभ मनोरथ, पवित्रभाव और तदनुसार जीवन जीने का परम पुरुषार्थ यह धर्म हैं।

वर्तमान जीवन व्यवहार में चक्र की भांति प्रभु-दर्शन-पूजन-जाप, धर्म-क्रिया, दान-तपादि धर्म अनुष्ठान का सेवन बहुत हो रहा है, लेकिन दोष विनाश व गुण विकाश का लक्ष्य ही न हो और वर्षों तक धर्म क्रियाओं का सेवन करने पर भी रागादि-आंतरिक शत्रुओं पर आंतरिक विजय भी प्राप्त न हो, जीवों के दुःखों को देख कर हृदय द्रवित न बनता हो (बने) तो हमारे चित्त में धर्म प्रकट हुआ है या नही यह सोचनीय है?

सिर्फ अपने को ही सुखी बनाने की वृत्ति व प्रवृत्ति करने वाले में धर्म प्रकट नहीं हो सकता। धर्म का जीवन में प्रारम्भ तब ही शक्य बन सकता है जब अपनी संकुचित स्वार्थ वृत्ति की कोठी में से निकल कर, स्व संबंधी विचारों का परित्याग करके सर्व के सुख-दुःख का विचार करें।

अपने अनुष्ठान को वास्तविक धर्म युक्त बनाने के लिए जगत के सकल जीवों के साथ मैत्री अपनाओ। एक भी जीवात्मा की उपेक्षा मत करो....। एक की उपेक्षा सर्व की उपेक्षा है ......एक का स्वीकार सर्व का स्वीकार है "जो मां पडिवन्नई सो सव्व"! परमात्मा के सच्चे भक्त वो ही बन सकते है जो प्रत्येक जीवात्मा के परम मित्र बनते है।

जीव व शिव में भेद नही है "न भेदः जीव शिवयोः"। आज जो अपने को भेद दिखाई दे रहा है वो तो कर्मकृत् है, हकीकत में एक सुवर्ण शुद्धि-विहीन है दूसरा शुद्ध पूर्ण है। जिसको जीव में शिव के दर्शन होते है वो ही शिव बन सकता है!

अन्तर को टटोलो, और अन्तरात्मा को पूछो....जगत के जीवात्मा कैसे लगते हैं ? उनके सुख-दुःख से अपन सुखी-दुःखी बन जाते हैं ? अपनी निद्रा हराम होती है ? खाना-पीना छूट जाता है ?

एक माता को अपने पुत्र पर जो हार्दिक प्यार होता है ... वैसा प्यार जगत के जीवो पर होना चाहिए.... । जगत के जीवो की हित भावना के बिना अपना हित नही हो सकता । अपने जीवन का प्रत्येक व्यवहार जगत जीवो के हित को प्रधान बनाकर होगा....तब ही अपनी मुक्ति निकट आयेगी !

छोटे से छोटे जीवो मे एक अपेक्षा से ऐसी शक्ति रही हुई है कि वो अपने को दुर्गति व सद्गति के प्रति प्रस्थान करा सके ! यदि जीवो का अपन रक्षण करें तो इस अहिंसा के शुभ भाव द्वारा सद्गति प्रयाण मे जीव निमित्त बनते है और यदि हिंसा करें तो हिंसा पाप के कारण दुर्गति का कारण भी वही जीव बन सकता है ।

यह मत समझना कि यह छोटा प्राणी है इसकी उपेक्षा करने मे कोई हरकत नही !

घडी का एक कांटा छोटा है उसे छोटा मानकर फेंक दो, तो घडी वास्तविक समय नहीं बता सकेगी ....उसी तरह जब तक एक भी जीव के साथ अमैत्री है तब तक कभी भी किसी को भी किसी भी काल मे मोक्ष प्राप्त नही हो सकता ! आज तक जितने तीर्थंकर बने हैं वे सब "सविजीव करू शासन रसी" की परमोत्कृष्ट भावना के बल से ही बने है ।

अभव्यात्मा का कभी मोक्ष नही होता, वह कभी भी शासन का रसीक नहीं बनता, फिर भी भगवान ने अभव्यात्मा को बबाद करके यह नही कहा कि "भवि जीव करू शासन रसी" !

अत. श्री तीर्थंकर परमात्मा को भी तीर्थंकर बनाने मे जगत के समस्त जीवो के प्रति का हित-भादकरणा भाव ही निमित्त भूत बनता है !

धर्मकल्पवृक्ष का मूल मैत्र्यादि भाव ही है। मूल ही यदि जीवन मे से नष्ट हो जाय तो धर्मवृक्ष टिकेगा किसके आधार पर ? जीव मैत्री-आदि-भाव युक्त किया हुआ अनुष्ठान ही वास्तविक धर्म-अनुष्ठान बनता है —

इसलिए मैत्री-प्रमोद-करुणा और माध्यस्थ्य भावना का अभ्यास करना अत्यन्त आवश्यक है, उसके बिना धर्म-नीरस-निष्फल बनता है !

(1) मैत्री याने सर्व जीवो के हित-कल्याण की कामना । सर्व जीव मेरे भाई हैं, बन्धु हैं मित्र हैं, सबके साथ मेरा मित्रता का सबध है, किसी के साथ वैर-विरोध नही है !

(2) प्रमोद—गुणी जनो के प्रति प्रमोद-रूप होना ।

(3) करुणा—दुःखिओ का दुःख दूर करना ।

(4) माध्यम—दुष्ट-पापी जीवो के प्रति मध्यस्थ रहना याने समभाव रखना ।

ये चारो भावनाए अपने जीवन मे प्रसन्नता पैदा करके क्षमादि गुणो को पुष्ट बनाती है, क्रोधादि दोषो पर विजय दिलाती है ।

शेष पृष्ठ संख्या 76 पर

'चिन्तन-मनन के क्षणों में'

□ श्री धनरूपमल नागोरी, एम. ए., बी. एड. 'साहित्यरत्न'

हम मानव कैसे ?

संसार में अनेकानेक मानव हैं। उन मानवियों में कुछ तो आम के पेड़ के समान है, जो चिर प्रतीक्षा वाद मधुर फल अवश्य देते हैं। जिसने उसे लगाया तथा आने वाले सबको एक समान फल व छाया देकर उपकृत करते है। कुछ मानवी ऐसे हैं जो द्राक्षालता की वेल के समान होते है, जो सेवा करने वाले को शीघ्र फल प्रदान करते है और कुछ ऐसे हैं जो अपनी स्वार्थ सिद्धि में लगे रहते हैं कोई कितनी भी उनकी सेवा करे, कुछ नहीं देते। सहानुभूति के दो शब्द भी उनके पास देने को नही होते। ऐसे मानव पशुवत् होते हैं। जो स्वयं चरते हैं, दूसरे की चिन्ता नही करते। किन्तु कुछ अकारण ही बन्धु होते हैं जो सेवा करवाते नही, लेकिन हर समय देते रहते है निर्मल स्रोत की तरह। जो निरन्तर वहता रहता है, कोई भी आए और प्यास बुझाए। उसे किसी से कोई वास्ता नही। क्या हम अपनी मानवता का इसी आधार पर परिक्षण करेंगे ?

सुविधा, दुख एवं आनंद:

कष्ट के अभाव का नाम सुविधा है। संतोष आनन्द की उपलब्धि है। जहाँ चाह है वहाँ दुख है, क्योंकि वहाँ अभाव है। आत्मा सभी अभावों का अभाव चाहती है। अभाव का पूर्ण अभाव ही आनन्द है। लेकिन वह आनन्द, आनन्द नही जिसे प्राप्त करने पर और आनन्द प्राप्ति शेष रह जाती है। जिस प्रकार वह पानी, पानी नहीं जिसे पीने पर प्यास और बढ़ जाती हो, इसीलिए तो क्राइस्ट ने कहा है "आओ। मैं तुम्हें उस कुएँ का पानी दूं, जिसे पीने से प्यास हमेशा के लिए मिट जाती है। इच्छाओं को पूरी करके शांति व आनन्द प्राप्त करना तो छलनी में जल भर कर प्यास बुझाने के समान है।

संसार से निर्लिप्तता :

जिस प्रकार किसी यजमान के यहाँ कोई मेहमान जाए और यजमान उसकी अच्छी सेवा शुश्रुषा करे, फिर भी मेहमान उसके मोह में न फँसकर उससे निर्लिप्त उसे छोड़कर चला जाता है और यजमान उसे बड़े प्रेम से विदा देता है, उसी प्रकार संसार से निर्लिप्तता हो तो जीवन कैसा आनन्दमय बन जाए ?

स्थित प्रज्ञ पुरुष एवं सुख दुख का अनुभव :

संसार में जो जीव पानी वाले नारियल के समान होता है, यानी देहरुपी काचली के साथ जिसका आत्मा रूपी खोपरा चिपका हुआ होता है, उसे सुख दुख का अनुभव अवश्य होता है। किन्तु, जो गड़गड़िया नारियल की तरह होता है अर्थात् जिसमें कांचली से पृथक् गोला होता है, उसके समान जो होता है, वह स्थित प्रज्ञ होता है। उसे

सुख दुख का अनुभव नहीं होता, क्योंकि उसकी आत्मा शरीर मे रहते हुए भी शरीर से भिन्न रहती है। उसे भिन्नता का प्रतिभास होता रहता है।

एक बार रमण महर्षि जगल मे गये। वहा वे खूब घूमे। आनन्द मे मस्त हो गये। इतने मे ही एक झाडी मे से मधुमक्खियाँ उडी। उडती हुई मक्खियो ने उन्हे डक मार दिये। वे शान्त बैठे रहे। उनका सारा शरीर सूज गया, किन्तु उन्होने उफ तक नही किया। यह है स्थित प्रज्ञता।

'महल मे आग लगी, यह समाचार सुनकर भी जनक राजा तो ज्ञान चर्चा मे बैठे रहे, लेकिन शुकदेव जी हिल उठे। दरवाजे पर रखी तू बडी और लकडी पर उनका ध्यान गया और लेने चल पड। जनकराज ने पूछा शुकदेवजी! कहा चले? शुकदेवजी ने कहा मेरी लकडी और तू बडी जल न जाय अत उन्हे ले आऊ। जनक राज यह सुनकर हँस पडे। उन्होने कहा 'मेरा महल जल रहा है, उसकी मुझे चिन्ता नही और आपको दो वस्तुओ की इतनी चिन्ता? सुनकर शुकदेवजी सहम गये। राजा जनक की स्थित प्रज्ञता की मन ही मन प्रशसा करने लगे।

परमात्मा महावीर को कितने उपसर्ग हुए? लेकिन वे अपने ध्यान से लेशमात्र भी चलायमान नही हुए, यह थी उत्कृष्ट स्थित प्रज्ञता। क्या हम भी अपने जीवन मे शरीर एव आत्मा की भिन्नता को समझते हुए स्थित प्रज्ञ बनने का प्रयास करेंगे?

पृष्ठ स 74 का शेष

मैत्री—यह क्षमा गुण को पुष्ट बनाती है क्रोध पर विजय प्राप्त कराती है।
करुणा—यह सरलता „ „ „ „ मान „ „ „ „ „ ।
माध्यस्थ्य—यह सतोष „ „ „ „ लोभ „ „ „ „ „ ।

इसलिए उपरोक्त भावनाओ को पुष्ट बनाने के लिए ही पर्युषणपर्व मे पाच कर्त्तव्यो का पालन करना आवश्यक है। अमारि, सार्धमिक भक्ति, क्षमापना, अठ्ठम तप और चैत्य परिपाटी।

- ☐ अमारि से करुणा श्रोत बहता है, बढता है।
- ☐ सार्धमिक भक्ति मे प्रमोद-आनद की वृद्धि होती है।
- ☐ क्षमापना से मैत्री भाव पुष्ट बनता है और माध्यस्थ्य भाव की वृद्धि होती है।
- ☐ चैत्य परिपाटी—भगवद् भक्ति व अठ्ठम के तप से चारो भावनाए अत्यत पुष्ट बनती है, चारो भावनाओ की वृद्धि होती है।

सब गुणो मे क्षमा गुण प्रधान होने से अपने गुरु भगवन क्षमाश्रमण कहलाते हैं।

क्षमागुण की वृद्धि से सब गुणों में वृद्धि होती है। सर्व जीवो के साथ सावत्सरिक क्षमापन करके अपने सब क्षमागुण को विकसित बनायें, परस्पर स्नेह (मैत्री) को पुष्ट बनायें यही एक हार्दिक अभिलाषा।

हम सुखी कैसे बनें

□ श्री मनोहर मल लुणावत

सभी जीव इस असार संसार में सुख की अभिलाषा रखते हैं किन्तु सच्चे सुख के स्वरूप से अनभिज्ञ होने से कृत्रिम सुख की प्राप्ति में ही संतोष मानते हुये मृत्यु के आगमन पर अत्यन्त निराश हो जाते हैं। सच पूछा जाये तो संसार की भौतिक वस्तुओ मे सुख की कल्पना करते हुये ही मानव ने अनंत जन्म मरण कर दिये किन्तु प्राप्ति के अनेक साधन प्राप्त होने पर भी वह सुखी नहीं बन सका। जन्म मरण के निवारण के सिवाय वास्तविक सुख की कल्पना आकाश कुसुमवत समान है। वास्तव में भौतिक साधन क्षणिक एवं अनित्य हैं अतः जो स्वयं क्षणिक व अनित्य है उनसे शाश्वत सुख की आशा कैसे रखी जा सकती है।

जब तक आत्मा कर्मो से मुक्त होकर सिद्ध पद को प्राप्त न करले वहां तक सच्चा सुख प्राप्त हो नहीं सकता। अज्ञानी जीव कृत्रिम सुख (दुःख) को ही सुख मानता है। ऐसे जीवों की मिथ्या श्रद्धा हटाकर वास्तविक सुख प्राप्त कराने के लिये महर्षियों ने सामायिक प्रतिक्रमण व देवाधि देव जिनेश्वर देव की स्तुति एवं स्त्रोत की संकलना की है जिसका आचरण कर अनेक भव्य जीवों ने कर्मो से मुक्त होकर शाश्वत सुख प्राप्त किया है। मानव ने तप, त्याग, योग साधना आदि की कठोरता का विचार करके उनके आचरण करने में अपने आपको असमर्थ और अशक्त सा अनुभव किया है। ऐसी स्थिति में पूर्व महा-पुरुषों ने प्रभु भक्ति का मार्ग भी उतना ही उपयोगी बतलाया है। तप त्याग के कठोर मार्ग की अपेक्षा यह सरल साधन सर्वाधिक प्रिय और रुचिकर है। तीर्थंकर परमात्मा देवाधदेव की भक्ति करते हुये अनेक आत्मायें शाश्वत सुख के पथ पर गति-शील हुई है। राजा रावण ने अष्टापद तीर्थ पर धिराजमान तीर्थंकर देवों की भक्ति कर तीर्थंकर नाम गोत्र बांधा ऐसा वर्णन जैन शास्त्रों मे है। राजा श्रेणिक ने भी तीर्थंकर देव की आराधना से ही तीर्थंकर गोत्र बांधा ऐसा जैन शास्त्रों में उल्लेख है।

जगत में सर्वत्र जो विषमता दृष्टिगोचर होती है, इसकी दार्शनिक समीक्षा करने पर जैन मह-र्षियों ने कर्म सिद्धान्त को ही इसका एक मात्र कारण माना है। आत्मा, अजर अमर और अवि-नाशी है। इसके लिये न तो जन्म है और न मृत्यु। पुन : पुनः शरीर को धारणा करती है। पूर्व जन्म में जिस प्रकार के कर्म किये हैं उसी के अनुसार उसको सुख दुःख की प्राप्ती होती है। सुकृत कर्मो के फल से वह सुखी होता है और दुष्कृत कर्मों के फल उसे दुःखी बनाते हैं। जो जैसा कर्म करेगा वैसा ही उसे फल प्राप्त होगा।

अतः दुखों से घबराओ मत, बल्कि उसको शान्ति पूर्वक सहन करो और मन में यह जानकर सुखी हो कि कर्म फल का भोग हो गया यह बहुत उत्तम हुआ।

सच पूछा जावे तो हमारे पहले के किये हुये अच्छे बुरे कर्म ही अनुकूल अथवा प्रतिकूल रूप से हमारे सामने आते हैं और हमारे लिये दुख सुख का कारण बनते हैं। अत इस जीवन में जो कुछ भी सुख दुख हम भोग चुके है, भोग रहे हैं तथा आगे के जीवन में भोगेंगे वे सब हमारे ही कर्मों के फल हैं क्योंकि आत्मा तथा कर्म का सम्बन्ध अनादिकाल से है। प्रत्येक समय पुराने कर्म अपना फल देकर आत्मा से अलग होते रहते हैं और आत्मा के राग के वाद भावों के द्वारा नये कर्म बंधते रहते हैं। यह क्रम तब तक चलता रहेगा जबतक आत्मा की मुक्ति नहीं होती। अत सच्चा सुख तो मोक्ष प्राप्ती में ही हैं। फिर भी सुखी बनने के लिये हमे दुष्कृतों का त्याग तथा सुकृत करने की हमेशा भावना रखनी चाहिये। अत प्रत्येक श्रावक श्राविकाओं को निम्न दुष्कृतों का त्याग अवश्य करना चाहिये –

1 रात्रि भोजन का त्याग
2 कन्दमूल का त्याग
3 मधु, मदिरा, मांस तथा मक्खन यह चार विगय का त्याग
4 पर स्त्री का त्याग
5 झूठ कभी बोलना नहीं
6 चोरी कभी करना नहीं
7 किसी जीव को मारना नहीं
8 किसी से राग द्वेष नहीं रखना
9 क्रोध, मान, माया एव लोभ का त्याग

इसी प्रकार प्रत्येक श्रावक श्राविकाओं को निम्न सुकृत करने के लिए प्रयत्न अवश्य करना चाहिये।

(1) प्रातःकाल सामायिक करना चाहिये और उसमे नवकार का जाप अवश्य करना चाहिये क्योंकि इसमे दुखों का नाश एव सब इच्छायें पूर्ण होती हैं।

(2) प्रतिदिन देवाधि देव का मन्दिर में दर्शन वन्दन व पूजा अवश्य करनी चाहिये।

(3) साधु साध्वी महाराज का योग हो तो उनके भी दर्शन, वन्दन तथा व्याख्यान अवश्य सुनना चाहिये तथा उसकी सेवा भक्ति करनी चाहिये।

(4) अष्ठमी तथा चतुर्दशी का उपवास या आयम्बिल करना चाहिये लेकिन नवकारसी का पच्चक्खान तो अवश्यमेव करना चाहिये क्योंकि तप निकाचित कर्मों को जलाने वाली अग्नि है।

(5) प्रतिदिन शाम को प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिये क्योंकि यह अशुभ भाव से शुभ भाव में लाने की एक प्रक्रिया है।

(6) वर्ष भर में एक बार अवश्य शत्रुंजय, गिरनार सम्मेद शिखर पावापुरी राजगीरी आदि किसी प्रसिद्ध जैन तीर्थों की यात्रा करनी चाहिये क्योंकि यहा तीर्थंकर परमात्माओं के पवित्र परमाणुओं की रज बिखरी पड़ी है अत इन क्षेत्रों की स्पर्शना भाग्य शालियो को ही उपलब्ध होती है। पंच महाव्रत धारी साधु साध्वी को निर्दोष आहार पानी वस्त्र, पात्र, औषधि आदि देकर सुपात्र दान का लाभ लेना चाहिये। इसी प्रकार मूक प्राणियों को अभयदान और गरीबों को अन्नदान व वस्त्र दान देना चाहिये।

(8) साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका जिन मूर्ति, जैन मन्दिर और जिन आगम इन सातों क्षेत्रों के लिये तन मन धन से अपनी सेवायें अर्पित करनी चाहिये।

(9) श्रावक के बारह व्रत लेकर उनका नियमानुसार पालन करना चाहिये।

अगर हम उपरोक्त वर्णित दुष्कृतो का त्याग तथा सुकृत करने की भावना रखेंगे तो हम दिनो दिन पुन्य करते हुए अन्त मे शाश्वत सुख प्राप्त करेंगे इसमे कोई सन्देह नहीं है।

नेत्रदान परमदान है

□ कु० छाया वी. शाह, जयपुर

मानव एक सामाजिक प्राणि है जो कि इस संसार रूपी चक्रव्यूह में अपना चक्कर किसी न किसी रूप में पूरा करता है। मानव संसार में सबसे शक्तिशाली, बुद्धिशाली पशु माना जाता है। विज्ञान ने उसे कहां से कहां पहुंचा दिया है। विज्ञान रूपी मोमवत्ती अपनी लो हमेशा प्रज्ज्वलित करती रहेगी। कहते हैं आत्मा अमर है और शरीर नश्वर है। नश्वर शरीर में विज्ञान ने ऐसी एक शोध की है जिससे किसी जीवित प्राणि की आंखों को अमर (रोशनी) दिला सकते हैं।

जी हां किसी नश्वर देह में से उसकी आंख रूपी रत्न को निकाल कर 48 घण्टे के भीतर किसी अंधे प्राणि की आंखों में रत्न को जड़ दिया जाये तो उसे हमेशा के लिए रोशनी मिल सकती है। प्रत्येक मानव अपने जीवन में अच्छे कार्य करने की अभिलाषा रखता है जिससे उसका जीवन सफल हो या उसका अगला (आनेवाला) जीवन भी अच्छा हो। लेकिन हम नेत्रदान करते हैं तो हमारा जीवन तो सफल होता ही है साथ ही साथ दूसरे व्यक्ति को यह जीवन सफल बनाने का अवसर मिलता है।

जिस व्यक्ति ने यह अभूतपूर्व शोध की है उसे हमारा लाख लाख धन्यवाद। साथ ही साथ क्यों न जैन समाज भी इस अच्छे कार्य के लिए आवाज बुलन्द करे। वह स्वयं अपने आप को इस कार्य को करने के लिए सक्षम समर्थ हो जाए। अपने आप को आदर्श के रूप में प्रस्तुत करे।

कितनी मुश्किलों के पश्चात् हमें मनुष्य जन्म प्राप्त होता है और जिसके नेत्र न हो उसका जीवन नहीं है क्योंकि वह कुछ देख तो सकता नहीं है और शरीर नश्वर होने के पश्चात सिर्फ जलने के लिए वाकी रह जाता है। अतः हमें अपना नेत्रदान करना आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य समझना चाहिए।

अतः हमे यह संकल्प लेना चाहिए कि जीवन के अन्तिम क्षणों में सिर्फ एक ही अभिलाषा रखनी चाहिए। वह है "नेत्रदान" फिर डाक्टर स्वयं घर आता है और अपना कार्य सिर्फ 10–15 मिनट में कर डालता है। किसी भी परिवार के सिर्फ 10–15 मिनट और किसी व्यक्ति की जिन्दगी बन जाती है।

उर्ध्वगमन व अधोगमन का हेतु

□ मुनि श्री धर्म धुरन्धर विजयजी मा सा वम्बई,

राजगृही नगरी के गुणशील चैत्य में देवाधिदेव सवज्ञ-सर्वदर्शी परमात्मा श्री महावीर स्वामी जी से गणधर गौतम स्वामी जी ने विनम्रता पूर्वक जिज्ञासा व्यक्त की—

हे भगवत । जीव गुरुकर्मी कैसे होता है, और लघुकर्मी कैसे होता है ?

गणधर भगवत के इस प्रश्न को सुनकर अन्य जिज्ञासु मुनि भी परमात्मा के मुखारविंद से बहने वाले उत्तर को सुनने के लिए परमात्मा के सम्मुख उपस्थित हो गए व उत्तर की प्रतीक्षा करने लगे।

परमात्मा ने रसभरती वाणी मे उत्तर दिया—

हे गौतम ! एक मनुष्य के पास सूखा हुआ तुबा है वह उस तुबे के ऊपर डाभ और कुश लपेट कर मिट्टी का लेप करता हैं और फिर उसे धूप में सुखा देता, है इस प्रकार से वह डाभ व कुश लपेट कर मिट्टी के कुल मिलाकर आठ बार लेप करता है व धूप म सुखाता है इसके बाद अगर वह आदमी उस तुबडे को पानी मे रख दे तो हे गौतम ! वह तुबडा डूबेगा या तैरेगा ?

भगवत ! वह तुबडा तो डूब जाएगा, पानी के अतस्तल को छूवगा । गणधर भगवत जी ने उत्तर दिया।

परमात्मा ने कहा—किस कारण से ?

गौतम स्वामी जी ने कहा—भगवन ! वह डाभ कुश सहित मिट्टी के आठ लेपो के कारण भारी हो चुका है अत स्वत डूब जाएगा !

परमात्मा ने पूछा—क्या वह पानी मे डूबा ही रहेगा ?

नहीं, भगवत ! जल मे पडा रहने के कारण ज्यो-ज्यो उस पर किया गया लेप गलकर उतरता जाएगा, त्यो-त्यो वह ऊपर उठता जाएगा और जब वह इसी प्रकार आठो लेपो की परतो से रहित हो जाएगा तब वह तुबडा स्वत। जल के ऊपर आ जाएगा। गणधर भगवत ने प्रत्युत्तर दिया।

तत्पश्चात् परमात्मा ने इस नन्हे से आलाप-सलाप का उपनय करते हुए कहा—

हे गौतम !-इसी प्रकार ससारी जीव हिंसा, झूठ आदि अठारह पाप स्थानको का सेवन कर लेप के समान ज्ञानावरणी आदि आठ प्रकार के कर्मों को उपार्जित करता हैं, जिसके फलस्वरूप जीव गुरुकर्मी बन अधोगमन करता है और धर्माराधना व साधना करते हुए जीव आठो प्रकार के कर्मों से मुक्त हो जाने के पश्चात् लेपरहित तुबडे के समान लोकाग्र मे स्थित सिद्धस्थान मे पहुच जाता है !

अङ्ग सूत्र 'ज्ञाता धर्म कथा" से उद्धृत

□ □ □

क्या जैन धर्म विश्व धर्म है ?

● श्री शिखर चन्द पालावत

हाँ है, क्योंकि जैन धर्म में विश्व का यथास्थित स्वरूप प्रस्तुत किया गया है उसमें ऐसे नियम निर्दिष्ट किए गए हैं जो समस्त विश्व द्वारा ग्राह्य है। इसमें धर्म के प्रऐता के रूप मे कोई एक निर्धारित व्यक्ति नही, किन्तु प्रऐता और आराध्य मे जिन निश्चित् गुणों की अपेक्षा है, उन वितरागता, सर्वज्ञता, सत्यवादिता आदि विशिष्ट गुणों से संपन्न व्यक्ति को ही इष्टदेव और प्रणेता स्वीकृत किया गया है।

विश्व में जैन धर्म का स्थान सबसे महत्त्वपूर्ण है। जैन धर्म अनादि कालीन है। जैन अर्थात्, जिसने राग-द्वेषादि अंतरंग शत्रुओं को जीत लिये हैं वो ही आत्मा "जिन" कहलाता है। अर्थात् वीतराग, सर्वज्ञ सर्वदर्शी. सर्वशक्ति मान ऐसे परमात्मा जिन कहलाते है और उनके द्वारा प्ररूपित धर्म जैन धर्म कहलाता है।

जैन धर्म अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का पाठ सिखलाता है, क्रोध-मान-माया-लोभ रागद्वेष-ईर्ष्या-निन्दा ये सब भयंकर दुश्मन है, उन्हें खतम करो। आत्मा को पहचानों, सत्संग करो, अच्छे ग्रथो का स्वाध्याय करो, किसी की निन्दा मत करो, किसी से ईर्ष्या मत करो, परस्पर प्रेमभाव रखो, किसी का बुरा या अहित मत करो।

गुणी आत्मा को देखकर प्रसन्न होना, दुखी को देखकर उसका दुख दूर करना, अधम या पापी के प्रति तिरस्कार वृत्ति न रखकर मध्यस्थ भाव रखना, सभी प्राणियो के प्रति मैत्री भाव रखो, नम्र बनो, गुणवान बनो ...... व्यसनों का त्याग करो। सुपात्र को दान देकर लक्ष्मी का सदुपयोग करो, अधिक संग्रह मत करो, अपनी आवश्यकताएं कम करो, किसी भी वस्तु पर ममत्व भाव मत रखो, कहा भी है "संतोषी सदा सुखी"।

जैन धर्म ने ससार को अहिंसा की शिक्षा दी है। जबकि किसी भी दूसरे धर्म ने अहिंसा की मर्यादा यहाँ तक नही पहुंचाई अतः जैन धर्म अपने अहिंसा सिद्धांत के कारण "विश्व धर्म" होने के पूर्णतया उपयुक्त है।

वास्तव में देखा जाये तो जैन धर्म न तो हिन्दू धर्म है न वैदिक धर्म है। जैन धर्म भारतीय जीवन, संस्कृति और तत्वज्ञान का मुख्य अंग है। इसके मुख्य तत्त्व विज्ञान शास्त्रमय रचे हुए हैं ज्यों-ज्यों पदार्थ विज्ञान आगे बढ़ता गया त्यों-त्यों ही जैन धर्म के सिद्धान्त सिद्ध होते गये। पूर्व जैनाचार्यो के उत्तम नियम और ऊँचे विचार एवं जैन साहित्य "अर्हन्त देव साक्षात परमेश्वर है" "स्यादवाद" जैन धर्म के मुख्य विचार वास्तव में सराहनीय हैं। जैन धर्म एक ऐसा प्राचीन धर्म है कि जिसकी उत्पत्ति और इतिहास जो अनादि काल से चला आ रहा है जैन धर्म जैनेतरों के प्राचीनतम वेदों और पुराणों से पूर्व भी विद्यमान था, जैसे "शिवपुराण" म लिखा है सर्वव्यापी कल्याण स्वरूप सर्वज्ञ रिषभदेव जिनेश्वर देव कैलाश (अष्टापद) पर्वत पर अवतरित

हुये। "नाभि राजा के मरुदेवी रानी से मनोहर क्षत्रियों में श्रेष्ठ क्षत्रिय वंश में रिषभ नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ और केवल ज्ञान प्राप्त कर जैन धर्म का प्रचार किया। श्री रिषभदेव का दूसरा नाम आदिनाथ देव भी है।

रैवतगिरी अर्थात् (गिरनार) पर नेमीनाथ और (शत्रुंजय-सिद्धगिरी) पर आदिनाथ भगवान पधारे। ये गिरिवर ऋषियों के आश्रम एवं महान तीर्थ होने के कारण मुक्ति मार्ग के हेतु हैं वो अति प्राचीन हैं। जिसको जानने वाला ससार के बन्धन को तोड़कर परम गति (मोक्ष) प्राप्त कर सकता है।

मरुदेवी माता से रिषभ हुए, रिषभ से भरत हुए भरत से "भारतवर्ष" हुआ और इसी भरत से सुमति हुआ जिस प्रकार सूर्य किरणों को धारण करता है उसी प्रकार अरिहंत ज्ञान की राशि धारण करते हैं। "भरतक्षेत्र" में छठे कुलकर मरुदेव और सातवें नाभि हुए। आठवां कुलक नाभि द्वारा माता से उत्पन्न विशाल चरण वाले अत्यन्त पराक्रमी रिषभ देव युग के प्रारम्भ में जिन हुए। भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास में जैन धर्म का नाम सदैव से अजर अमर है।

जैन धर्म एक अद्वितीय धर्म है जो प्राणी मात्र की रक्षा करने के लिए सक्रिय प्रेरणा प्रदान करता है। पूर्वकाल में २३ तीर्थंकरों के बाद २४वें तीर्थंकर श्री वर्धमान महावीर स्वामी हुए जिन्होंने तमाम भारतवर्ष में दुंदभिनाद से जैन धर्म का संदेश फैलाया और आश्चर्य की बात तो यह है कि इस संदेश को अपने अहिंसा के सिद्धांत के कारण तमाम विश्व ने मान्यता दी है।

ससार के सभी बड़े-बड़े महान विद्वानों ने जैन धर्म के विषय की प्रशंसा की है। जैन धर्म एक ऐसा अद्वितीय धर्म है जो प्राणी मात्र की रक्षा करने के लिए प्रेरणा प्रदान करता है। जैन धर्म में 'क्षमा' सतोष ज्ञान, ध्यान, तप आदि करना और हिंसा आदि छोड़ना बताया है। हरेक जीव को सुख की आवश्यकता है। यह सुख भी धर्म से ही मिलता है धर्म यह लोक परलोक दोनों को ही अच्छा बनाता है।

भगवान जिनेश्वर देव की मूर्ती की सेवा पूजा और भक्ति करने से आत्मा परमात्मा बनती है जिनेश्वर देव की मूर्ती नेत्रों को आनन्द देने वाली है, वह ससार रूपी शत्रुओं पर विजय दिलाने वाली है, ससार के सभी जीवों का कल्याण करने वाली है।

प्राचीन जैन साहित्य में भी जिन मन्दिर और मूर्ती पूजा का वर्णन आता है। बड़े-बड़े तीर्थों पर जिनेश्वर भगवान के भक्तों ने विशाल जिन मन्दिर बनवाये जिन मन्दिरों के निर्माण में करोड़ों अरबों रुपयों का खर्चा लगा है। जैन धर्म का महामंत्र-नवकार मंत्र है जिसमें नव पद हैं वो आत्मिक गुणों की पराकाष्ठा पर पहुचे हुए सर्वोत्कृष्ट सिद्ध तथा साधक गुणी पुरुषों की स्तुति है जिसमें केवल गुण की पूजा है। यह मंत्र अति प्रभावशाली है। इसके जाप से अपूर्व ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त होती है। यह सब जैन धर्म की प्राचीनता का जीवित प्रमाण है।

उपरोक्त प्रमाणों से यह सिद्ध हुआ कि जैन धर्म आज विश्व धर्म है।

पीड़ित मानव के उद्धारक

● श्री नरेन्द्र कुमार कोचर, जयपुर

भारत की इस धरती ने अपने गर्भ से अनेकों ऐसी महान विभूतियों को जन्म दिया है, जिन्हें सैंकडों वर्षो के बाद भी मानव भुला सकने की स्थिति मे नही है । उन्ही महान विभूतियों में एक थे आचार्य विजय वल्लभ सुरीश्वर जी महाराज सा. ।

आज से करीब ११५ वर्ष पूर्व बड़ौदा में सुश्रावक श्री दीपचन्द के घर एक बालक का विश्वपूज्या माता इच्छाबाई रत्नजननी की कुक्ष से जन्म हुआ । शिशु अवस्था मे बालक का नाम छगन रखा गया । किन्तु इस अनमोल संपत्ति के प्रदाता छगन के माता पिता उसे अधिक समय तक अपनी शीतल छाया का दान न दे सके । पहले पिता का और दो चार वर्ष बाद ही बालक छगन को माता के प्यार से वंचित होना पड़ा । माता के अन्तिम शब्द 'जिन देव की शरण' बालक छगन के भावी जीवन का बीज निहित किये हुए थे ।

१५ वर्ष की अवस्था में उसे एक क्रांतिकारी आचार्य विजयानन्द सुरीश्वर जी के दर्शनों का एवं व्याख्यान रूपी अमृत के पान करने का अवसर मिला । कई बाधाओं को पार करते हुए अपने पथ पर दृढ़ रहते हुए वि. सं. १९४४ मे राधनपुर में श्री हर्ष विजय जी का शिष्य बनकर जिनदीक्षा अंगीकार की । इनका नाम 'वल्लभ विजय' रखा गया ।

वि. स १९५३ मे आचार्य श्री विजयानन्द सुरीश्वर जी ने अपने अन्तिम समय मे आपको यह सन्देश दिया कि मेरे लगाये गए धर्म पौधे की सार संभाल करते हुए जगह-जगह शिक्षा प्रचार के सरस्वती मन्दिरों की स्थापना करवाने मे किसी प्रकार की कोई कमी न रखना ।

गुरु के आदेश को शिरोधार्य कर मुनि वल्लभ ने भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तों में पाद बिहार करते हुए सत्य और अहिंसा की ज्योति का लोगो को दर्शन कराया । जैन धर्म व जैन समाज पर होने वाले आक्रमणों से संघ की रक्षा करते हुए शिक्षा संस्थाओं का जाल बिछा दिया । उनका सम्मान दिनों दिन बढ़ता गया, वे अपनी योग्यता एवं साधर्मी सेवा के कारण संघ के हृदय सम्राट बन गये । संघ ने अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए वि. सं. १९८१ में लाहौर में उन्हें आचार्य की पदवी से विभूपित किया ।

उनके नियम व व्रत वज्रवत् करारे थे परन्तु यह निश्चय है कि उनका हृदय फूल की पखड़ी से भी अत्यन्त कोमल था दुःखी, विपत्ति ग्रस्त व साधन हीन मानव को देखकर उनका हृदय दयार्द्र हो रोने लगता था ! जैन एकता और मानव सेवा के लिए उन्होंने अपने समस्त जीवन की आहुति दी ।

एक अंग्रेज विद्वान Dr Felix Valyi ने टाइम्स आफ मे इण्डिया 22-6-55 को अपने एक लेख में लिखा कि आधुनिक भारत मे एक ही ऐसे

जैन साधु थे जिन्होने सामुदायिकता का अन्त करने का प्रयास किया" ।

वे समन्वय, सद्भावना और एकता के समथक थे । उन्होने जगत को माया बताकर उसका विरोध नही किया, अपितु साधुता व ससार का सुमधुर समन्वय किया । वे एक विरक्त कमयोगी थे । जो लोग उनके चरित्र पर यह आपत्ति उठाते है कि उन्होने साधु होकर प्रवृत्तिमय धम को जागृत किया, वे भूल जाते हैं कि स्वाथ भावना रहित लोक कल्याण की प्रवृत्तियो का समर्थन भगवान ऋषभदेव के जीवन चरित्र लेखक श्री जिनमन, व श्री हेमचन्द्र भी करते हैं । निस्वाथ भावना से की गई समाज सेवा मे एक अनुठा ही आनन्द है जिसे स्वय सेवा करके ही समझा जा सकता है, लेखनी से व्यक्त नही किया जा सकता ।

साधर्मी उत्कप के वे महान प्रेरणा स्रोत थे । उनके आदश आज भी सैकडा वर्षों के बाद भी यही सन्देश देते हैं कि आधुनिक समय मे इनकी ज्यादा आवश्यकता हैं । उन्ही शब्दो मे आप सभी से मेरा यह अनुरोध है कि आप यह नियम लें कि हमे अपने सहधर्मी भाइयो को अपने समान सुखी बनाना है । बूंद-बूंद से सरोवर भर जाता है वैसे ही एक-एक पैसा देने से लाखो रुपये सहधर्मी उत्कर्ष के लिए एकत्र हो सकते हैं । याद रखिये, दस हजार रुपये खच करके एक दावत देने की अपेक्षा उन्ही रुपयो से अनेको परिवारो को सुखी बनाना उत्तम काय है । विवाह शादियो मे धन का धुआ उडाने की बजाय उस धन राशि से अनेको परिवारो का पोषण किया जा सकता है । नकद रुपये देने की अपेक्षा उन्हे रोजगार देकर स्वावलम्बी बनायें । सहधर्मी उत्कप का मेरा यह सन्देश घर-घर पहुचायें ।"

इसी भावना को ध्यान में रखकर कुछ समय पूर्व श्री जैन महिला उद्योग केन्द्र जयपुर के सहयोग से एक मोती पुआई तथा अन्य कार्यों का प्रशिक्षण शिविर लगाया गया था, आशा से कही अधिक बहिनो ने उसमे भाग लेकर कार्यक्रम को सफल बनाने की कोशिश की । लेकिन समाज का जो सहयोग इस कार्य मे होना चाहिये था वह नही मिला, उस समय ऐसा महसूस हुआ कि आज के इस युग मे गुरु बल्लभ की ज्यादा आवश्यकता है, जो समाज को एक दिशा निर्देश देकर साधर्मी उत्कर्ष के मार्ग पर लगा सकें ।

गुरु वल्लभ ने हर समय हर परिस्थिति मे एक बात की ओर समाज का ध्यान हमेशा आकष्ट किया वह था, समय के चक्र से शोषित और पीडित मध्यम वग का उत्कर्ष, असहाय विधवाओ की सहायता और बेकार भाइयो को रोजगार के साधन । गुरु आत्मारामजी एव गुरु बल्लभ के क्रान्तिकारी विचार थे, वे कहा करते थे कि गरीब सहधर्मी भाइयो की सहायता न कर केवल मिष्ठान खाना खिलाना सहधर्मी वात्सल्य नही । समाज की जडो को खोखला बनाने वाले कलह, अविद्या, अन्ध विश्वास, दुर्व्यसन, आलस्य, अप-व्यय व बेकारी आदि समस्त दुर्गुणो का उन्मूलन कर समाज को सुशिक्षित, सुसगठित, सुसस्कृत, सामयिक, जाग्रत बनाने मे आपने जो योगदान दिया, वह सर्व विदित हैं ।

आपके द्वारा स्थापित किये हुए अनेक सरस्वति मन्दिर, गुरुकुल, कालेज, तथा समाजोपयोगी सस्थाएं जैन समाज व राष्ट्र को आपकी अनुपम देन हैं । जैन समाज व भारत देश आपके ऋण से उऋण नही हो सकेगा ।

यदि हमारी सस्कृति के अन्य प्रतीक व चिह्न अनुपलब्ध भी रहते तो भी गुरु वल्लभ जैसे 'महाश्रमण भिक्खु' उस महत्वपूण व लोकोपकारी सर्वोदय सिद्धान्त पर आश्रित सस्कृति का जीवित परिचय देने के लिए पर्याप्त थे । जिस व्यक्ति का

शेष पृष्ठ 87 पर

करुणा बिन सब सून

डॉ० राजेन्द्र कुमार बंसल
कार्मिक अधिकारी, ओ. पी. मिल्स
अमलाई (म. प्र.)

भोग-उपभोगों की राहों में भटकता-तड़पता व्यक्ति आत्मिक आनंद एवं शान्ति की प्राप्ति के लिये किसी अदृश्य सत्ता के समक्ष अपने को समर्पित कर देता है। यह अदृश्य सत्ता भगवान या नारायण के नाम से सम्बोधित की जाती है। दुःख की गहरी छाया हो या असीमित भोगों से उत्पन्न अतृप्त अभिलाषा, दोनों ही स्थिति में व्यक्ति अशांत बना अपने आराध्य के समक्ष जाकर, उस आनंद की प्राप्ति की कामना करता है, जिसका अनुभव उसे अभी तक नहीं हुआ।

ऐसी मनःस्थिति में व्यक्ति भगवान को प्रसन्न या उसकी कृपा पाने के लिये विनीत एवं समर्पित भाव से उसकी पूजा अर्चना एवं दान आदि का कृत्य करता है। ऐसा करने से वह अपने को मानसिक रुप से संतुष्ट पाता है साथ ही निराशा भरे जीवन मे उसे एक आशा का सम्बल भी मिलता है।

आत्मा से परमात्मा या नर से नारायण बनने की परिकल्पना प्रायः सभी भारतीय दर्शनों में पायी जाती है भले ही इसका रुप एव पद्धति में कितनी ही भिन्नता क्यो न हो। जीवधर्म का मूलाधार ही यही है। इस कारण नर से नारायण बात अब लोकोक्ति बन गयी है। इससे यह स्पष्ट होती है कि भगवान या प्रभु किसी सम्राट या महाराजा जैसी कोई विशिष्ट सत्ता नहीं है जो एक साथ अनेक न हो सकते हों या जहां तक दूसरों की पहुंच न हो। इससे यह भी प्रकट होता है कि भगवान या नारायण की सत्ता एक अपना हि गंतव्य है, लक्ष्य है विकास का एक चरण बिन्द जिसे कोई भी, कभी भी अपने पुरुषार्थ एवं साधना से अपने में ही प्राप्त कर सकता है। यह किसी व्यक्ति या जाति विशेष की रिजर्वशीट नहीं है किन्तु सब की अपनी-अपनी पृथक सीट है जिस पर हर कोई अपनी सामर्थ्य से बैठ सकता है। भारतीय दर्शन की इस मान्यता ने प्रत्येक जीवात्मा को समानता, स्वतंत्रता एवं पुरुषार्थ का दिशाबोध कराया है।

नर से नारायण की लोकोक्ति में नर शब्द मानव समाज के सदस्यों तक ही सीमित नही है। यह शब्द भाव बोधक है जिसका अर्थ समस्त जीवात्माओं तक विस्तृत है। चूंकि मानव या मनुष्य ही एक मात्र ऐसी अवस्था है जहां विवेक, श्रद्धा, ज्ञान एवं साधना के स्वर्णिम अवसर सुलभ होते है और जहा से नर से नारायण बन पाते हैं। अत सुविधा की दृष्टि से आत्मा से परमात्मा के स्थान पर नर से नारायण कह दिया जाता है। इससे यह बात साफ होती है कि शक्ति एव स्वभाव की दृष्टि से प्रत्येक आत्मा में परमात्मा बनने की क्षमता-शक्ति विद्यमान है और सभी जीवात्मायें

स्वभाव से परमात्मा स्वरुप हैं। अतर मात्र शक्ति की अभिव्यक्ति का है। जहा नारायण की शक्तियां प्रकट हो चुकी हैं वहा अन्य जीवात्माओ की शक्तिया अव्यक्त/अप्रकट है। प्रश्न यह उठता है कि व्यक्ति अपनी स्वय की ईश्वरीय शक्तियो को कैसे प्रकट कर अनुभूत करें। और क्या ऐसा ईश्वर की पूजा मात्र आदि से सम्भव है।

आत्मा मे परमात्मा बनने की शक्ति विद्यमान है, उसे पराश्रय से प्रकट नही किया जा सकता। स्वशक्ति का जागरण स्वसाधना से ही सम्भव है और स्वशक्ति के जागरण से अनत आनद एव शान्ति की अनुभूति होती हैं। इसके लिये प्रतीकात्मक आदर्श रूप मे परमात्मा के स्वरूप को अपने आप मे अनुभूत करना होना हैं। उसके माग मे आने वाली मोह, काम विकार, वासना आदि की बाधाओ को दूर करना होना है, उ हे जीतना होता है। ऐसा करने पर सतत् स्व साधना से आत्म शक्ति के पूण विकास से ईश्वरत्व प्राप्त किया जा सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि आत्म साधना या स्व-सेवा, आत्म स्वरूप के प्रति श्रद्धा व ज्ञान एव उसमे तन्मयता से ही आत्मा से परमात्मा बना जा सकता है।

आत्म सेवा या स्व-साधना शब्द मे सम्पूण जीवात्माओ के प्रति करुणा दया एव उनकी सेवा का भाव निहित हैं। क्योकि "धम्मो दया विशुद्धो" के अनुसार धम दया करके विशुद्ध होना है। जो व्यक्ति अपने शुद्ध चैतन्य स्वरूप के प्रति जागरुक है दयावान है, वह समस्त जीवात्मा के प्रति दयावान एव करुणावान होगा ही। ऐसा व्यक्ति किसी का अहित करेगा ही नही किन्तु जहा तक सभव होगा वह परोपकार ही करेगा। करुणा भाव आत्मा का धम होने के कारण आत्म साधना एव परोपकार का सहगामी है। यही आत्म साधना की भावना जब सामाजिक जीवन मे व्यक्त होती है तब वह मानव सेवा या प्राणी सेवा के रूप मे प्रकट होती है। ममकार, अहकार एव राग द्वेष विहीन उदत्त अतरभावो की यह अभिव्यक्ति मानव सेवा के रूप मे जब परिणित होती है तब व्यक्ति अपने अतिरिक्त भौतिक साधनो एव शक्ति का उपयोग परोपकार एव पर सेवा मे नि स्वाथ भाव से करने लगता है। ऐसा करते समय मान प्रतिष्ठा एव सम्मान पाने का भाव भी उसके मन मे नही आता। कत्तव्य में अह को क्या स्थान?

धम क्षेत्र मे पश्चिम मे मानव सेवा को प्राथमिकता दी जाती रही। जब यह सस्कार पूव की ओर स्थानान्तरित हुये तो दुर्भाग्य से मानव सेवा का स्वरूप धर्मान्तरण के व्यवसाय म बदल गया। इस कारण मानव सेवा छल शक्ति का पर्यायवाची बन गयी। यद्यपि भारतीय दशन एव जीवन परम्परा स्वावलम्बन पर आधारित है फिर भी उसमे परोपकार, दया एव दान आदि का समावेश पाया जाता है किन्तु "जो जस करही सो तस फल चाखा" की मान्यता ने व्यवहारिक जीवन मे व्यक्ति को स्वार्थी, एव मानवीय वेदना के प्रति अनुदार एव असहिष्णु बना दिया। यही कारण है कि दीन दुखी असहाय, दरिद्र एव अपगो को देखकर हमारे मन मे सहज करुणा भाव उत्पन्न नही होता। हम उसे देखकर भी अनदेखा कर देते है और भावविहीन बने रहते हैं। इससे मानवीय मूल्यो की रक्षा की सामाजिक सचेतना भी लुप्त हो गयी। अवसरवादिता, कर्त्तव्यहीनता एव अनैतिक मूल्यो के पोषण ने स्थिति को और भी भयावह बना दिया है।

जो व्यक्ति दूसरो के दुख दर्द को न समझ सका, उसके प्रति दयावत होकर उसको धैय, साहस एव सात्वना नही दे सका, अपने सचित धन से उनका हित नही कर सका ऐसा व्यक्ति अध्यात्म की भूमिका मे अपना हित कैसे कर सकता है,

विचारणीय है। जिसके हृदय का करुणा स्रोत सूख गया है, जो अंदर से खोखला है या जिसके मन मे क्रोध, मान-लोभ निर्ममता अहंकार एवं ममकार भरा है वह अपना ही क्या किसी का भी हित नही कर सकता। वस्तुत: करुणा भाव बिना सब कुछ सूना है।

भारतीय दर्शन एवं संस्कृति के अनुरुप हमारे पितामहो ने मंदिर, मस्जिद, गिरिजाघर एवं धर्मशालाओं मे अपने सचित धन का उपयोग किया यह एक शुभ परम्परा थी। किन्तु कतिपय अपवादो को छोडकर इससे सामाजिक जीवन मे प्राणी एव मानव सेवा का कर्त्तव्य उपेक्षित हो गया। संभवत: प्रति-स्वावलम्वी जीवन क्रम में इसकी आवश्यकता महसूस न की गयी हो। किन्तु आज के गतिशील परिप्रेक्ष्य में जबकि भौतिकवादी नजरिये के कारण जीवन मे जटिलता, पराश्रयता एवं विषमतायें बढ़ी है, मानव सेवा एवं परोपकार की आवश्यकता समय की माग बन गया है। हमें अब अपने से साधनो एवं धार्मिक सामाजिक कार्य कलापो को नया आयाम देकर उसे समूहवादी बनाना होगा और हृदय के शुष्क करुणा स्रोत को पुनः प्रवाहित करना होगा।

शिक्षा, चिकित्सा, दीन-दलितों एवं अपाहिज-अपंगों की सेवा एवं सहायता, रोजगार के साधन तथा समाज-राष्ट्र विरोधी एवं भ्रष्ट गतिविधियों में संलग्न व्यक्तियों को कर्त्तव्य बोध की प्रेरणा आदि ऐसे क्षेत्र है जिनके माध्यम से मानवता एवं राष्ट्र की सेवा की जा सकती है। आज जबकि राज्य सत्ता जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में है, राज्य सत्ता का जनहित में उपयोग तभी सम्भव है जबकि सत्ताहीन व्यक्ति एवं शासना तंत्र स्वच्छ, कर्त्तव्यनिष्ठ एव परोपकार की भावनाओं से अनुप्राणित हो। इसके लिये भी मानव सेवा की भावना का जागरण आवश्यक है अन्यथा लोक कल्याण की सारी योजना अंक बिना शून्य जैसी निरर्थक होगी। ऐसा करने पर भाग्योदय से प्राप्त धन-प्राप्त धन-राज्यशक्ति का सदुपयोग परोपकार मे तो होगा ही साथ ही अन्तर्मन की कलुषता मन्द या कम होने से हम अपने मे ही लुप्त परमात्मां के निकट भी पहुच सकेंगें। इस दृष्टि से सही मायने में आत्मा जागरण एवं आत्म साधना की धार्मिक क्रिया के साथ ही मानव सेवा हेतु हम अपने को उदार, उदात्त एवं सम्वेदनशील बनावें तभी हम सच्ची शाति एवं आनंद को अपने अदर अनुभूत कर लोक कल्याण कर सकेंगे।

पृष्ठ 84 का शेष

अपना कोई स्वार्थ नही, परमार्थ ही महान स्वार्थ है जो साधूत्व के नियमों का पालन करता हुआ भी समाज कल्याणकारी प्रवृतियों को प्रोत्साहन देने के लिए जीवन भर कटिवद्ध रहा, उसके प्रति कौन सहृदय व्यक्ति नतमस्तक न होगा। उनमें ज्ञानी का मस्तिक एक था, कवि का हृदय था, निष्काम कर्मयोगी की क्रियाशक्ति थी और दुखी मानव के उद्धारक थे। उन्होने सभी कार्य नीति नही, धर्म व कर्त्तव्य समझ कर पूरी निष्ठा से किये।

जब ऐसे महात्मा विश्ववन्द्य हैं तो उनके उपकृत व्यक्ति या समाज उनका जितना सम्मान करें, थोडा है। वे उनके ऋण से उऋण नही हो सकते और न ही उनके आकाश समान अनन्त गुणों का सीमित शक्ति से वर्णन कर सकते हैं। यह प्रयास केवल उनके व्यक्तित्व की एक झलकी दिखाने के लिए अत्यन्त लघु है। हमे उनका आदर्श जीवन प्रगतिपथ पर दृढ़ प्रतिव हो अग्रसर करता रहें, इसी हेतु यह प्रयत्न किया गया है। अन्त मे फिर; इसी भावना के साथ मरुधर मे आजा दु.ख दर्द सभी मिटाजा।

श्री अवन्ती पार्श्वनाथः

का

स्तवन

रचयिता—मुनिराज श्री नयरतन विजयजी म० सा०

हो पार्श्व मने लागे प्यारो
नगर उज्जैनी मायने अवती वारो रे। पार्श्व ॥ टेर ॥

काशी देश बनारसी नगरी, पौस कृष्ण दसम दिन सकरी
छप्पन दिग कुमरी आय के जन्मोत्सव कीनोरे ॥ पार्श्व ॥ १ ॥

शक्रेन्द्र आज्ञा फरमावे, हरिणगवेशी सुघोषा बजावे।
चौशठ इन्द्र मिल करके मेरू पर आवे रे ॥ पार्श्व ॥ २ ॥

अश्व सैन राजा दरबार, वामादे माता का प्यार
कमठ जोगी का ताप देख एक अचरज आवे रे। पार्श्व ॥ ३ ॥

जलता नाग अगन मे देखा, लक्कड फाड नाग को फेंका
नवकार सुनाया नाग को धरणेन्द्र बनाया रे ॥ पार्श्व ॥ ४ ॥

नेम ने राजुल को त्यागी, पार्श्व कु वर हो गये वैरागी
अवसर दीक्षा जान के लोकान्तिक आया रे ॥ पार्श्व ॥ ५ ॥

वरसीदान देते हैं प्रभुजी, भव्य जनो की पूरी मर्जी
दीक्षा लेकर आपने सहू कर्म खपाया रे ॥ पार्श्व ॥ ६ ॥

मेघमाली ने उपसर्ग कीना धरणेन्धर भक्ति रस भीना
उपसर्ग फौज हटाय के केवल पद लीना रे ॥ पार्श्व ॥७ ॥

सम्मेत शिखर पर सिद्धि पाए अनन्त ज्योति मे ज्योत मिलाए
मूल गम्भारा वारणे देव शासन दीपाए रे ॥ पार्श्व ॥ ८ ।

सूरी प्रेम भुवन भानु के चरण कमल में वन्दन करके
नयरतन कहे आपसे म्हारी जनम सुधारो रे ॥ पार्श्व ॥ ९ ॥

★ ★ ★

सुख क्या है ? कैसे प्राप्त हो ?

एक विचार

□ श्री हरिश्चन्द्र मेहता

विश्व के समस्त प्राणी अपने जीवन में सुख प्राप्ति की हार्दिक इच्छा रखते हुए निरंन्तर प्रयत्नशील रहते है। सम्पूर्ण स्वाधीन और शाश्वत सुख की प्राप्ति हो तथा दुख का सर्वथा नाश हो यह प्रत्येक के जीवन का लक्ष्य बना हुआ है।

सुख की प्राप्ति के लिए अथक प्रयत्नशील रहने पर भी दिन प्रतिदिन चारों तरफ दुःख, अशान्ति, उद्वेग, ग्लानि, दैन्य तथा अस्वस्थता का दौर दौरा है। सुख शान्ति के लिए मानव को अनगणित साधन सामग्री उपलब्ध है, ऊपर से विज्ञान के चमत्कारिक शोधों की मौजूदगी होते हुए भी, मनुष्य अधिक अशान्त, उद्विग्न, व्यथित और हाय हाय स्थिति में है। वास्तविकता यह है कि सच्चे पुरुषार्थ की कमी तथा सुख प्राप्ति के साधनों का सही ठीक ठाक ज्ञान प्राप्त करने में मनुष्य सफल नही है और न हो रहा है।

जैसे जैसे संसार में मनुष्य को सम्पत्ति, धन आदि प्राप्त होता है, वह सुख की कल्पना करता है। जब उसको इनमें प्रतिकूलता मिलती है तब वह दीनता का अनुभव कर दुःखी दिखाई देता है। वह असंतोष, असंयम व तृष्णा के कारण, सुख शान्ति नही प्राप्त करता। दुनियां के भौतिक पदार्थ जो नाशवान है, अखण्ड सुख देने में समर्थ नही है। शरीर, सम्पत्ति, धन, स्वजन आदि के अनुकूल संयोग से सुख की कल्पना भ्रांति है। यह मनुष्य के शुभ कर्मो के फलस्वरूप पुण्यों से प्राप्त है। अनुकूलता मे सुख महसूस करता है और विपरीत स्थिति में दुःख। आत्म सुख प्राप्ति के लिए भौतिक पदार्थो की आसक्ति, ममता और उसके पीछे पागल की तरह भटकने की प्रवृति को विवेक पूर्वक त्याग व कम करना चाहिये। संसारिक जीव के लिए पूर्ण त्याग सम्भव नहीं बन पाता है-नर अधिक से अधिक त्याग करने में ही बहुत कुछ सुख साधन बन जाता है।

जब आत्मा को इन्द्रिय सुखों, जड़ पदार्थो और सांसारिक साधनो की असारता का ज्ञान हो जाता है तब वह उनकी ममता को छोड़ने के लिए, पूर्ण रूप से न छोड़े तो कम से कम करने को तो तुरन्त तैयार हो जाती है। आत्मा को यथार्थ पदार्थो का ज्ञान होने पर, उसमें विवेक जागृत हो जाता है और यही सुख प्राप्ति की पहली सीढी है।

मानव मन बड़ा ही चंचल है-उसमें सबल व निर्बल दोनो स्थितियां उभरती रहती हैं। त्याग, तप, क्षमा, औदार्य, शील तथा संयम के शुद्ध व

निमल विचार—ये उच्च सस्कारो की बातें हैं। इसके विपरीत स्थिति मे मानव मन के निवल विकार विष उभरकर मानव के मन को पतन माग की ओर खींच ले जाते हैं। मोह, ममता, काम, क्रोध, लोभ, मद मत्सर के अधीन होकर मनुष्य मानव भव को बर्बाद कर देता है। लोभ ही इन सब अनिष्ट बातो का बाप है और इन हेय प्रवृत्तियो का चालक है। इससे सदा बचकर रहना है।

वही जीवन जो सम्भाव, धैर्य, शान्ति से ओत-प्रोत, शुद्ध विचारो मे अडिग, धर्मशील परोपकारी पवित्र है, वही सुखी बनता है। हिंसा, बैर, वैमनस्य, ईर्ष्या, लोभ, काम क्रोध तत्वों से भान भूली हुई दुनियाँ का प्राणी कभी खुश नहीं रह सकता, न कोई सुख शान्ति तथा समृद्धि प्राप्त कर सकता है। अपने जीवन को सुसस्कारो से निमल और गुण वासित बनाने की इच्छा रखने वाले को रूप,रस, गन्ध, स्पश एवम् भौतिक विषयो के राग से मन हटाने मे प्रयत्नशील रहना चाहिये जिससे उनमें विरक्ती बनी रहे और सुखी जीवन बनाने मे अग्रहर हो सकें।

हार्दिक श्रद्धांजलि

छपते-छपते सूचना मिली है कि परमपूज्य आचाय श्रीमद्विजय मनोहर सुरीश्वर जी म सा का दि १९-८-८४ को प्रात ४-०० बजे सादडी मे स्वगवास हो गया है।

पू आचाय भगवन्त का स २०३९ का चातुर्मास जयपुर मे था और उनकी सद्-प्रेरणा से जनता कालोनी मे श्री सीमधर स्वामी जिनालय के निर्माण का शुभारम्भ हुआ था। चदलाई ग्राम मे स्थित श्री शान्तिनाथ स्वामी जिनालय मे जीर्णोद्धार के पश्चात् आपकी ही निश्रा में पुन प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई थी।

ऐसी महान आत्मा के प्रति शत शत वन्दन एव हार्दिक श्रद्धाजलि समर्पित है।

श्री जैन श्वे० तपागच्छ सघ, जयपुर

मंगलमंत्र णमोंकार

□ सुश्री मंजुला जैन

णमोंकार मंत्र प्रत्येक व्यक्ति को सभी प्रकार सुखदायी है। इस महामंत्र द्वारा व्यक्ति को तीनों प्रकार के कर्त्तव्यों—आत्मा के प्रति, दूसरों के प्रति और शुद्धात्माओं के प्रति, का परिज्ञान हो जाता है। आत्मा के प्रति किये जाने वाले कर्त्तव्यों में नैतिक कर्त्तव्य, सौंदय-विषयक कर्त्तव्य, बौद्धिक कर्त्तव्य, आर्थिक कर्त्तव्य और भौतिक कर्त्तव्य परिगणित है। इन समस्त कर्त्तव्यों पर विचार करने से प्रतीत होता है कि इस महामंत्र के आदर्श से हमें अपनी प्रवृतियों, वासनाओं, इच्छाओं और इन्द्रियवेगों पर नियत्रंण करने की प्रेरणा मिलती हैं। आत्मसयम और आत्म सम्मान की भावना जागृत होती है। दूसरों के प्रति सम्पन्न किये जाने वाले कर्त्तव्यों में कुटुम्ब के प्रति, समाज के प्रति, देश के प्रति, मनुष्यो, पशुओं और पेड़ पोधों के प्रति कर्त्तव्यो का समावेश होता है। दूसरो के प्रति कर्त्तव्य सम्पादन करने में तीन बातें प्रधान मे रूप से आती है, सच्चाई, समानता और परोपकार। ये तीनो णमोंकार मंत्र की आराधना से ही होती है।

प्राय: लोग आशंका करते हैं कि बार बार एक ही मंत्र के जाप से कोई नवीन अर्थ तो निकलता नहीं है फिर ज्ञान में विकास किस प्रकार होता है। आत्मा मे राग-द्वेष विकार एक ही मंत्र के निरन्तर मनन से कैसे दूर हो जाता है। एक ही पद या श्लोक बार बार अभ्यास मे लाया जाता है तब उसका कोई विशेष प्रभाव आत्मा पर नही पड़ता है, अत: मंगल मंत्रों की बार बार जाप की यह आवश्यकता है। विशेषकर णमोंकार मंत्र के विषय मे यह आशंका और अधिक हो जाती है। क्योंकि जिन मंत्रो के स्वामी यक्ष, यक्षिणी या कोई शासक देव माने जाते हैं उन मंत्रों के बार बार उच्चारण से यह माना जाता है कि उनके अधिकारी देवों को बुलाना या सर्वदा उनके साथ सम्पर्क बनाये रखना। पर जिस मंत्र का कोई अधिकारी शासक देव नही है उस मंत्र के बार बार पठन और मनन से क्या लाभ ?

इस आशंका का उत्तर एक गणित के विद्यार्थी की दृष्टि से बडे ही सुन्दर ढंग से दिया जा सकता है। दशमलव के गणित में आवर्त संख्या बार बार एक ही आती है पर प्रत्येक दशमलव का एक नवीन अर्थ होता है। इस प्रकार णमोंकार मंत्र के बार-बार उच्चारण और मनन का प्रत्येक बार अलग अर्थ होता है। प्रत्येक उच्चारण रत्नत्रय गुण विशिष्ट आत्माओं के अधिक समीप ले जाता है। वह साधक जो निश्छल भाव से अटूट श्रद्धा से इस महामंत्र का स्मरण करता है इसके जाप द्वारा उत्पन्न होने वाली शक्ति को समझता है। विषय-कषायों को जीतने के लिए इस महामंत्र का जाप अमोघ अस्त्र है। पर इतनी बात अवश्य ध्यान में रखने की है कि इस मंत्र के जाप को करते समय तल्लीनता आ जाय। जिसने साधना

की पहली सीढी पर पैर रखा है, मत्र जाप करते समय इसके मन मे दूसरे विकल्प आयेंगे पर उनकी परवाह नही करनी चाहिये। जिस प्रकार अग्नि जलाने पर आरम्भ मे धुंआ निकलता है लेकिन नियमित धुंआ का निकलना वद हो जाता है। इसी प्रकार प्रारम्भिक साधना के समक्ष नाना प्रकार के सकल्प-विकल्प आते है पर साधना पथ मे कुछ आगे जाने पर विकल्प रुक जाते हैं। अत दृढ श्रद्धापूवक इस मत्र का जाप करना चाहिये। मुझे इसमें रतिभर भी शक नही है कि—यह मगल मत्र हमारी जीवन डोर होगा और सकटो मे हमारी रक्षा करेगा, यह इस मत्र का चमत्कार है। हमारे विचारो के परिमार्जन से यह अनुभव प्रत्येक साधक को थोडे दिनो मे होने लगता है कि पच-महामत्र मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ इन भावनाओ के साथ दान, शील, तप और ध्यान की प्राप्ति इस मत्र की दृढ श्रद्धा पर ही निभर है।

णमोकार मत्र का प्रवाह अन्तश्चेतना मे निरन्तर चलता रहता है। जिस प्रकार हृदय की गति निरन्तर होती रहती है उसी प्रकार भीतर प्रविष्ट हो जने पर इस मत्र की साधना सतत चल सकती है।

आठवें चक्रवर्ती सुभोम के रसोईये का नाम जयसेन था। एक दिन भोजन के समय पाचक ने चक्रवर्ती के सामने गरम खीर परोस दी जिससे चक्रवर्ती का मुह जल गया, क्रोध मे आकर चक्रवर्ती ने गरम खीर का बर्तन पाचक के शिर पर पटक दिया जिससे सिर जल गया वह इस कष्ट से मर गया। मरकर वह लवण्य समुद्र मे मन्तर देव हुआ। उसने अवधिज्ञान से अपने पूर्व भव की जानकारी प्राप्त की तो उसे चक्रवर्ती पर बहुत क्रोध हुआ। प्रति हिंसा की भावना से उसका शरीर जलने लगा अत वह तपस्वी का वेष बनाकर चक्रवर्ती के पास गया। उसके हाथो मे कुछ सुदर व मधुर फल थे। वह फल उसने चक्रवर्ती को दिये, जब उन्होने वह फल खाये तो वे बडे स्वादिष्ट थे। ये फल आप कहाँ से लाये, वे कहाँ मिलेंगे? व्यन्तर ने कहा समुद्र के बीच मे एक छोटा सा टापू है मैं वही पर रहता हू वहाँ ऐसे अनेक फल हैं। यदि आप मुझ गरीब पर दया करें तो मैं आपको अनेक फल भेट कर सकू।

जिह्वा के लोभ मे पडकर चक्रवर्ती झासे मे आ गये और उसके साथ चल पडे। जब व्यन्तर समुद्र के बीच मे पहुँचा तो अपना असली रूप प्रकट कर बोला मैं ही तेरे उस पाचक का जीव हू उसी का बदला चुकाने तुझे यहाँ लाया हू। अभिमान सदा किसी का नही रहता, चक्रवर्ती भयभीत हुआ और अरिहत का जाप करने लगा। इस जाप के कारण व्यन्तर की शक्तियाँ काम नहीं कर सकी अत व्यन्तर ने पुन चक्रवर्ती से कहा यदि आप अपने प्राणो की रक्षा चाहते है तो पानी मे णमोकार मत्र लिखकर पैर के अगूठे से मिटा दें तो मैं आपको जीवित छोड सकता हू। प्राण रक्षा के लोभ मे मनुष्य भले-बुरे का विचार भूल जाता है। यही दशा चक्रवर्ती की हुई। उन्होंने णमोकार मत्र लिखकर मिटा दिया उनकी उक्त क्रिया सम्पन्न होते ही व्यन्तर ने उन्हें मारकर समुद्र मे डाल दिया। क्योकि इस कृत्य के पूर्व वह णमोकार मत्र के आगे उसकी शक्ति काम नहीं कर रही थी क्योकि उस समय जिन शासक देव उस व्यन्तर के अन्याय को रोक सकते थे परन्तु णमोकार मत्र मिटा देने से, णमोकार मत्र का अपमान करने से सप्तम नारकी प्राप्त हुई। जो व्यक्ति इस मत्र का दृढतापूर्वक पालन करता है, उसकी आत्मा मे इतनी शक्ति प्राप्त हो जाती है कि जिससे भूत-प्रेत, पिशाच आदि उनका बाल भी बाका नही कर सकता है यह भव व परभव दोनो अच्छे होते हैं, शान्ति, सुख और समता का कारण यही महामत्र है।

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

वार्षिक विवरण १९८३-८४

महासमिति द्वारा अनुमोदित

प्रस्तुतकर्ता—श्री मोतीलाल भड़कतिया, संघ मन्त्री

परमपूज्य सिद्धान्त महोदधि, स्व० आचार्य-देव श्रीमद्विजय प्रेमसूरीश्वरजी म० सा० के पट्टालंकार परमाराध्यापाद परमपूज्य वर्धमान तपाराधक आचार्य श्रीमद्विजय भुवनभानुसुरीश्वर जी म० सा० के शिष्यरत्न प्रखर व्याख्याता हसामपुरा तीर्थोद्धारक परमपूज्य मुनिराज श्री नयरत्नविजयी म० सा० एवं मुनिराज श्री जयरत्नविजय जी म० सा०

तथा उपस्थित सभी साधर्मी भाइयों एवं वहिनों,

इस श्री संघ के आय-व्यय वर्ष १९८३-८४ (अप्रैल-मार्च) का लेखा जोखा एवं विगत वर्ष मे हुए कार्य कलापों का विवरण लेकर महासमिति की ओर से मैं आपकी सेवा मे उपस्थित हूं।

विगत चातुर्मास

विगत लगातार तीन वर्षो तक हुए आचार्य भगवन्तो के चातुर्मासों के क्रम मे गत वर्ष यहां पर परमपूज्य आचार्य देव श्रीमद्विजय ह्रींकार सूरीश्वरजी म० सा० विराजमान थे। आपकी पावन निश्रा मे नवान्हिका एव अट्ठाई महोत्सवों के अन्तर्गत उवसग्गहरं, भक्तामर, वृहद् शांति स्नात्र जैसी महान पूजाओ के साथ-साथ अनेकों विभिन्न प्रकारी पूजाओं का आयोजन सम्पन्न हुआ। सम्पूर्ण चातुर्मास काल तक क्रमवार अट्ठम तप की आराधनायें सम्पन्न हुई। साथ ही वादवृन्दों के साथ स्नात्र महोत्सव सहित मूलनायक भगवान की सोने के वरको की आंगी भी होती रही। आपकी सद्प्रेरणा से चातुर्मास समाप्ति के पश्चात् भी चार माह तक प्रतिदिन मूलनायक भगवान के सोने के वरकों की आंगी बराबर एक सद्गृहस्थ की ओर से होती रही।

आसोजी ओलीजी की आराधनायें सानन्द सम्पन्न हुई ही एवं श्रीमद्विजय वल्लभ सूरीश्वर जी म० सा० की पुण्य तिथि निमित्त तीन दिवसीय सामूहिक आयम्बिल रत्नत्रयी का भव्य आयोजन सम्पन्न हुआ था। ओलीजी में अट्ठाई महोत्सव एवं सवा लाख फूलो की अंग रचना भी सम्पन्न हुई थी। भगवान महावीर स्वामी के जन्म वांचना महोत्सव की विशिष्ट प्रभावना एवं उसी दिन सवा लाख फूलों की रचना का लाभ शा० जीवन मलजी भंवरलालजी दूगड ने लिया था। सम्पूर्ण चातुर्मास काल मे आपकी स्वयं की प्रतिमाह अट्ठाई एवं अनेकों अट्ठम तप की तपस्या चलती रही।

ऐसे महान तपस्वी एव आराधक आचार्य भगवन्त का चातुर्मास पूर्ण होने पर चातुर्मास

पलटवाने का लाभ श्री पतनमलजी सरदारमलजी लूनावत ने लिया। शोभा यात्रा एव श्री सघ के साथ आचार्य भगवन्त श्री सरदारमलजी सा० लूनावत के निवास स्थान पर पधारे। दिन मे पू० आचार्य भगवन्त की निश्रा मे आपके ही निवास स्थान पर पूजा पढाई गई।

इस सघ के अधीनस्थ वरखेडा एव चन्दलाई ग्राम मे स्थित देवसरो के दर्शनार्थ भी आप पधारे। वहा से लौटने के पश्चात् आपने मेडता के लिए जयपुर से विहार किया। इस अवसर पर आपको भाव भीनी विदाई दी गई। मेडता तक विहार की व्यवस्था भी श्रीसघ द्वारा की गई।

वर्तमान चातुर्मास

चातुर्मास पूर्ण होते ही आगामी चातुर्मास स्वीकृति हेतु महासमिति को सक्रिय होना पडता है। हमेशा की तरह से सघ के उपाध्यक्ष श्री कपिलभाई को चातुर्मास स्वीकृत कराने हेतु उप समिति का सयोजक मनोनीत किया गया और आपके ही अथक परिश्रम का फल है कि यह चातुर्मास भी स्वीकृत हुआ है। चातुर्मास हेतु यहाँ पधारने के लिए अनेको गुरु भगवन्तो एव साध्वी जी महाराज साहब की सेवा मे विनती पत्र प्रेषित किए गए।

इसी बीच यह सम्भावना दृष्टिगत होने पर कि इस बार आचार्य श्रीमद्‌विजय कलापूर्णसूरीश्वरजी म० सा० का चातुर्मास यहा पर होना शक्य है विनती पत्र लेकर श्री शातिकुमारजी सिंघी को उनकी सेवा मे भेजा गया तथा बाद मे जयपुर श्रीसघ के तत्वावधान मे एक यात्री बस लेकर सयोजक श्री कपिलभाई के शाह के नेतृत्व मे यात्री गए पालीताणा मे आचार्य श्री की सेवा उपस्थित हुए एव आपको यह चातुर्मास जयपुर मे ही करने की साग्रह विनती की गई। योगानुयोगवश इस बार भी निराशा ही हाथ लगी।

तत्पश्चात् अभी विराजित पूज्य मुनिराज की सेवा मे भी विनती पत्र प्रेषित किया गया। उस समय आप मालवा क्षेत्र मे विचरण कर रहे थे और चातुर्मास प्रारम्भ होने मे बहुत कम समय रहने से जयपुर पहुचना सम्भव नही लग रहा था फिर भी आपके हृदय मे जयपुर श्रीसघ के प्रति जो कोमल भाव हैं उसी आशा और विश्वास के साथ सर्वश्री हीराचन्दजी चौधरी, कपिलभाई के शाह, गिरधरचन्दजी पालावत, मोतीलाल भडकतिया एव शाति कुमार जी सिंघी आपकी सेवा मे मल्हारगढ मे उपस्थित हुए और आपसे यह चातुर्मास जयपुर मे ही करने की सविनय विनती की। उस दिन परमपूज्यपाद आचार्य भगवन्त श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी म० सा० की जयन्ति भी वहा पर मनाई जा रही थी एव उव्वसगहर महापूजन का आयोजन भी था। आसपास के क्षेत्र से भी अनेकों सघों के प्रतिनिधि आपसे यह चातुर्मास उनके यहा करने की विनती लेकर उपस्थित थे लेकिन आपने जयपुर श्री सघ की विनती को मान देकर यह चातुर्मास जयपुर मे करने की आज्ञा प्रदान करदी एव जय बुला दी गई। इसके लिए जयपुर श्रीसघ आपका अत्यन्त कृतज्ञ है। इस अवसर पर श्री हीराचन्दजी चौधरी की तरफ से सघ पूजा की गई। उल्लासमय वातावरण मे सघ के प्रतिनिधि वापस लौटे और ज्योंहि यहा चातुर्मास स्वीकृति की सूचना मिली, समस्त श्री सघ में हर्ष व्याप्त हो गया। एक माह के अल्प समय मे आपने लगभग छ सौ किलोमिटर का उग्र विहार कर यहा पधारने की महती कृपा की और उसी के फल स्वरूप आज आपकी पावन निश्रा मे यह चातुर्मासिक आराधनायें सम्पन्न हो रही हैं।

मुनिराज का शुभ गमन

जैसा कि ऊपर अंकित किया जा चुका है कि इतनी लम्बी दूरी चातुर्मास लगने मे बहुत कम

समय और आपकी वृद्धावस्थाजण्य स्वास्थ्य की प्रतिकूलता, इन सब के होते हुए भी आप उग्र विहार कर जयपुर पधारे। श्री वीर सम्वत् २५१०, वि० स० २०४१, अषाढ शुक्ला ३, रविवार, दि० १ जुलाई, १९८४ को प्रातः ९-०० बजे सांगानेरी दरवाजे पर आपका समैय्या किया गया। यहाँ से भव्य जुलूस बैंड बाजे और साधर्मी भाई बहिनों के साथ जौहरी बाजार, घीवालों का रास्ता होते हुए आप श्री आत्मानन्द सभा भवन पधारे। स्थान-स्थान पर गंवलिया करके गुरु भक्ति का लाभ भक्तजनों ने लिया। आपके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने हेतु सार्वजनिक सभा हुई जिसमे उपाध्यक्ष श्री कपिलभाई के. शाह ने आपका भाव भीना स्वागत करते हुए संघ की ओर से आपके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की। आपने भी सभा को सम्बोधित किया। तत्पश्चात् श्री शातिलालजी सिंधी जोधपुर वालो की ओर से आपको कामली बोहराई गई एवं संघ पूजा की गई।

इस अवसर की प्रभावना का लाभ श्री खेमराज जी पालेचा ने लिया।

चातुर्मासिक आराधनायें :

इतने उग्र विहार एवं स्वास्थ्य की प्रतिकूलता के उपरान्त भी आपने प्रवेश के तत्काल पश्चात् अष्ठमी से ही प्रवचन प्रारम्भ कर दिया। अष्ठमी से चतुर्दशी तक प्रवचनोपरान्त की प्रभावना होती रही एवं तत्पश्चात् निरन्तर पाचों तिथियों को प्रभावनाये हो रही है। समय-समय पर संघ पूजाएं भी होती रही हैं।

श्रावण वदी ३ को उत्तराध्ययन सूत्र जी बोहराने का लाभ श्री कपिलभाई ने एवं श्री श्रेणिक चरित्र बोहराने का लाभ श्री पतनमलजी सरदारमलजी नुनावत ने लिया। ज्ञान पूजा की बोलियां लेकर भी भविजनों ने लाभ लिया। दोनो ही सूत्रों के आधार पर आपके ओजस्वी एवं सारगर्भित प्रखर प्रवचन प्रतिदिन प्रातः ८-३० बजे से श्री आत्मानन्द सभा भवन में हो रहे है एवं श्रोतागण विशद् विवेचन का श्रवण कर लाभान्वित हो रहे हैं।

आपकी सद्प्रेरणा से अषाढ सुदी १४ से ही निरन्तर क्रमवार अट्ठम तप की आराधना हो रही है और सम्पूर्ण चातुर्मास काल के लिए आराधक अपनी तिथियां आरक्षित करा चुके हैं। आराधकों के पारणें के दिन उनकी भक्ति की जाती है जिसमें एक सद्गृहस्थ की ओर से स्टील के फ्रेम में भगवान का चित्र एवं कतिपय भक्तों की ओर से नगद राशि भेंट की जा रहीं है।

श्रावण वुदी ९-१०-११ को शंखेश्वर पार्श्वनाथ आराधना निमिते अट्ठम तप की सामूहिक तपस्या भी सम्पन्न हुई जिसके पारणा कराने का लाभ श्री शंखेश्वरमलजी लोढा ने लिया और विभिन्न तपस्याये भी इस बीच में सम्पन्न हुई है।

अन्यान्य साधु साध्वी वृन्द का शुभागमन

पूर्व चातुर्मास समाप्ति से इस चातुर्मास तक निम्नाकित साधु साध्वीजी महाराज साहब यहां पधारें जिनकी वैय्यावच्छ, भक्ति एवं गतव्य स्थान तक विहार की व्यवस्था का लाभ इस श्रीसंघ को प्राप्त हुआ:—

१) मुनि श्री प्रियदर्शन विजयजी म० सा०, ठाणा—२

२) साध्वी श्री गुणोदयाश्रीजी म० सा०. ठाणा—३४

३) साध्वी श्री शुभोदयाश्रीजी म०सा०, ठाणा—७

४) साध्वी श्री रविन्द्रश्रीजी म० सा०, ठाणा–२

५) मुनि श्री यशोभद्रविजयजी म० सा०

सघ भक्ति

इस वर्ष सामूहिक रूप से बडोदा से पधारे हुए यात्री सघ की भक्ति का लाभ तो इस श्रीसघ को मिला ही, व्यक्तिगत रूप से पधारे हुए अनेकों साधर्मी भाइयो की सेवा का सुयोग भी श्रीसघ को प्राप्त होता रहा है।

श्री खरतरगच्छ सघ द्वारा पर्युषण पर्व के पश्चात् आयोजित की जाने वाली एक दिवसीय यात्रा के अवसर पर जनता कालोनी मदिर मे दर्शनार्थ यात्रियो के पधारने पर हमेशा की तरह से इस श्रीसघ की ओर से उनकी भक्ति की गई।

इस एक दिवसीय यात्रा के पश्चात् श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल के तत्वावधान मे भी एक दिवसीय यात्रा का बृहद् आयोजन किया गया था। इसमे आठ बसों से यात्रीगण यहा पर दर्शनार्थ पधारे। उनकी भक्ति का लाभ भी इस श्रीसघ ने लिया।

दादाबाडी मे धार्मिक प्रशिक्षण शिविर

इस वर्ष दादाबाडी मे पूज्य साध्वी श्री मनोहरश्रीजी म० सा० की निश्रा मे एव बम्बई के विख्यात समाज सेवी श्री कुमारपाल भाई के सयोजकत्व में धार्मिक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया था।

इस सुअवसर का लाभ उठा कर श्री कुमारपाल भाई के भाषण का आयोजन श्री आत्मानन्द सभा भवन मे दि० १ जनवरी, ८४ को रखा गया। पूज्य साध्वी श्री मनोहरश्रीजी म० सा० यहाँ विराजित अपनी शिष्याओ के साथ तो पधारी ही, आपके साथ समस्त शिविरार्थी शहर मे स्थित समस्त जिन मदिरो के दर्शन करते हुए श्री आत्मानन्द सभा भवन पधारे। सभी की नवकारसी का आयोजन इस श्रीसघ की ओर से किया गया। साध्वी श्री मनोहरश्रीजी म० सा० का ओजस्वी प्रवचन तो हुआ ही, साथ ही श्री कुमारपाल भाई के उद्बोधन ने श्रोताओं को मत्र मुग्ध कर दिया।

श्री आनन्दजी कल्याणजी ट्रस्ट मे प्रादेशिक प्रतिनिधि

श्री आनन्दजी कल्याणजी ट्रस्ट मे जयपुर की ओर से भी एक सदस्य मनोनीत होते रहे हैं। पाच वर्ष का कार्यकाल पूर्ण होने पर पुन इस श्रीसघ को प्रादेशिक प्रतिनिधि हेतु नाम प्रस्तावित करने के लिए ट्रस्ट की ओर से पत्र प्राप्त हुआ। महासमिति द्वारा श्री हीराचन्दजी चौधरी का नाम इस हेतु प्रस्तावित किया गया जिसे ट्रस्ट द्वारा स्वीकार किया जा चुका है एव श्री हीराचन्दजी चौधरी को आगामी पाच वर्षो के लिए श्री आनन्दजी कल्याण जी ट्रस्ट का सदस्य नियुक्त किया गया है।

कापरडाजी तीर्थ की असाधारण सभा एव चुनाव

कापरडाजी तीर्थ की कार्यकारिणी के चुनाव हेतु रविवार, दि० ५ अगस्त, ८४ को असाधारण सभा का आयोजन कापरडाजी तीर्थ पर किया गया था। पेढी की ओर से इस श्रीसघ को निमत्रण प्राप्त होने एव विराजित पूज्य मुनिराज की सद्प्रेरणा से श्रीसघ के तत्वावधान मे एक यात्री बस से लगभग ५० साधर्मी भाई बहिन बैठक मे भाग लेने हेतु कापरडाजी तीर्थ पहुचे एव बैठक व चुनाव मे भाग लिया।

तीर्थ पर आयोजित इस असाधारण सभा में ट्रस्ट के २१ सदस्यों का निर्वाचन किया गया। यह पहला अवसर है कि इस तीर्थ की प्रबन्ध समिति मे एक स्थान जयपुर के लिए रखा गया। श्री हीराचन्दजी वैद का नाम इस हेतु जयपुर श्रीसघ की ओर से प्रस्तावित किया गया और सर्वानुमति से आपका निर्वाचन हुआ।

इसी अवसर पर परमपूज्य आचार्य श्री पदमसागर सूरीश्वरजी म० सा० का पाली से पत्र प्राप्त हुआ जिसे अनवरत रूप से उद्धत किया जा रहा है:—

पाली
आचार्य पदमसागरसूरी ३–८–८४

श्री तपागच्छ श्रीसंघ जयपुर

योग्य धर्मलाभ।

वि० लिखने का यह है कि—कापरड़ाजी तीर्थ के विषय में अन्य समुदाय के साथ मे जो मतभेद था, उसका सुखद निराकरण दीर्घ दृष्टि से सोच-विचार करके तीर्थ के हित मे लिया गया है।

जयपुर तपागच्छ श्रीसंघ ने आज तक जो भी इस तीर्थ के विषय में सहयोग दिया है, तदर्थ धन्यवाद है। श्रीसंघ के समस्त भाइयों से धर्म लाभ कहेंगे।

आपका
ह० पद्मसागर

श्री मोतीलाल भडकतिया,
सघ मंत्री, श्री जैन श्वे० तपागच्छ संघ,
जयपुर

संघ की स्थायी गतिविधियां

कतिपय उल्लेखनीय घटनाओं का संक्षिप्त विवेचन करने के पश्चात् अब में इस श्री सघ की स्थायी गतिविधियों का दिग्दर्शन आर्थिक विवरण के साथ प्रस्तुत कर रहा हूँ:—

श्री सुमतिनाथ स्वामी का मंदिर, घी वालों का रास्ता, जयपुर

२५७ वर्षीय इस अति प्राचीन एवं भव्य देरासर की व्यवस्था सुचारु रूप से यथावत् सम्पन्न होती रही है। यहां की सुव्यवस्था एवं जिनालय की भव्यता एवं अगम्यता से प्रभावित होकर दर्शनार्थियों एवं सेवा पूजा करनेवालों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती रही है। सुबह से शाम तक दर्शनार्थियों का तांतां लगा रहता ही है। इस वर्ष इस सीगे मे ६७,६६३)८३ की प्राप्तियां एवं ५६,६२१)४३ का व्यय हुआ है। इसके साथ ही पूजा द्रव्य पृथक से संकलित एवं व्यय करने की व्यवस्था की गई है उसके अन्तर्गत १२,६२७)८१ की आय एवं १२,६६०)६५ का व्यय पूजन सामग्री मे हुआ है। पृथक से पूजा की सामग्री यथा केसर, चन्दन, घृत, फूल आदि पृथक से प्राप्त होते रहे हैं।

इस जिनालय के जीर्णोद्धार पेटे १३,४८२)२५ की राशि व्यय की गई है। भगवान महावीर स्वामी की वेदी के नीचे की पट्टियां तड़क जाने से जो विषम स्थिति उत्पन्न हो गई थी, अब इनका जीर्णोद्धार कराकर सुरक्षित करा दिया गया है। भगवान महावीर स्वामी के देरासर मे कुछ छूटे हुए स्थान पर मारवल भी लगवा दिया गया है।

चक्रेश्वरजी देवी के आले में चान्दी का जो कार्य पूर्व मे कराया गया था और कारीगर की आकस्मिक अनुपस्थिति से अवशेष रह गया था वह भी अब पूर्ण करा दिया गया है।

देरासर में तीन विशाल एवं भव्य गोल्डर्ने पालीताणा से मंगवाई गई है। मूल गम्भारे एवं रंग मण्डप के ऊपर स्थित गुम्बजों के जीर्णोद्धार

सम्बन्धी काय का उल्लेख गत विवरण मे दिया गया था । अब यह काय भी पूण हो चुका ह ।

विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि वैसे तो स्नात्र पूजन प्रतिदिन यहा पर होती ही रही है लेकिन गत चातुर्मास मे परमपूज्य आचार्य श्रीमद् विजय ह्रींकारसूरीश्वरजी म० सा० की सद्प्रेरणा से सामूहिक स्नात्र महोत्सव का जो आयोजन प्रारम्भ किया गया था वह अनवरत जारी है एव प्रतिदिन प्रात ७–०० बजे से वाद-वृदो सहित सामूहिक स्नात्र महोत्सव का आयोजन सम्पन्न हो रहा है । इस आयोजन के सचालनकर्ता एव भाग लेने वाले भाई बहिन सभी साधुवाद के पात्र हैं ।

श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी का मदिर, जनता कालोनी, जयपुर

यहाँ पर वर्तमान मे स्थित जिनालय की सेवा पूजा की व्यवस्था वपभर सुचारु रूप से सम्पन्न होती रही और आराधकों की सख्या मे भी निरन्तर वृद्धि हो रही हैं। मदिरजी की व्यवस्था एव वार्षिकोत्सव के अन्तगत कुल ५२७०)२५ की प्राप्तिया एव ७,८०५)०१ का व्यय हुआ है।

इस वर्ष का २७वा वार्षिकोत्सव पूज्य मुनिराज श्री नयरत्नविजयजी म० सा० की सद्प्रेरणा एव मुनिराज श्री जयरत्नविजयजी म० सा० की निश्रा मे भादवा वदी १ रविवार, दि० १२ अगस्त ८४ को सम्पन्न हुआ । मुनिराज के प्रवचन के पश्चात् श्री पार्श्वनाथ पच कल्याणक पूजा पढाई गई । सघ मत्री श्री मोतीलाल भडकतिया ने मदिर निर्माण की प्रगति का विवरण प्रस्तुत किया एव डा० भागचदजी छाजेड ने धयवाद ज्ञापित किया। तत्पश्चात् साधर्मी भक्ति का कायक्रम पूर्ववत् सम्पन्न हुआ ।

इसी स्थान पर श्री सीमन्धरस्वामी के जिनालय का जो निर्माण कार्य सम्वत् २०३९ मे प्रारम्भ किया गया था वह निरन्तर जारी है । त्वरित गति से काय पूण न हो सकने मे मुख्य बाधा मकराना से मारबल का पत्थर समय पर प्राप्त नही होना है । विभिन्न प्रकार की आकस्मिक बाधाओं के कारण इसमे व्यवधान उत्पन्न हो जाता है और यथा समय समय माल प्राप्ति मे विलम्ब हो जाने से गति म शिथिलता आती है। फिर भी निरन्तर प्रयास किया जा रहा है कि शीघ्रातिशीघ्र यह काय पूर्ण होकर प्रतिष्ठा कराई जाय । निर्माण कार्य मे योगदान की जा योजना प्रारम्भ की गई थी एव एक मुश्त जो योगदान प्राप्त हुआ उसमें इस वित्तीय वष मे कुल १,०६,७२३)६६ की राशि प्राप्त हुई एव निर्माण पर १,८६,०८६)३० का खर्चा हुआ है। इसके बाद जुलाई, ८४ तक २६,२०७)२५ और खच हा चुका हैं। १,०४,१०४)२७ की राशि प्रारम्भिक वर्ष म ही लग चुकी थी। इस प्रकार अब तक लगभग ३ १० लाख की राशि निर्माण कार्य पर लग चुकी ह । निर्माण काय मे जो विशेष एव मुश्त योगदान इस वित्तीयवष मे प्राप्त हुआ है उनमे पज्य आचार्य श्रीमद्विजय ह्रींकारसूरीश्वर जी म० सा० की सद्प्रेरणा से ३११३१), साचौर श्री सघ की ओर से ११११११)५०, ५५५५) श्री विमलनाथ स्वामी का मदिर (श्री बाबूलाल जी तरसेम कुमार जी की ओर से स्थापित मदिर) १५००) वाडीलाल साराभाई ट्रस्ट बम्बई, १०००) जैनश्वे० मूर्तिपूजक सघ, शिव, बम्बई, एव पूज्य मुनिराज श्री जिनप्रभविजयजी म० सा० की सद्प्रेरणा से २०००) भारजा मूर्तिपूजक सघ, ३०००) श्री सीमधर स्वामी जिन देरासर पिंडवाडा, १५००) श्री वधमान आनदजी जैन पेटी नाणा, ११०१) श्री पचपोरवाल आदिश्वर भगवान की पेटी शिवगज आदि विशेष उल्लेखनीय है ।

प्रथम चरण की योजना तीन लाख की बनाई गई थी लेकिन अब ऐसा प्रतीत होता है कि इसमे इसमें कही अधिक धनराशि खर्च होगी । श्री जैन

श्वे० तपागच्छ संघ जयपुर के देवद्रव्य का उपयोग तो इस हेतु किया ही जा रहा है, फिर भी जिन योगदानकर्त्ताओं ने राशि आश्वस्त की थी वह अब पूर्ण रूपेण प्राप्त होना अपेक्षित तो है ही, साथ ही जयपुर श्री संघ के प्रत्येक भाई बहिन एव समस्त मूर्तिपूर्वक सघों से साग्रह विनती है कि इस महान कार्य हेतु उदारतापूर्वक अधिक से अधिक सहयोग प्रदान करने की कृपा करें।

श्री ऋषभदेव स्वामी का मंदिर, बरखेड़ा

इस तीर्थ की व्यवस्था भी वर्ष भर सुचारु रूप से सम्पन्न होती रही है। इस तीर्थ का समस्त दायित्व सघाधीन है। इस वर्ष कुल प्राप्तियां यहाँ से १०४२९)२६ हुई जबकि व्यय ११४७१)७५ का हुआ है।

फाल्गुन शुक्ला ८ सम्वत् २०४०, रविवार, दि० ११ मार्च, १९८४ को यहाँ का वार्षिकोत्सव मनाया गया जिसमें समस्त कार्यक्रम पूर्ववत् सम्पन्न हुए। मेले पर कुल ८१३५)८० का खर्चा हुआ और चिट्ठे से ७९६७)रू० प्राप्त हुए।

११९३)३० के नये बर्तन और खरीदे गये है जिससे ग्रामवासी तो लाभान्वित होते ही हैं मेले के अवसर पर इनका उपयोग भी होता रहेगा।

श्री शान्ती नाथ स्वामी का जिनालय, चन्दलाई

इस जिनालय का जीर्णोद्धार करा कर पुनः प्रतिष्ठा का कार्य सम्वत् २०३९ में पूज्य आचार्य श्रीमद् विजय मनोहरसूरीश्वरजी म०सा० की निश्रा में सम्पन्न हो चुका था और उसी समय यह निश्चय किया गया था कि यहाँ पर प्रतिष्ठा दिवस के दिन पृथक से वार्षिकोत्सव मनाया जाय। तदनुसार मगसर वुदी ५, दि० १७ नवम्बर, १९८३ को यहाँ का वार्षिकोत्सव मनाया गया। प्रातःकालीन सामूहिक सेवा पूजा के पश्चात् पूजा पढाई गई एवं तत्पश्चात् साधर्मी वात्सल्य का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

यह अत्यन्त सौभाग्य का विषय था कि जीर्णोद्धार के पश्चात् पुनः प्रतिष्ठा का कार्य आचार्य भगवन्त की निश्रा मे सम्पन्न हुआ था और इसका प्रथम वार्षिकोत्सव भी आचार्य भगवन्त की निश्रा मे ही सम्पन्न हुआ। परमपूज्य आचार्य श्रीमद् विजय ह्रींकारसूरीश्वरजी म० सा० चातुर्मास पूर्ण कर यहाँ पर पधारे और आपने यहाँ पर ही अपनी अट्ठाई की तपस्या पूर्ण की। यहाँ पर आयोजित उनके प्रवचनों एवं सान्निध्य से ग्रामवासियों की इस जिनालय के प्रति लगाव में और वृद्धि हुई है। जीर्णोद्धार कार्य का अवलोकन कर आपने कार्य के प्रति संतोष व्यक्त किया।

श्री वर्धमान आयम्बिलशाला

श्री वर्धमान आयम्बिलशाला का कार्य वर्ष भर सुचारु रूप से सम्पन्न होता रहा है। इस सीगे में जहां १९४०२)८४ की आय हुई है वहां व्यय १९१९३)२६ का हुआ है स्थायी मिति खाते मे १६०६)रू० और प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार यह सीगा इस वर्ष भी टूट से मुक्त रहा। गत वर्ष विराजित आचार्य श्रीमद्विजय ह्रींकारसूरीश्वरजी म सा. की सद्प्रेरणा से आयम्बिल की अनेकों सामूहिक आराधनाओं के सम्पन्न होने से आयम्बिल के प्रति आराधकों की भावना एवं श्रद्धा में और वृद्धि हुई हैं।

यहां पर फोटो लगाने की जो योजना प्रारम्भ की गई थी उसके अन्तर्गत ११३९१)रू. की राशि जुलाई, ८४ तक और प्राप्त हुई है। इस प्रकार बोड निर्माण पर लगी हुई राशि में से लगभग

आधी से अधिक प्राप्त हो चुकी है। फिर भी जयपुर जैसे विशाल समाज के समकक्ष जितना सहयोग प्राप्त हुआ है उनमे और अधिक उत्साह अपेक्षित है। १११११) रू मात्रा के योगदान से बुजुर्गो, परिजनो अथवा स्वय के चित्र को लगाकर स्थायी यादगार को सुरक्षित रखने का सुन्दर अवसर तो है ही, साथ ही शेडनिर्माण से आराधको एव सघ को जो सुविधा प्राप्त हुई उसमे भागीदार बनने का सुअवसर भी है। फोटो नहीं लगवाना चाहें तथा २५१) से १११०) रू तक के योगदानकर्त्ताओ के नाम सूचना पट्ट पर अंकित किए जावेंगे।

आसोजी एव चैत्र मास की आलीजी की आराधनायें पूर्ववत् श्री चिमनभाई शाह, बम्बई वालो की ओर से सम्पन्न हुई।

साधारण खाता

सबसे अधिक व्यय साध्य इस सीगे के अन्तर्गत इस वर्ष कुल ५६,१६३)२८ की आय हुई एव ५१,६२०)१८ का व्यय हुआ है। इस प्रकार यह सीगा इस वर्ष भी टूट से मुक्त रहा है जो सतोष का विषय है। इस सीगे के अन्तगत परम्परागत जो व्यय होते हैं उनमे मुख्यत साधु-साध्वियो की वैय्यावच्छ, विहार की व्यवस्था, मणिभद्र का प्रकाशन, सावर्मी भक्ति, कर्मचारियो का वेतन आदि हैं। मणिभद्र उपकरण भडार से प्राप्त आठ हजार रुपया की भेंट का समायोजन भी इसी सीगे मे किया गया है।

स्व० श्री नेमीचन्दजी प्रेमचन्दजी प्रेमचन्दजी बोथर की स्मृति मे उनके परिवार की ओर से एक स्टील की आलमारी भेंट की गई है।

साधर्मी भक्ति

इस सीगे के अन्तगत पूर्ववत् कम आय और अधिक खर्च की स्थिति बनी रही है। इस वर्ष कुल २६७६)२७ पै० की आय एव ६६२२)१० का व्यय हुआ है। इसमे मासिक सहायता, आकस्मिक कार्य जैसे मरण पोषण, चिकित्सा एव बच्चो की शिक्षा म सहयोग आदि शामिल हैं। इस हेतु जितनी अपेक्षा रहती है उसके मुकाबले उतनी राशि प्राप्त नही होने से सार्धमियो को समुचित लाभ पहुचाने मे निरन्तर सकोच की स्थिति बनी रहती हैं। अत पुन निवेदन है कि इस सीगे मे उदारपूर्वक योगदान कर साधर्मी सेवा का अधिक से अधिक लाभ उठायें।

ज्ञान खाता

इस सीगे में कुल आय १०,६६४)८१ तथा व्यय ३१२०)३६ हुआ है। पुस्तकालय मे कुछ पुस्तकें और क्रय की गई हैं।

भण्डार

भण्डार मे स्थित मूल्यवान सामान की मरम्मत सफाई आदि कराई गई है। ७११०)रू० मे भगवान को पहनाने के लिए सोने का हार खरीदा गया है। श्री सुमतिनाथ स्वामी के मुकुट पर लगभग तीन तोला सोना एक सद्‌गृहस्थ द्वारा चढाया गया है। गोलख से भी लगभग २७ ग्राम सोना प्राप्त हुआ है। मणिभद्रजी के एक चोला लगभग एक किलो चादी का बनवा कर श्री ~~मगनचदजी~~ मालू मेहमवाल द्वारा भेंट किया गया है।

प्रशिक्षण

प्रशिक्षण के अन्तगत मुख्य रूप से धार्मिक पाठशाला एव उद्योगशाला है जिसकी व्यवस्था वर्ष भर सुचारु रूप से सम्पन्न होती रही हैं। व्यवस्था जारी है लेकिन अधिक से अधिक सख्या मे बालक धार्मिक पाठशाला मे उपस्थित होकर धार्मिक शिक्षण प्राप्त करें तथा महिलायें सिलाई बुनाई का प्रशिक्षण प्राप्त करें तभी इनकी सार्थकता एव अधिक उपयोगिता है।

श्री नाकोडा पार्श्वनाथ तीर्थ मेवानगर द्वारा प्रतिवर्ष ली जाने वाली धार्मिक परीक्षाओं मे

जयपुर से सम्मिलित होने वाले प्रशिक्षणार्थियों की परीक्षा इस वर्ष भी यहाँ पर सम्पन्न हुई है ।

पुस्तकालय, वाचनालय एवं ज्ञान भण्डार

यह व्यवस्था भी वर्ष भर सुचारु रूप से चलती रही है । जैन, अजैन, दैनिक, साप्ताहिक, मासिक पत्र पत्रिकाये एवं बालोपयोगी साहित्य मँगाया जाता रहा है और इनका अधिक से अधिक उपयोग किया जा रहा है ।

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल की गतिविधिया इसके अध्यक्ष श्री सुरेशकुमार मेहता एवं मंत्री श्री अशोक जैन के नेतृत्व में वर्ष भर गतिशील रही हैं । विगत वर्ष के चातुर्मास मे सम्पन्न हुए विभिन्न आयोजनो में तो इनका उत्साहवर्द्धक एवं उल्लेखनीय कार्य एव सहयोग तो रहा ही, साथ ही विभिन्न समारोहों, मेलों आदि मे भी इनकी गतिविधियाँ एवं कार्य कलाप प्रशंसनीय रहे हैं । मण्डल के सभी सदस्य इसके लिए बधाई के पात्र है ।

श्री 'मणिभद्र' स्मारिका

'इस संस्था के वार्षिक मुख पत्र' मणिभद्र के २५ वें अंक का प्रकाशन भी पूर्ववत् सुन्दर ढंग से सम्पन्न हुआ था और संघ के भूतपूर्व सदस्य फतेहचंदजी करनावट के कर कमलों से इसका विमोचन सम्पन्न हुआ था । २५ वे अंक के प्रकाशन में कुल खर्च ८९५४)९० का हुआ था जब कि विज्ञापनदाताओं से १०५१९)रू० की राशि प्राप्त हुई थी । वित्तीय वर्ष की समाप्ति के पश्चात् भी ८००)९० और प्राप्त हुए हैं । इस प्रकार लगभग ढाई हजार रुपयो की शुद्ध बचत इस अंक के अन्तर्गत हुई थी । २६ वें अंक प्रकाशन में भी पर्याप्त बचत सम्भावित है । पत्र प्रकाशन में सम्पादक मण्डल द्वारा किए गए अथक परिश्रम, लेखकों एवं विज्ञापनदाताओं के हार्दिक सहयोग के लिए महासमिति आभार व्यक्त करती है एवं आशा करती है कि सभी का अपूर्व सहयोग पूर्ववत् प्राप्त होता रहेगा ।

आर्थिक स्थिति

संस्था की आर्थिक स्थिति पूर्ववत् सुदृढ है जो संलग्न आय-व्यय विवरण से स्पष्ट है । जनता कालोनी मदिर के व्यय साध्य निर्माण कार्य के हाथ में होते हुए भी संघाधीन समस्त सीगों में आवश्यक्तानुसार सभी कार्य सम्पूर्ण कराये जाते रहे है । गत वर्ष की ३.०६ लाख की आय के मुकाबले इस वर्ष ३ २१ लाख की आय एवं ३.४० लाख के व्यय के मुकाबले इस वर्ष ३ २८ लाख का व्यय हुआ है । जो मात्र सात हजार की कुल टूट रही है उसका मुख्य कारण जनता कालोनी मंदिर निर्माण पर १.६ लाख की आय के मुकाबले १.८६ लाख का व्यय होना है । इस प्रकार ८० हजार रुपये विना फिक्स डिपोजिट में से निकाले संघ की दैनिक आय मे से समायोजित किए गए हैं । भण्डार की चल सम्पत्ति में भी वृद्धि हुई है जिनका उल्लेख भण्डार के सीगे में किया जा चुका है। आश्वस्त राशियों में से भी अभी काफी प्राप्त होना शेष है । अत: समस्त दानदाताओं से निवेदन है कि संघ की गतिविधियों के सुचारु रूप से संचालन हेतु एवं निर्माणाधीन मंदिर को शीघ्रातिशीघ्र पूरा कराने में सहायक बनने हेतु आश्वस्त राशि का यथा सम्भव जल्दी से भुगतान करने की कृपा कर सक तो उचित होगा ।

आडिटर

महासमिति संघ के आडिटर श्री राजेन्द्रकुमार जी चतर, सी. ए के प्रति आभार व्यक्त करना

अपना कर्तव्य समझती है जिन्होंने नि स्वार्थ भाव से इस उत्तरदायित्व का निर्वहन किया है। महासमिति अपने वर्तमान काल मे उनके द्वारा किए गए आडिट के कार्य एव इन्कम-टैक्स की विवरणिका प्रस्तुत करने आदि के लिए धन्यवाद प्रेषित करती है। इस वर्ष की आय-व्यय विवरणिका आय-कर विभाग मे प्रस्तुत की जा चुकी है। उनके द्वारा प्रदत्त आडिट रिपोर्ट एव आय-व्यय विवरण मूल रूप मे प्रकाशित किया जा रहा है।

कर्मचारी वर्ग

सघाधीन कार्यरत समस्त कर्मचारी वर्ग का कार्य वर्ष भर सतोषजनक रहा है और उन्हीं के सहयोग, परिश्रम एव सेवा भावना का परिणाम है कि सभी गतिविधिया सुचारु रूप से सम्पन्न होती रही हैं।

महासमिति भी उनकी सेवाओं एव साथ ही उनकी कठिनाइयो के प्रति सजग रही है और इस वर्ष पुन उनके वेतनो मे समुचित अभिवृद्धि की गई है तथा ईनाम, अग्रिम आदि देकर उनको आर्थिक लाभ पहुचाने का प्रयास किया गया है।

महासमिति एव आगामी चुनाव

वर्तमान मे कार्यरत महासमिति शीघ्र ही अपना कार्यकाल पूर्ण करने जा रही है। इस महासमिति की ओर से यह अतिम प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जा रहा है। महासमिति के इस लगभग ३० महीने के कायकाल में ३० बैठकें हुई है जिनमें सभी निर्णय सब सम्मति से किए गए हैं। कायकाल पूर्ण होने से पूर्व ही चुनाव करा दिए जावेंगे यह महासमिति आश्वस्त करती है।

इस कायकाल मे जो भी कार्य हुए हैं वे समाज के समक्ष हैं जिनका विशद् विवेचन करना स्व प्रशसा ही होगी अत इससे बचते हुए मात्र यही अकित करना पर्याप्त होगा कि यथा सम्भव जो भी सम्भव हो सकता था वह करने का प्रयास किया गया है। अब समाज के प्रत्येक भाई बहिन का यह महासमिति आह्वान करती है कि इस सघ एव सस्था के प्रति उनके हृदय मे जो स्नेह एव ममत्व है तथा अपनी आकाक्षाओ के अनुसार वे इसे और भी उन्नत एव प्रगतिशील बनाना चाहते हैं, इसकी सेवा करना चाहते हैं, वे कृपया आगे आवें और चुनाव मे भाग लेकर समाज का विश्वास प्राप्त कर सघ सेवा का गुरुतर उत्तरदायित्व ग्रहण करें।

महासमिति यह सब कुछ होने के उपरान्त भी जाने अनजाने मे हुई त्रुटिया के लिए सघ से अपनी क्षमा याचना प्रस्तुत करती है एव कार्य सम्पादन मे जो सघ का विश्वास एव सहयोग प्राप्त होता रहा है उसके लिए नामोल्लेख किए बिना सभी के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रदर्शित करती है।

धन्यवाद ज्ञापन

विगत वर्ष के कार्यकलाप के सफल सचालन मे प्राप्त सहयोग के लिए समस्त श्रीसघ के प्रति अपना हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करते हुए विशेष रूप से श्री गोपीचन्द्रजी चौरडिया द्वारा ध्वनि प्रसारण यत्रो की व्यवस्था, जैन नवयुवक मण्डल द्वारा श्री महावीर जन्मोत्सव के अवसर पर प्रस्तुत कार्यक्रम के लिए विशेष रूप से धन्यवाद प्रेषित करती है।

इन्हीं शब्दो के साथ मैं वर्ष सम्वत् २०४०-४१ का यह वार्षिक विवरण एव आय-व्यय का लेखा-जोखा कतिपय उल्लेखनीय घटनाओ के दिग्दर्शन सहित आपकी सेवा मे सादर प्रस्तुत करता हू।

जय वीरम्

आडिटर—रिपोर्ट

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ
घी वालों का रास्ता,
जयपुर

विषय—दिनांक 31-3-84 को समाप्त होने वाले वर्ष का अंकेक्षण प्रतिवेदन ।

(1) हमें वे सभी सूचनायें व स्पष्टीकरण प्राप्त हुए हैं, जिन्हें हमें अंकेक्षण के लिए जानकारी में आवश्यकता थी ।

(2) संस्था का चिट्ठा व आय-व्यय खाता जिनका उल्लेख हमने हमारी रिपोर्ट में किया है, लेखा पुस्तकों के अनुरूप हैं ।

(3) हमारी राय में, जैसा कि संस्था की पुस्तकों से प्रकट होता है, संस्था ने आवश्यक पुस्तकें रखी हैं ।

(4) हमारी राय में "प्राप्त सूचनाओं एवं स्पष्टीकरण के आधार पर" बनाया गया चिट्ठा व आय-व्यय का हिसाब सच्चा व उचित चित्र प्रस्तुत करता है ।

वास्ते—चत्तर एण्ड कम्पनी
जौहरी बाजार जयपुर ।
दि० 16-7-84

चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स

R. K. Chatter (C.A.)
Prop.
For Chatter and Company

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ

घी वालो का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

आय व्यय खाता

(दिनांक 1-4-83 से 31-3-84)

गत वर्ष की रकम	व्यय		चालू वर्ष की रकम	गत वर्ष की रकम	आय		चालू वर्ष की रकम
1,18,627-69	श्री मंदिर खाते नामे			1,09,692-70	श्री मंदिर खाते जमा		
	आवश्यक खर्च	35,107-43			भेंट खाता	67,121-32	
	विशेष खर्च	21,814-00	56,921-43		पूजा खाता	12,927-81	
					किराया खाता	720-00	
					ब्याज खाता (बैंक) से	11,671-90	
					श्री पदलाई मंदिर खाता	5 252-80	97,693-83
2,069-50	श्री मणिभद्र भंडार खाते नामे		2,579-00	9,453-52	श्री मणिभद्र भंडार खाते जमा		12,726-34
80,836-91	श्री साधारण खाते नामे			73,164-32	श्री साधारण खाते जमा		
	आवश्यक खर्च	28,041-33			भेंट खाता	31,977-76	
	विशेष खर्च	23,578-75	51,620-08		साधर्मिक भक्ति	2,970-42	
					वैयावच्च	52-00	
					मणिभद्र प्रभावना	10,519-00	
					उद्योग खाता	280-00	
					ब्याज बैंक से	5,736-23	
					आरती साधारण	492-07	
					किराया	4,165-80	56,193-28

11,594-35	श्री ज्ञान खाते नामे		
	आवश्यक खर्च	2,634-66	
	विशेष खर्च	485-70	3,120-36
19,093-27	श्री आयम्बिल खाते नामे		
	आवश्यक खर्च	19,053-26	
	विशेष खर्च	110-00	19,163-26
168-00	श्री जीवदया खाते नामे		168-00
——	श्री गुरुदेव खाते नामे		——
70-00	श्री शासन देवी खाते नामे		——
4,820-04	श्री जनता कॉलोनी खर्च खाते नामे		7 805-01
.04,104-27	श्री जनता कॉलोनी निर्माण खाते नामे		1,86,087-20
713-20	श्री आयम्बिल जीर्णोद्धार खाते नामे		1,307-75
——	श्री सात क्षेत्र खाते नामे		——
3,42,096-93	कुल योग		3,28,767-19

11,286-63	श्री ज्ञान खाते जमा		
	भेट खाता	8,961-66	
	ब्याज बैंक से	2,033-15	10,994-81
21,335-55	श्री आयम्बिल खाते जमा		
	भेट खाता	14,802-37	
	ब्याज बैंक से	1,884-75	
	किराया	2,715-72	19,402-84
945-63	श्री जीवदया खाते जमा		715-18
659-90	श्री गुरुदेव खाते जमा		1,101-08
839-98	श्री शासन देवी खाते जमा		960-06
131-00	श्री जनता कॉलोनी खाते जमा		5,270-85
66,131-00	श्री जनता कॉलोनी निर्माण खाते जमा		1,06,723-96
12,378-00	श्री आयम्बिल जीर्णोद्धार खाते जमा		9,139-00
17-85	श्री सात क्षेत्र खाते जमा		85-12
36,060-75	शुद्ध हानि सामान्य कोष में हस्तान्तरित		7,760-84
3,42,096-93	कुल योग		3,28,767-19

हीराचन्द चौधरी
अध्यक्ष

जावन्तराज राठौड़
प्रथ मन्त्री

आर. सी. शाह
हिसाब मन्त्री

वास्ते : चतर एण्ड कं०
चार्टर्ड एकाउण्टट
आर. के. चतर
मे. नं० 8544

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ

घी वालो का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

चिट्ठा

(दिनाक 31-3-84 की)

गत वप की रकम	दायित्व		चालू वर्ष की रकम
2,53,618-65	श्री सामान्य कोष		
	पिछला शेष	2,53,618-65	
	घटाया शुद्ध हानि आय व्यय खाते से हस्तान्तरित	7,760-84	2,45,857-81
69,412-00	स्थायि मिति आयम्बिल शाला		
	पिछला शेष	69,412-00	
	जोडी गई इस वप की रकम	1,606-00	71,018-00
2,265-00	श्री स्थायी मिति जोत		
	पिछला शेष		2,265-00
1,860-00	श्री सम्वतसरी पारणा		
	पिछला शेष		1,860-00
7 501-00	श्री फलवृद्धि पाश्वनाथ तीर्थ		——
12,473-13	श्री बरखेडा तीर्थ		——
3,844-30	श्री नवपद पारणा		
	पिछला शेष		3,844-30

गत वप की रकम	सम्पत्तियां			चालू वर्ष की रकम
26,748-45	श्री स्थायी सम्पत्ति जायदाद (दुकान)			26,748-45
	श्री विभिन्न देनदारिया			
2,474-50	श्री उगाई खाता (विगत सलग्न) (अ)		2,474-50	
12,593-20	श्री अग्रिम खाता (विगत सलग्न) (आ)		10,400-00	
727-00	श्री राजस्थान स्टेट इलेक्ट्रिक सिटी बोड		727-00	
499-00	श्री भण्डार खाता		499-00	
1,782-95	श्री श्राविका सघ खाता		——	
19,500-10	श्री बरखेडा मेला खाता			
	पिछला बाकी	7,026-97		
	जोडा-इस वर्ष का खर्च	11,471-75		
		18,498-72		
	घटाया-इस वर्ष की आवक	10,429-25	8 069-47	22,169-97

	खाता			,484-6			
	पिछला शेष	18,263-35		3,02,390-52	श्री बैंकों में व रोकड़ बाकी		
	जोड़ी इस वर्ष की प्राप्त	3,200-00			(क) स्थायी जमा खाता		
		21,463-35			1. स्टेट बैंक ग्राफ बीकानेर एण्ड जयपुर, जौहरी बाजार	1,59,814-00	
	घटाया-इस वर्ष का खर्च	1,572-25	19,891-10		2. बैंक ग्रॉफ बड़ौदा, जौहरी बाजार	50800-00	
,500-00	श्री ज्ञान स्थायी कोष पिछला शेष		2,500-00			2,10,614-00	
678-94	श्री रमेश चन्द भाटिया पिछला शेष		678-94		(ख) चालू खाता स्टेट बैंक ग्रॉफ बीकानेर एण्ड जयपुर, जौहरी बाजार	935-04	
1-00	श्री फरक खाता				(ग) बचत खाता		
					1. बैंक ग्रॉफ बड़ौदा	1,028-04	
					2. बैंक ग्रॉफ राजस्थान	2,001-23	
					3. स्टेट बैंक ग्रॉफ बीकानेर एण्ड जयपुर	68,277-87	
						71,307-14	
					(घ) श्री रोकड़ हस्तान्तरित	16,140-55	
							2,98,996-73
74,200-32	कुल योग		3,47,915-15	3,74,200-32	कुल योग		3,47,915-15

हीराचन्द चौधरी
प्रधान

आनन्दराज राठौड़
अर्थ मन्त्री

आ. सी. शाह
हिसाव निरीक्षक

वास्ते : चतर एण्ड कं०
चार्टर्ड एकाउण्टेंट
आर. के. चतर
मे. नं. 8544

श्री जैन श्वे० तपागच्छ संघ, जयपुर की महासमिति
(१६८२–८४)

क्र स	नाम, पद एव पता	निवास ☎	कार्यालय
१	श्री हीराचन्द चौधरी, अध्यक्ष, १३, जगनपथ, सी स्कीम	73611	61430
२	श्री कपिलभाई के शाह उपाध्यक्ष, पानो का दरीवा	45033	
३	श्री मोतीलाल भडकतिया, सघ मत्री,	40605	61321
	२३३५, एम एस बी का रास्ता		256
४.	श्री जावन्तराज राठौड, अर्थ मत्री, आचार्यों का मोहल्ला		
५	श्री दानसिंह कर्णावट, भडार मत्री	63063	45695
	A-3 विजय पथ, आदर्श नगर	72552	
६	श्री रणजीतसिंह भडारी, उपाश्रय मत्री, आत्मानन्द सभा भवन		
	श्री शिखरचन्द पालावत, मदिर मत्री, डिग्गी हाऊस,	42700	73285
	होस्पीटल रोड	61190	72890
८	'श्री सुभापचन्द छजलानी, आयम्बिलशाला मत्री,		
	५७०, हल्दियो का रास्ता	42997	
९.	श्री हरिशचन्द्र मेहता, शिक्षा मन्त्री, मेहता हाऊस, सी स्कीम	63080 &	77732
१०	श्री आर सी शाह, हिसाब मन्त्री, शाह एण्ड कम्पनी, J B	47245	45424
११	श्री उमरावमल पालेचा, सयोजक, ३८८४, MSB का रास्ता	44503	40789
१२	श्री शान्तिकुमार सिंघी, सयोजक, १७२२, जडियो का रास्ता, J B	49414	48214PP
१३	श्री बलवन्तकुमार छजलानी, सयोजक, ३७४३ KGB का रास्ता	43211	42214
१४	श्री जतनचन्द टड्डा, सयोजक, B 10 गोविन्द मार्ग, आदर्शनगर	40181	40448
१५	श्री चितामणि टडडा, सदस्य, १८८०, हल्दियो का रास्ता	45119	
१६	श्री जसवन्तमल सांड, ,, २४४६, घी वालो का रास्ता	40150	64621
१७	श्री तरसेमकुमार जैन, ,, २२२, सुमित्रा भवन, आदश नगर	44964	76899
१८	श्री देवेन्द्रकुमार मेहता, ,, १६१५ सोतलो वालो का रास्ता		68523
१९	श्री नरेन्द्रकुमार कोचर, ,, ४३५० नथमलजी का चौक	44750	
२०	डॉ० भागचन्द छाजेड, ,, पाच भाईयो की कोठी, आदर्श नगर	68400	
२१	श्री मोतीलाल कटारिया, ,, मनोहर बिल्डिग, M I Road		74919
२२	श्री राकेश कुमार मोहनतो, ,, 4459, KGB का रास्ता	41038	
२३	श्री राजमल सिंघी, ,, B 61, सेठी कॉलोनी	45005	64327
२४	श्री विमलकात देसाई, ,, हल्दियो का रास्ता	41080	
२५	श्री सुभाषचन्द छाजेड, ,, छाजेड हाऊस, घो वालो का रास्ता		

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

महासमिति द्वारा नियुक्त विभिन्न उप समितियों की नामावली

श्री ऋषभदेव स्वामी का मन्दिर, बरखेड़ा

१. श्री उमरावमल पालेचा — संयोजक
२ ,, किस्तूरमल शाह — सदस्य
३. ,, कपिलभाई शाह — ,,
४. ,, हीराचन्द वैद — ,,
५. ,, सरदारमल लूनावत — ,,
६. ,, त्रिलोकचन्द कोचर — ,,
७. श्री चिन्तामणि ढड्ढा — ,,
८. ,, दानसिंह कर्णावट — ,,
९. ,, शिखरचन्द कोचर — ,,
१०. ,, शान्तिचन्द डागा — ,,
११. ,, ज्ञानचन्द टुंकलियां, सदस्य एवं स्थानीय व्यवस्थापक

श्री शान्तिनाथ स्वामी का मन्दिर, चन्दलाई

१ श्री बलवन्तसिंह छजलानी — संयोजक
२. ,, कपिल भाई के शाह — सदस्य
३. ,, रणजीतसिंह भण्डारी — ,,
४. ,, ज्ञानचन्द भण्डारी — ,,
५. ,, शान्तिकुमार सिंघी — ,,
६. ,, राकेश कुमार मोहनोत — ,,
७. ,, विमलकान्त देसाई — ,,

श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी का मन्दिर, जनता कालोनी, जयपुर

१. श्री शान्तिकुमार सिंघी — संयोजक
२. ,, डा० भागचन्द छाजेड़ — सदस्य
३. ,, किस्तूरमल शाह — ,,
४. ,, हीराचन्द वैद — ,,
५. ,, भास्कर भाई चौधरी — ,,
६. ,, पीनूलाल मेहता — ,,
७. ,, तिलकचन्द पालावत — ,,
८. ,, श्रीचन्द डागा — ,,
९. ,, गणपतसिंह कर्णावट — ,,
१०. ,, चिन्तामणी ढड्ढा — ,,
११. ,, सरदारमल लूनावत — ,,
१२. श्री राकेश कुमार मोहनोत — ,,
१३. ,, बलवन्तसिंह छजलानी — ,,
१४. ,, जसवन्तमल सांड — ,,
१५. ,, राजमल सिंघी — ,,
१६. ,, भागचन्द छाजेड़ — ,,
१७. ,, तरसेमकुमार — ,,
१८. ,, नरेन्द्रकुमार — ,,
१९. ,, गिरीशकुमार शाह — ,,
२०. ,, भगवतसिंह कोचर — ,,
२१. ,, ज्ञानचन्द भण्डारी — ,,

श्री वर्धमान आयम्बिलशाला की स्थायी मितियां

१-४-८३- से ३१-३-८४ तक

स्व० श्री ज्ञानचन्दजी लूनावत	५०१-००
श्रीमती निशी जैन	५०१-००
स्व० श्री मनसुखभाई लीलाधर मेहता, राजकोट	१५१-००
श्री श्रीचन्द्रप्रकाशजी मोहनलालजी दोशी	१५१-००
स्व० श्री मदनसिंहजी सुराना, आगरा	१५१-००
श्री पुष्पमलजी लोढा	१५१-००

आयम्बिलशाला नव शैड निर्माण मे सहयोगकर्ता

(गत वर्ष की सूची से आगे)

क्र स	चित्र	भेंटकर्ता
३५	स्व० श्रीमती उमरावकवर मेहता	—श्री नारायणदासजी मेहता एव सुकुमारसिह राजकुमार
३६	(चित्र प्राप्त होना है)	—श्रीनेमोचन्दजी कन्हैयालालजी, केकडी
३७	स्व० श्री रूपचन्दजी भगवानदासजी शाह	—राजेश मोटर्स
३८	स्व० श्री चांदमलजी सिपानी	—श्रीमती संतोषकुमारी सिपानी, अजमेर
३९	श्री आर यु ओसवाल	—मिल वौर्न
४०	स्व० श्रीमती शृगारदेवी मोहनोत	—श्री प्रकाश नारायणजी, पुत्र-नरेश, दिनेश, राकेश मोहनोत
४१	श्री सुरेन्द्र कुमार जी सकलेचा	—श्री पन्नालालजी महेन्द्र कुमारजी धनाकुमारी सकलेचा
४२	स्व० श्रीमती उमरावकवर	—श्री अमृतमलजी भाडावत, पुत्र-श्री पारस, सौभाग, राजेन्द्र, सज्जन भाडावत

साधर्मी उत्कर्ष के प्रेरक

युगवीर आचार्य विजय वल्लभसुरीश्वरजी महाराज साहब

हार्दिक अभिनन्दन

परमार क्षत्रियोद्धारक वर्तमान गच्छाधिपति
आचार्य विजय इन्द्रदिन्न सुरीश्वरजी महाराज